आदर्श महिला पं० चन्दाबाई

लेखक :
पं० परमानन्द जैन शास्त्री
वीर-सेवा-मन्दिर सरसावा

प्रकाशिका
महिला-भूषण पं० ब्रजबालादेवी
जैन बालाविश्राम धर्मकुञ्ज, धनुपुरा
आरा।

प्रथम संस्करण] वीर नि० [illegible] [[illegible])

मुद्रकः—
बाबू देवेन्द्रकिशोर जैन,
श्रीसरस्वती प्रिन्टिङ्ग वर्क्स लि०, आरा ।

प्रस्तावना

प्रभातके सूर्योदयसे तमोभाव दूर होकर जिस प्रकार चारों दिशाएँ आलोकित हो जाती हैं उसी प्रकार महापुरुषों के जन्म ग्रहण से विश्वकी मुखछवि जागरणके प्रदीपमें समुद्भासित हो उठती है।

इस असार संसार में जिन मनुष्यों को परोपकार के साथ २ आत्मकल्याण करने का सुअवसर प्राप्त होता है उन्हीं का जन्म सार्थक होता है। सेठ घनश्यामदास जी बिड़ला ने अपनी "बापू" नामक पुस्तक में ठीक ही लिखा है कि "महापुरुषों की जीवनी दीप-शिखा की भाँति स्थाई रूप से मार्ग प्रदर्शक का काम देती है"।

जीवन-चरित्र अध्ययन में अनेकोंका सविशेष अनुराग देखने में आता है। विशेषकर असामान्य व्यक्तियोंका जीवन-वृत्तान्त परिज्ञान करनेको अनेक उत्सुक रहते हैं। मेरी इच्छा वर्षोंसे यही थी कि पूजनीया पंडिता चंदाबाईजीका तथा पूज्य पं० जुगलकिशोरजी मुख्तारका जीवन-वृत्तान्त संग्रह कर इन दोनों आदर्श जीवनियों को समाजके समक्ष उपस्थित करूँ। इसके लिये वर्षोंसे प्रयत्न कर रहा हूँ, पर दोनों ही महात्मा निराश करते आ रहे हैं। आपके निकट में रहनेवालों से भी चेष्टा की पर पूर्ण-रूपसे सफलता तब भी न मिली।

यह पुस्तक जिन पूत-चरित्र साध्वी का जीवन चरित्र है, वे जैनाकाशकी अन्यतम श्रेष्ठ ज्योतिष्क (नक्षत्र) हैं महिलारत्न, ब्रह्मचारिणी, पंडिता चन्दाबाईजी जैन साहित्यसूरि आप जैसी सती साध्वीकी जीवनीकी प्रस्तावना लिखनेका भार मेरे ऊपर अर्पित

हुआ इससे मैं अपनेको धन्य मानता हूँ। जीवनीकी अत्यल्प सामग्री प्राप्त होते ही इतने वर्षोंकी अभिलाषाको पूर्ण करनेकी उत्सुकता इतनी प्रबल हो उठी, कि मैंने इस जीवनीको अविलंब प्रकाशमें लानेके लिये पं० परमानन्दजीसे अनुरोध किया और उन्होंने जहां तक हो सका जल्दीमें लिख भी दिया यहां तक कि उसके संशोधनका भी अवसर आपको नहीं दिया गया। यदि पंडितजीको कुछ अधिक समय दिया जाता तो अवश्य ही यह जीवनी और भी सुन्दर लिखी जाती।

जिनका जीवन नारी सद्गुणोंकी एक महान् शिक्षा (कहानी) है और महिलाधिकारोंकी रक्षाका एक महान् प्रयत्न स्वरूप है उन पूजनीया ब्रह्मचारिणी श्रीचन्दाबाईजीसे जैन-समाज भली भांति परिचित है। आपने यह बताया है कि किस प्रकार त्याग और सेवा द्वारा सुखानुभव करना चाहिये।

पाठक इस जीवन चरित्रसे यह अनुभव करेंगे कि सांसारिक भोगोपभोगकी सामग्रीका योग उपलब्ध होते हुये महात्मा पुरुष उनका परित्यागकर किस प्रकार स्वानुग्रहमें तत्पर रहते हैं। वैधव्य-की दुःखमय दशाका जिस सुन्दर रीतिसे आपने स्व और पर कल्याणके निमित्त उपयोग किया है वह अन्य महिलाओंके लिये आदरणीय है। पुत्र गोद न लेकर अपनी सम्पत्तिको विद्याप्रचार, धर्मायतनोंकी रक्षा और दीन दुःखियोंकी सहायता आदिमें व्यय कर स्त्री-समाजके सम्मुख एक महान् आदर्श उपस्थित किया है। आपने जीवनको आदर्श बनाते हुये निस्वार्थ-रूपसे देश, धर्म और समाजकी अनेक सेवाएँ की हैं।

पत्तोंकी आड़में छिपकर खिलने पर भी फूलकी सुगंध जिस प्रकार उसे पकड़ा देती है उसी प्रकार बाईजीकी गुणगरिमा उन्हें प्रकाशमें लाकर ही रही, आपके न चाहने पर भी आज यह चरित्र समाजके समक्ष उपस्थित हो रहा है।

बहनजीके सम्पर्कमें आकर तथा आश्रमकी शिक्षा-दीक्षा तथा आश्रमसे बहिर्गत देवियोंको देखकर जो कुछ भी अनुभव मुझे प्राप्त हुआ है उसीके अनुसार मैं पाठकोंके समक्ष कुछ निवेदन करूँगा।

जनक जननीकी और विशेषतः जननीकी गुणावली सन्तानमें विद्यमान रहती है इसके अनेक उदाहरण हैं—भगवान् महावीर प्रभृति महापुरुषगण इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। पंडिताजी उत्तरकालमें एक असाधारण सुनीति परायणा हुई उसका प्रधान कारण है स्वीय जनक जननीकी शिक्षा, अभिरुचि और प्रबल धर्मप्रवृत्ति। आपके माता-पिता दोनों ही स्वभाव-सिद्ध परोपकारिता, न्यायपरता और सौजन्यतादि विविध गुणोंसे ग्रामस्थ (वृन्दावन) प्रतिवासी-मंडलीके सम्मानास्पद और श्रद्धाभाजन बन जीवन यापन कर गये हैं। उनके साथ एकबार भी जिनका साक्षात् हुआ है वे उनके गुणानुवाद किये बिना रह नहीं सकते।

बाईजीके भविष्यत् गौरवके अंकुर उनके शैशव जीवन के समयसे प्रस्फुटित होने लगे थे। आपने बाल्यकालसे ही खेलकूद, गप-सपका परित्याग कर केवल विद्या, शिक्षा एवं ज्ञान उपार्जनमें ही मन दिया था सुतरां बढ़ती हुई उम्रके साथ २ उनका स्वभाव ठीक उसी प्रकार बन गया। ठीक भी है, कारण—बाल्यकालसे

मनुष्य जिस प्रकारके भावसे चलता है बड़ा होने पर वह स्वभाव बन जाता है। आपके पढ़नेकी स्पृहा, परिश्रम करनेकी शक्ति, ऐकान्तिकता, आग्रह, चेष्टा, यत्न और अध्यवसाय प्रशंसनीय थे। प्रकृतधर्मकी सत्यता और तत्त्व आविष्कार करनेमें इतना आकुल आग्रह था कि आप आहार-विहार, आराम-विराम भी भूल गईं। दिन रात्रि स्वाध्यायमें मग्न रहा करती थीं।

आप जब स्वाध्याय करने बैठती हैं तब प्रत्येक श्लोकका मर्म समझकर भावको ग्रहण कर तथा भाषाके गुणदोष और सौंदर्यका निर्णय करती हुई विषयका मनन करती हैं।

आप प्रारंभसे ही भद्र परिणामी और संयमी रही हैं प्रचुर सांसारिक विभूति, बहुपरिवार आदिके होने पर भी आप मोह-ममतासे दूर हैं। संसारसे उदासीन रूप आपके भाव भी उत्तरोत्तर वृद्धिगत होते जाते हैं। समाज-सेवाकी लगन आपको छोटी अवस्था से ही है।

जैनधर्मके सिद्धांतोंका आपने केवल अध्ययन ही नहीं किया है, किंतु उन्हें अपने जीवनमें भी उतारनेका प्रयत्न किया है।

आप बाल्यावस्थामें ही विधवा हो गई थीं। उस समय स्त्रियोंको विद्योपार्जनमें बहुत कठिनाइयाँ होती थीं। किंतु आपकी उत्कट ज्ञान स्पृहाने विघ्न-बाधाओं और क्लेशको ग्राह्य नहीं किया। ज्ञानार्जनमें आपका जितना गम्भीर अनुराग और अदम्य अध्यवसाय था वैसा दृष्टांत विरला ही है। आपने अनेक कठिनाइयोंसे, अक्लांत परिश्रमसे शास्त्राभ्यास किया है।

शिक्षाके संबंधमें यदि कुछ कहा जाय तो आपकी ज्ञानज्योतिसे

अनेक पृष्ठ उज्ज्वल हो सकते हैं। बड़े २ पंडितों के साथ जब आप जटिल दार्शनिक तत्त्वोंके संबंधमें पारदर्शिकताके साथ तर्क करती हैं तब उसे श्रवण कर विस्मयान्वित होना पड़ता है। आप बड़ी नम्रता, विनय और सावधानी पूर्वक सुयुक्ति द्वारा शास्त्रीय विषयोंको श्रोताओंके समक्ष उपस्थित करती हैं। एकबार (मसूरी पहाड़ पर) भाई चक्रेश्वरकुमारजी आपके साथ गोम्मटसारका स्वाध्याय कर रहे थे मैं भी वहां बैठा था। एक गाथाका अर्थ उनसे नहीं बैठ रहा था, तब बाईजीने बड़ी सरलता पूर्वक यह कहते हुये उस गाथा का अर्थ बता दिया "क्यों जी, इसका अर्थ यह हो सकता है क्या" ? इन वाक्योंमें पाठक पायेंगे, सरलता और निर-भिमानता। आपकी जगह कोई अन्य विद्वान् होता तो यह कहता अजी इसका अर्थ यह है।

जब आप भगवद्भक्ति पूजा करती हैं तब आपके मुखसे प्रत्येक शब्द सुस्पष्ट और माधुर्यको लिये हुये प्रवाहित होता है और श्रोताओंका मन उस ओर आकर्षित हो उठता है और वे कुछ कालके लिये अपना मन (उपयोग) उसी ओर लगानेको बाध्य हो जाते हैं।

आपके त्याग, नियम, व्रत और धार्मिक क्रियाएँ सब सप्तम प्रतिमाके हैं। आप सदैव त्रिकाल सामायिक, नित्यप्रति भगव-त्पूजन, तथा अष्टमी चतुर्दशीको उपवास व सदा रस परित्याग करती रहती हैं। अस्वस्थावस्थामें भी आप धर्मके कार्योंमें सावधानी रखती हैं और व्रत नियमादिमें किसी कारण वश दोष लग जाने पर कठिन से कठिन प्रायश्चित लेती हैं।

जब आप कलकत्तामें X. Ray. बिजली चिकित्सा करवाने आईं तब मैंने देखा था कि शारीरिक शैथिल्य होने पर भी नित्य नैमित्तिक धार्मिक कार्योंको ही सुचारु रूपसे नहीं चलाती थीं, पर उपदेशादि कार्य भी करती थीं मना करने पर कहती कि कलकत्ता भारतवर्षका प्रधान नगर है तथा यहां जैन महिलाओंका समुदाय बहुत बड़ा है यह सुअवसर प्राप्त हुआ है क्यों नहीं धर्म प्रचार किया जाय।

जीवन सादगी और सरलता आपकी प्रशंसनीय ही नहीं किन्तु अनुकरणीय है। आपके पास कितना परिग्रह है इसका अनुमान इसीसे हो जाता है कि आप वस्त्रादि सामान रखनेके लिये अलमारी, बक्स वगैरह कुछ नहीं रखती हैं; रखती हैं मात्र एक थैली, जिसमें कुल पहिनने, ओढ़ने, बिछानेके वस्त्र रहते हैं जिनकी कुल संख्या २० से अधिक नहीं है। सोनेके लिये आप गद्दा तक नहीं रखती हैं।

आप केवल व्याख्यात्री ही नहीं, पर सुलेखिका भी हैं। आपने अनेक लेखोंके अतिरिक्त कई पुस्तकें भी लिखी हैं जिनमें कइयोंकी तो कई आवृत्तियां (संस्करण) प्रगट हो चुकी हैं।

यह मेरा अनुभव है कि जिस घरमें विधवा बहनोंको घृणा या हीन दृष्टिसे देखा जाता है, वे बहनें अच्छी होने पर भी पतित होनेको बाध्य हो जाती हैं और जहां उनके साथ पवित्र और उच्च दृष्टिसे व्यवहार किया जाता है वहां वे सती साध्वी बन जाती हैं। पंडिताजीको जितना आदर नैहरमें मिला उतना ही ससुरालमें भी; आपके यहां मैंने स्वयं देखा है कि आपकी जिठानीको सब

परिजन "बहू" कहते हैं जब कि आपको "बहूजी"। एक साधारणसी बात है कि आश्रमसे जाने आनेके लिये आपको जब मोटरकी आवश्यकता होती है तो लाख आवश्यक काम रहने पर भी पहिले आपके लिये मोटर छोड़ दी जाती है।

आपके मुखपर सदा एक अपूर्व हर्ष, महानता तथा तेज रहता है। एकबार मैं भाई निर्मलकुमारजीके साथ मसूरीमें ठहरा हुआ था। वहां बाईजी भी थीं। मुझे वहां ज्वर हो गया। एक दिन कलकत्ताके प्रख्यात कविराज (वैद्य) श्री ज्योतिर्मयसेनके सुपुत्र हारान बाबू (आप भी बड़े निपुण वैद्य हैं) मुझे देखने आये। वैद्यजी रोगका निदान कर रहे थे इतनेमें बाईजी वहां आगईं और कमरेके बाहर खड़ी हो गईं, कारण आप स्नानादिसे निवृत्त हो पूजन करने जा रही थी इससे बाहर ही रहीं और मुझसे पूछा कि वैद्यजीने क्या निदान किया। प्रत्युत्तर पाकर आप पूजन करने चलीं गईं। तब वैद्यजी मुझसे कहने लगे कि आपसे एक प्रश्न कर रहा हूँ इन देवीजीके संबंधमें। इनको देखते ही मेरे मनमें आ रहा है कि मैं इनके पदरज को लूं। जब मैंने आपका परिचय दिया तब वे इतने प्रभावित हो गये कि वहां प्रायः एक घण्टे तक इसलिये बैठे रहे कि बाईजी जब पूजा समाप्त कर चुकेगीं तब उनके चरण स्पर्श कर ही जाऊँगा। जब मैं कलकत्ता वापिस आया तब बड़े कविराजजीने मुझसे कहा कि बाईजी यहां पधारें तब मुझे भी दर्शन कराइयेगा।

इसी प्रकारकी एक घटना मेरे समक्ष और हुई है। एकबार बाईजी पेटके ट्यूमरकी आशंकाकी निवृत्तिके लिये विशेषज्ञोंसे

परामर्श करनेके लिये कलकत्ते आई हुई थीं। यहां स्त्री रोग चिकित्साके विशेषज्ञ और प्रख्यात डाक्टर Lt. Col. P. fleming Gow. D. S O; F. R C. S. से परामर्श करने बा० निर्मल-कुमारजी, बा० चक्रेश्वरकुमारजी तथा मैं बाईजीके साथ गये। डाक्टर साहब अपना अभिमत प्रगट करते हुये कहने लगे कि ऐसा मालूम पड़ता है कि बाईजी बड़ी सती, साध्वी और एक महान् आत्मा हैं। पाठक विचार करें कि अंग्रेज डाक्टर जिन्हें बाईजीका किंचित् भी परिचय नहीं था, मात्र एकबारके दर्शनसे क्या धारणा कर लेता है। यह सब वास्तवमें बाईजीके मुखमण्डल पर ब्रह्मचर्य तथा तपस्याके प्रस्फुटित तेजका ही प्रभाव है।

बाईजीको विषय सम्पत्ति प्रचुर प्राप्त थी पर आपका जन्म विषय-सम्पत्ति भोग करनेके लिये नहीं हुआ था जिस महान् व्रतको लेकर जिस साधनाके लिये आपका जन्म हुआ था—उसमें विषय, सम्पद्, भोग-विलासके प्रति आपकी लालसा वा इच्छा किस प्रकार हो सकती थी।

आपका अभिमत है कि शिशुओंके पालन पोषणमें मनुष्यको उनके भविष्य का ध्यान रखते हुये उनका वातावरण, संस्कार, संगति इस प्रकारकी बना देवें कि वे उन्नत बन सकें।

महात्मा गांधीने नारीको केवल अर्द्धांगिनी ही नहीं माना है पर उसे मनुष्यकी जननी, विधाता और स्रष्टा तथा नीरव नेता भी। उनका मत है कि वह गृहस्थकी दासी नहीं किंतु रानी है। वास्तवमें नारी आत्मोत्सर्गकी जीती-जागती मूर्त्ति है।

बाईजी का कहना है कि स्त्रियों पर परिजनों द्वारा अमानुषिक

अत्याचार होते हैं और बहनें मूर्खतावश अपनेको अबला समझती हुई चुपचाप सहन करती रहती हैं। उसका कारण यह है कि स्त्री, अपनेको पतिके आधीन इतना आधिक स्वीकार कर लेती हैं कि उनके अत्याचारोंका विरोध करना भी पाप मानती हैं। ये अत्याचार तभी दूर हो सकते हैं जब स्त्रियोंमें शिक्षाका प्रचार हो और वे अपने अधिकार और कर्त्तव्यको समझें तथा लोकमतको ऐसे अत्याचारोंके विरुद्ध आकर्षित करनेमें सक्षम हों। नारी जातिका उद्धार दो ही बातोंसे होगा एक चरित्र गठन और द्वितीय विद्योपार्जन।

आपने हिन्दू विधवा बहिनोंकी परिस्थिति, उनके दुःख, उनकी विविध आवश्यकताओं और समस्याओं पर पूर्ण विचार ही नहीं किया है, किन्तु अनुभव भी किया है और फिर उनको सत्यं शिवं सुन्दरंका पाठ भी पढ़ाया है। और फलस्वरूप आज ऐसी अनेक विधवा बहनें समाजमें दिखाई देती हैं जिनका जीवन सुखमय और पवित्र ही नहीं पर समाज सेवामें व्यतीत हो रहा है। बाईजी का अभिमत है कि विधवा बहनोंके लिये आवश्यक है कि वे आत्म निर्भर बनकर अपने गाढ़े पसीनेसे न्याययुक्त जीविका निर्वाहका प्रयत्न करें। जैन बाला-विश्रामसे शिक्षा और दीक्षा प्राप्त कर जो बहनें निकलती हैं उनमें ये गुण सहज ही आ जाते हैं।

संसारसे उदासीनरूप परिणामोंके कारण आपका यह विचार हुआ कि जहां किसी प्रकार आत्म कल्याणके साथ २ पर हित भी हो सके और खास कर पीड़ित और दलित स्त्री जातिका और

विशेषकर विधवा बहनोंका उद्धार हो सके ऐसी कोई संस्था स्थापित की जाय। समाजको आवश्यकता है राम जैसे पति और सीता जैसी पत्नी की; जहां परस्परमें प्रेम, सहानुभूति, सहिष्णुता, सहयोगिता और कर्त्तव्याकर्त्तव्यका विचार हो। ऐसी उच्च भावनाओंको सफल बनानेके लिये आपने आरामें श्रीजैनबाला-विश्रामकी स्थापना की।

आरा नगरके बाहर आपने इस संस्था को स्थापित किया है जहां भारतके प्रायः सभी प्रान्तोंकी बहनें आश्रय पाती हैं। यहांकी स्वतंत्रता और सरलताका वातावरण मानसिक और शारीरिक Discipline के लिये उत्साहदायक factor है। आश्रमकी व्यवस्था, परिचालतता, सफाई वगैरह देखनेसे वहां कई प्रकारकी विशेषताएँ मालूम पड़ती हैं। आश्रमकी बालिकाओंके चरित्र गठन पर विशेष ध्यान आप देती हैं तथा जो छात्राएँ आपके निकट कुछ दिन रह आती हैं उनमें कई विशेषताएँ आ जाती हैं; जैसे स्वच्छता से रहना, दैनिक धार्मिक क्रियायें करना, बोलने चालनेमें सतर्क रहना, विनय करना, स्वावलम्बी होना आदि। यहाँसे निकली हुई छात्राएँ परमुखापेक्षित् नहीं रह सकती हैं और वे स्वयं अपने पैरों पर खड़ा होना सीख लेती हैं, स्वावलंबी बन जाती हैं तथा अपने जीवन निर्वाह योग्य स्वयं प्राप्त कर लेती हैं। आश्रम वासिनी बहनोंके चरित्रको किस प्रकार आप उन्नत बना देती हैं यह सभी को मालूम है।

इस आश्रमकी बहनोंमें एक विशेषता यह उत्पन्न कर दी जाती है कि वे स्वच्छता तथा सादगीसे रहना सीख जाती हैं। सादगी-

मय जीवन मनुष्यको लिप्सासे बचाता है। बाईजी सदा यह उपदेश देती है कि शरीरको सुसज्जित करनेकी अपेक्षा अपनी आत्माको सुसज्जित बनानेका प्रयत्न करो, बहनोंको उचित है कि वे यह न समझें कि स्त्रियाँ मनुष्यकी लिप्सा तृप्तिकी वस्तु हैं।

वर्षों बाईजीने यह मनन किया है कि नारि-जातिका अभ्युत्थान किस प्रकार हो सकता है। इसके लिये उन समस्त अधःपतन के कारणों पर आपने विचार किया है। भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें जाकर वहांकी स्त्री-समाजकी परिस्थितिका अध्ययन किया है। बड़े २ तपस्वी आचार्योंके ग्रंथोंसे उनके अभिमतोंका मनन किया है और तब इसी निष्कर्ष पर पहुंची हैं कि—यथार्थमें भारतीय नारियोंके लिये जो आदर्श ब्राह्मी, सीता, द्रौपदी, अंजना आदि देवियाँ उपस्थित कर गई हैं उसी आदर्शको अपनानेसे ही उनका पुनरुद्धार हो सकता है। अस्तु बहनोंको सच्चरित्र, दृढ़ और आत्म संयमी बनना पड़ेगा।

एकबार बहनजीने मुझसे कहा था कि भगवान् महावीरने चार संघ स्थापित किये थे—श्रावक, श्राविका, मुनि और अर्जिका भगवान् महावीरने स्त्री-जातिके उद्धारके लिये सारा भार पुरुषों पर ही नहीं छोड़ दिया था किन्तु उसके लिये गृहस्थ तथा त्यागी स्त्री-समाज के लिये श्राविका और अर्जिका ऐसे दो संघ स्थापित किये थे। जब तक स्त्रियां अपने पैरों पर न खड़ी होंगी उनका उद्धार होना कठिन ही नहीं असंभव है। जब स्त्री समाजने अपनी सारी समस्याएँ पुरुषों पर छोड़ दी तभी तो उनका अधःपतन हुआ और वे मात्र पुरुषोंकी दासी तथा लिप्सा तृप्तिकी सामग्री रह

गई। जब वे पुरुषोंकी अर्द्धांगिनी कहलाती हैं तब क्यों उनके साधारण अधिकार भी पुरुषसे कम हैं। भारतीय इतिहासके पृष्ठ वीरांगनाओं, विदुषियों, शिक्षिताओं, कर्म वीराओंकी अपूर्व कथाओंसे परिपूर्ण उपलब्ध हैं तब क्यों नहीं आजकी स्त्री-समाज उस सुवर्णमय अतीतको पुनः पल्लवित करती है ?

भगवान् महावीरकी संघ व्यवस्थाका इतना सुन्दर प्रभाव पड़ा कि तत्कालीन पतितोन्मुखी स्त्री-समाजमें जागृति उत्पन्न हो गई और वे सम्मानकी दृष्टिसे देखी जाने लगीं। भगवान् महावीरके परवर्तीकालके रचित साहित्यावलोकनसे यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि स्त्रियोंका स्थान उतना ही महान् (उच्च) बन गया था जितना कि पुरुषोंका। इसलिये इतिहाससे यह पाठ पढ़ना चाहिये कि स्त्री-समाजका अभ्युत्थान तभी होगा जब हम स्वावलम्बी, शिक्षाप्राप्त, सती, साध्वी बहनोंको उत्पन्न कर सकेंगे। पहिले स्त्री-समाजकी जड़ता विदूर करनी पड़ेगी। आपका कहना है कि बहनें इतनी जड़ बन गई हैं कि उनमें न तो अपनी पतितावस्थाका ज्ञान ही रह गया है और न वे अत्याचारोंके विरोधकी अधिकारिणी ही अपनेको समझती हैं। बाईजी जहां जाती हैं, वहांकी महिला-समाजको अपने अतीत गौरव और वर्त्तमान पतनसे परिचित कराती हैं और उसका सहज परिणाम यह होता है कि बहनोंमें अपने अभ्युत्थानकी भावना उत्पन्न हो जाती है। वे यह अनुभव करने लगती हैं कि जिस प्रकार पुरुषवर्ग अपने कार्यक्षेत्र में अपना पूर्ण अधिकार रखते हैं उसी प्रकार स्त्रियोंको भी अपने कार्यक्षेत्रमें संचरण करनेका पूर्व अधिकार है।

बाईजीका यह कहना है कि अपने रीति रिवाज इतने पतित हो गये हैं कि उनके अनुसार मूर्ख और निकम्मे पुरुष भी स्त्रियों पर प्राधान्य जमाये बैठे हैं।

आपने कई कार्य अपने हाथ में लिये और उनमें पूर्ण सफलता भी प्राप्त की। प्रथम तो यह कि जिससे स्त्रियाँ भली प्रकार लिखना पढ़ना सीखकर मनुष्य बनें, जिससे प्राचीन रूढ़ियाँ कुप्रथा सब नष्ट हों। जिससे विधवा बहिनें शिक्षकोंका काम करती हुई सुखसे तथा सम्मानसे जीवन यात्रा का निर्वाह कर सकें और धर्म तत्त्वोंको समझकर उन पर आचरण करें। जिससे बहनें स्वाधीन चित्र, धार्मिक, आत्मनिर्भर सम्पन्न एवं उन्नतिशील हों। इन सब उद्देश्योंको सफल बनानेके लिये आपने अक्लान्त भावसे परिश्रम किया है। इस प्रकार पर हित व्रतधारी निष्काम आत्म-त्यागी, पर दुःखकातर, पर चिन्तापरायण साध्वी बहन बहुत कम ही दिखाई पड़ती हैं।

लेखक महाशय ने इस पुस्तकमें प्रातः स्मरणीया बाईजीके सम्बन्धमें जो कुछ संकलन कर लिया है वह यथार्थ है। पर यह मैं जानता हूँ कि उनके आदर्श जीवनकी कई उल्लेखनीय बातें लिखनेसे रह गई हैं। पंडितजीने इस पुनीत प्रयासमें जो परिश्रम किया है उसके लिये वे धन्यवादके पात्र हैं।

ता० १-७-४३
कलकत्ता।

छोटेलाल जैन M. R. A. S.

भूमिका

संसार एक रंगस्थली है इसमें नाना प्रकार के पात्र आते हैं और अपना-अपना पार्ट अदा करके चले जाते हैं। किन्तु सफल अभिनय उन्हीं पात्रों का समझा जाता है, जो जगत के लिए अपना आदर्श छोड़ जाते हैं। मानव-प्रकृति का भी यह नियम है कि जो व्यक्ति दूसरोंके दुःखोंसे दुःखी होकर उसकी मदद करनेवाला, समदृष्टि, सदाचारी, धर्मभीरु, विवेकी और परोपकारी होता है, वह जीवितावस्थामें तो सबको प्रसन्न रखता ही है, किन्तु मरने पर— उसकी मृत्युके हजारों या लाखों वर्ष बीत जाने पर भी लोग उसके नामको बड़ी श्रद्धा और भक्तिके साथ स्मरण करते हैं। उसके चरित्रको पढ़ते, सुनते और उसे आदर्श पुरुष मानते हैं। इसके विपरीत जो धर्मकी अपेक्षा अधर्मको महत्व देता है, जो सत्यको ठुकराता है और असत्यको अपनाता है, जिसके कार्य प्राकृतिक नियम विरुद्ध दूसरोंको हानिप्रद होते हैं, उस मनुष्यका नाम सुनकर हृदय कॉप उठता है, रोमाँच हो आता है, उसका नाम लेने और सुननेसे लोग घृणा करते हैं। उसके जीवित न रहने पर लोगोंको ज़रा भी अफ़सोस नहीं होता है, बल्कि प्रसन्नता होती है। उसके मरनेके बाद कोई उसका नाम भी नहीं लेता और लेता भी है तो बहुत घृणाके साथ।

चरित्र-वर्णन, पठन या श्रवण यद्यपि दोनों प्रकारके मनुष्योंका किया जाता है, लेकिन एकको बुरा समझ कर और दूसरेको भला समझ कर। एकके चरित्रको आदर्श मानकर तदनुसार आचरण

करनेके लिए और दूसरेके चरित्रको त्याज्य मानकर वैसे आचरणसे बचनेके लिये। सदाचारीका चरित्र ग्राह्य होता है और दुराचारीका त्याज्य।

प्रस्तुत पंडिताजीके चरित्रमें भी वही बात है—आपके चरित्रसे अटल-ब्रह्मचर्य, दृढ़-सत्य, दानवीरता, त्याग, जीवन-सादगी, सदाचार, सेवा-धर्म, आत्मोन्नति, परोपकार, साहित्य-सेवा, सहन-शीलता आदिका आदर्श प्राप्त होता है। अतः यह जीवन-चरित्र संसारको अत्यन्त लाभदायक सच्चे मार्गका दर्शक और अनुकरणीय होगा।

उपर्युक्त पंडिताजीने अपने जन्मसे बृन्दावनके एक धनी-मानी प्रतिष्ठित अग्रवाल वंशको सुशोभित किया था। आपका वैवाहिक संबंध ख्याति प्राप्त आराके रईस ज़मीन्दार घरानेमें हुआ था। आपको ऐहिक सभी प्रकारकी सुख-सामग्रियाँ प्राप्त हुई थीं, किन्तु दैवको यह कब स्वीकार था उसने तो आपके लिए दूसरा ही कार्यक्षेत्र तैयार किया था। आपके ही द्वारा महिला-समाजके पथ-प्रदर्शनका कार्य होनेको था। उस समय समाज सेवाके सभी कोनोंमें एक कर्मठ व्यक्तिकी आवश्यकता महसूस हो रही थी। तथा सेवाके सभी क्षेत्र एक ऐसे व्यक्तिकी आशामें थे जो स्वार्थका बलिदान करके वास्तविक सेवा भावको समझे। अतः इस भवितव्यताकी प्रधानताने ही आपको अल्पवयमें ही सधवासे विधवा बना दिया।

तबसे आपने शास्त्रोक्त वैधव्य दीक्षा लेकर देश, समाज, धर्म और साहित्यकी सेवा करनेके लिए अपने जीवनको अर्पित कर दिया है। तथा आप दिन-रात महिला-समाजके उत्थानके लिए

प्रयत्न करती रहती हैं। आपने समयका सदुपयोग करके आत्मोन्नतिके साथ-साथ साहित्यकी श्री-वृद्धि करके महिला-समाजका वास्तविक कल्याण किया है।

आप सांसारिक सुखोंको हेय समझती हैं, तथा अपने जीवनको सादा कार्यक्षम, उत्साही, विवेकी और आपत्तिकालमें सहनशील बनानेके लिये सतत प्रयत्न करती रहती हैं। आप अचानक विपत्तिके आ जाने पर कभी नहीं घबड़ातीं, प्रत्युत उसे शुभाशुभ कर्मोंका विपाक समझकर शान्ति-पूर्वक सह लेती हैं। आपकी सहनशीलताके अनेकों उदाहरण हैं। जिन्हें हमारे पाठक-पाठिकाएँ प्रस्तुत पुस्तकके अध्ययन से ज्ञात कर ही लेंगे।

पूजनीया पंडिताजीमें सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनमें जहाँ एक ओर नारी सुलभ गुणोंका उत्कर्ष है वहाँ दूसरी ओर स्वदेश-प्रेम और देशाभिमान भी है। आप सन् १९२१ ई० के आन्दोलनसे बराबर अब तक खादी ही का उपयोग करती आ रही हैं। समय-समय पर जो भी देश-भक्त महिलाएँ आती हैं आप उनके कार्यमें बराबर सहयोग प्रदान करती रहती हैं। दूसरे आन्दोलनके समय जब श्रीमती जानकीबाईजी धर्मपत्नी स्वर्गीय सेठ जमनालालजी बजाज तथा धर्मपत्नी देशरत्न डा० राजेन्द्रप्रसाद जी; ये महिलाएँ आरा आईं थीं, तब आप ही के आतिथ्यमें ठहरीं थीं, सभा आदि हो जानेके पश्चात् जानकीबाईजीने पण्डिताजीसे कहा कि "बिहार-प्रान्तमें बहुत सी खादी तैयार पड़ी है, खादी-भण्डार भर रहे हैं अतः इस खादीके विकवानेका प्रयत्न करना चाहिए। जब तक यह खादी न

बिकेगी, तब तक नई खादी कैसे तैयार हो सकेगी ? जानकीबाई-जीके उपर्युक्त मन्तव्यको सुनकर सबने यही निश्चय किया कि प्रत्येक जिलेमें खादीकी प्रदर्शिनी की जाय। इस निश्चयके अनुसार आरामें भी एक प्रदर्शिनी की गई इसमें बाला-विश्रामकी छात्राओंके द्वारा बिक्रीका सारा प्रबन्ध पण्डिताजीने स्वयं करवा दिया। स्वयं पंडिताजीके घरमें भी हजारों रुपयेकी खादी खरीदी गई तथा नगरके इतर लोगोंने भी पर्याप्त मात्रामें खादी ली। इस समय अनुमानतः ३०-४० हजारकी खादीकी बिक्रीका सारा श्रेय उपर्युक्त पंडिताजीको ही है। इसी प्रकार सन् १९३९ में राजपूतानेके अकाल पीड़ितोंके लिये वस्त्रादि एकत्रित करती हुई कलकत्तेसे अमृतकौरजी आई थीं, तब उनके कार्यमें भी आपने बड़ी सहायता पहुँचाई। आपने स्वयं भी सैकड़ों नये वस्त्र प्रदान किये।

इसी प्रकार सन् १९४० में जब रामगढ़में कॉंग्रेसका अधिवेशन होने वाला था, तब महिलाओंके संगठनके लिए दक्षिणसे प्रेमकण्टकजी आरा आईं और आपसे बहुत सा परामर्श किया। अधिवेशनके समय भी पण्डिताजी रामगढ़ गईं और वहाँकी मूसलाधार वृष्टिमें उन बहनोंके साथ घण्टों भींगती रहीं। इस प्रकार समय-समय पर आप देश-सेवामें भाग लिया करती हैं।

पण्डिताजीमें माताका स्नेह, वीराङ्गनाओंका गौरव, कुल ललनाओंकी सहिष्णुता और गृहलक्ष्मीकी उदारता आदि गुण सहज रूपसे पाये जाते हैं। आपने कर्मयोगी बनकर सामाजिक क्षेत्रमें पदार्पण किया है तथा स्वार्थको तिलाञ्जलि देकर रात-दिन नियमित रूपसे धर्माचरणका पालन करती हुई परोपकारमें अनुरक्त

रहती हैं। आप महिला-समाजमें फैले हुए अज्ञानान्धकारको दूर करनेके लिए सदैव कटिबद्ध रहती हैं। आपने अपने सत्साहस और धैर्यसे देवियोंके हृदयमें विद्याके कल्पवृक्षका वह अंकुर उत्पन्न कर दिया है जो आज फूलने-फलने वाला वृक्ष तैयार हो समाजको अमृतफल चखा रहा है। आप ही के अद्भुत प्रभाव से दिगम्बर जैन स्त्री-समाजमें अनेक शिक्षा संस्थाएँ दिखाई दे रही हैं। आप संस्कृत भाषाके अध्ययन-अध्यापनके ऊपर विशेष जोर देती हैं। आप हमेशा कहा करती हैं कि भारतीय संस्कृतिकी रक्षाके लिए हमें संस्कृत भाषाको ही अपनाना पड़ेगा। आपको इस भाषा से इतना प्रेम है कि जिसके फल-स्वरूप आप कुछ समय पहले डायरी तथा पत्रादि भी संस्कृतमें लिखा करती थीं। अभी जीवनी छपनेके बाद आपकी एक डायरी सन् १९१२ ई० की प्राप्त हुई है। जिसमें आपने सारा विवरण संस्कृतमें ही लिखा है। परन्तु इधर जबसे हिन्दी राष्ट्र-भाषाके पद पर आसीन हुई है तबसे आप हिन्दीमें ही लिखने लगी हैं। मातृ-भाषाकी उन्नतिके लिए भी आपने अटूट श्रम करके महिलोपयोगी साहित्यकी श्री-वृद्धि कर हिन्दी साहित्यके भांडारको बढ़ानेमें योगदान दिया है।

शिक्षा-प्रेमके अलावा भी आपके दैनिक जीवनमें कई विशेषताएँ हैं—आप दिनचर्या पालनेमें ज़रा भी प्रमाद नहीं करती हैं। अनेक विघ्न-बाधाओंके आने पर भी आप धर्म साधन एवं कर्त्तव्य पालनमें शिथिलता नहीं आने देती हैं। इसी बातको मैं निम्नलिखित उदाहरणसे स्पष्ट करता हूँ।

८ फरवरी सन् १९४२ ई० को आप अचानक बीमार पड़

गई तथा आपका स्वास्थ्य इतना बिगड़ गया कि उठने, बैठनेकी शक्ति भी न रही। इस प्रकारकी असमर्थावस्थामें भी आपने अपने नित्य नैमित्तिक कार्योंको नहीं छोड़ा। पूजन, भक्ति, सामायिक, स्वाध्याय और महिलादर्शका कार्य आदि बातोंको स्वस्थावस्थाके समान ही करती रहीं। उस समय कमरमें दर्द बढ़नेके कारण वेदना दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती थी इसलिए कुछ संबंधियोंने आपको इन्जेक्शन लेनेकी प्रेरणा की। किन्तु, आपने अपने सदुपदेशसे सबको संसारका स्वरूप समझाया तथा इन्ज़ेक्शन लेनेसे साफ इन्कार कर दिया और अपने व्रत, नियमोंमें पूर्ववत् ही दृढ़ रहीं। इस प्रकार आप हमेशा अपनी धार्मिक क्रियाएँ पालनेमें अटल रहती हैं।

आपका हृदय अत्यन्त दयालु है। दूसरोंके दुःखोंको देखकर आपका हृदय दयार्द्र हो जाता है। यदि कोई दीन, दुःखी, दरिद्री, रोगी और अपाहिज़ सामने दिखता है तो जब तक उसका वह दुःख दूर नहीं हो जाता तब तक आपको शान्ति नहीं मिलती है। अनेक अवसरों पर मुझे आपकी इस दयालुताका परिचय प्राप्त हुआ है परन्तु, मैं सिर्फ एक घटनाका ही उल्लेख कर देना पर्याप्त समझता हूँ—

गत वर्ष एक दिन गरमी के दिनोंमें रातके बारह बजे कुमार-सिंह नामक दरवानको बिच्छूने काट लिया वह बेचारा बिच्छूके ज़हरसे पीड़ित होकर छटपटाने लगा। जब ऊपर सोती हुई पण्डिताजीको यह समाचार मिला तो वह शीघ्र ही उतर कर नीचे आईं तथा उसका समाचार मालूम करनेके अनन्तर उसका

उपचार भी करवाया। किन्तु बिच्छू अत्यन्त विषैला था जिससे उपचार करने पर भी उस दरवानको कुछ भी लाभ नहीं हुआ और रात भर दर्दसे पीड़ित रहा। पण्डिताजी भी उसके साथ रात भर जागती रहीं और उसके दुःखको दूर करनेका बराबर प्रयत्न करती रहीं। दूसरा कोई भौतिक सुखासीन मालिक होता तो वह न तो इस प्रकार ऊपरसे नीचे तक उतरकर ही आता और न रात भर उसके दुःखको दूर करनेका प्रयत्न ही करता; उसे तो अपने ही सुखसे प्रयोजन रहता, उसे दूसरोंके दुःख-दर्दसे क्या मतलब, किन्तु पण्डिताजीका हृदय मातृ-स्नेहसे परिपूर्ण है, उनका वर्ताव आधीन व्यक्तियोंके साथ नौकर जैसा नहीं है, बल्कि भाई-बहन समझकर प्रेम और मधुर स्वरमे वे काम लेती हैं; इसलिये आपका आश्रम दिनदूनी रातचौगुनी उन्नति करता जा रहा है। अस्तु,

आप धर्म, न्याय, साहित्य आदि विषयोंकी विदुषी होती हुई भी भेद-विज्ञानका मर्म जानती हैं तथा आत्मानुभवके द्वारा अतीन्द्रिय आनन्दका रसास्वादन करती रहती हैं। आप आध्यात्मिक बल बढ़ानेके लिये सर्वदा समयसारादि आध्यात्मिक ग्रन्थोंका स्वाध्याय करती रहती हैं। आप अपने हृदयको शान्त और मनको स्थिर रखनेके लिये एकान्तवास पसन्द करती हैं। इसी कारण आप सांसारिक झंझटोंसे दूर और समस्त चिन्ताओंसे रहित होकर वर्षमें एकाध महीनेके लिये एकान्तवास करती हैं। आप सदैव कहा करती हैं कि जिसमें चिन्ताओंकी मात्रा जितनी कम होगी उसका हृदय उतना ही शान्त और मन उतना ही स्थिर होगा।

अतः चिन्ताओं पर विजय प्राप्त करनेके लिये एकान्तवास करना परमावश्यक है।

उपर्युक्त गुणोंके अतिरिक्त पण्डिताजीमें अपूर्व साहस और आत्मबल है आप अवसर आने पर कठिनसे कठिन गुरुतर कार्यको भी क्षण भरमें अकेली ही साहस पूर्वक कर डालती हैं। अभी हालमें ता० ३ जुलाई सन् १९४३ ई० को आप ईसरी जारही थीं, तब ट्रेनमें आपने एक अति साहसका कार्य किया है—जब दानापुर स्टेशनसे गाड़ी चलने लगी तब बहुतसे व्यक्ति भीड़ होनेके कारण रेलका डण्डा पकड़कर पटरी पर खड़े होकर लटक गये। इन लटकनेवाले व्यक्तियोंमें १५-२०-वर्षका एक युवक भी था; उससे पण्डिताजीने कहा "इस तरह मत लटको, गिर पड़ोगे"। किन्तु भीड़ इतनी अधिक थी कि उस युवकने आपकी बातों पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। कुछ दूर जाने पर दुर्भाग्यसे उस युवकके पैर पटरी परसे हट गये तथा उसके एक हाथसे खिड़कीका डण्डा भी छूट गया। इस समय उसकी अवस्था दयनीय थी, वह बेचारा कभी नीचे आता और कभी ऊपर। वह बिना जलकी मछलीकी तरह तड़फड़ा रहा था, उसके प्राण संकटमें थे; कोई भी उसका रक्षक नहीं था, पासमें लटकनेवाले लोगोंको तो अपने ही को संभालना दूभर था, फिर भी एक पासवाले युवकने साहस करके उसका एक हाथ पकड़ा; परन्तु यह आश्रय पर्याप्त नहीं था अतः अब उसके प्राण-पखेरु उड़ना ही चाहते थे कि इधर जनाने इन्टरमें बैठी हुई पण्डिताजीने यह दयनीय अवस्था देखी तो आपका मातृ-स्नेह उमड़ पड़ा और चट अपने प्राणों पर खेल उस युवकका एक हाथ

जोरसे पकड़ लिया तथा चिल्लाकर उसे प्रोत्साहित किया कि तुम अपने पैर ऊपर करके संभलो। युवकने भी जोर लगाया और ज्यों-त्यों कर पटना स्टेशन आ गया। आपने बाहर वालोंको जोर-शोरके साथ पुकारना शुरू किया, तब कुछ सज्जनोंने आकर उस युवकको खींच लिया। इस कार्यसे कई दिन तक आपके हाथमें दर्द भी होता रहा। इस तरह समय-समय पर आप अपने साहसका उपयोग करती रहती हैं। अस्तु,

प्रत्येक व्यक्तिके लिये आपका चरित्र शिक्षासे परिपूर्ण है। पद-पद पर हमें आपके पावन जीवनसे देशभक्ति, आत्मसुधार, स्वावलम्बन, विश्व-प्रेम, उच्चादर्श, देशाभिमान, स्वधर्मानुराग, कर्त्तव्यपालन, सहन-शीलता, गम्भीरता, ब्रह्मचर्य आदि बातोंकी शिक्षाएँ मिलती हैं। अतः आशा है कि अन्य-अन्य महिलाएँ भी आपके जीवन-चरित्रसे पर्याप्त लाभ उठाकर महिला-समाजका कल्याण करने लिये बद्ध कटि हो जायँगी। जिससे भारतीय महिलाओंका खोया हुआ गौरव पुनः प्राप्त किया जा सके। साथ ही साथ महिला भूषण पं० ब्रजबालादेवीजी भी धन्यवादकी पात्रा हैं जिन्होंने श्रम एवं धन व्यय करके आदर्श महिला ब्र० पं० चन्दाबाईजीका जीवन चरित्र जनताके सामने उज्वल निदर्शनके रूपमें उपस्थित किया है, क्योंकि बिना दृष्टान्तके विशेषज्ञोंकी बुद्धि भी मोहको प्राप्त हो जाती है अतः यह जीवन-चरित्र मानव-समाजको पथ-प्रदर्शक होगा।

ता० १-८-४३ } नेमिचन्द्र जैन शास्त्री

सुहृद-वर्गके प्रति निवेदन

बन्धुओं और बहिनों आपके समक्ष बहनजीका यह पवित्र जीवन प्रकाशित करते हुए बड़ा हर्ष होता है यद्यपि आपका जीवन छिपा हुआ नहीं है, समाज सेवाके कारण प्रायः भारतके सभी प्रान्तोंकी, नगर और ग्रामोंकी जनतामें प्रकट है। महिलादर्श, रचित-पुस्तकें, बाला-विश्राम और उपदेशों द्वारा सभी आपसे परिचित हैं। तथापि कुछ घटनाओंको एकत्रित करके यह श्रद्धाञ्जलि समर्पित करना कर्तव्य समझा। जीवनी जैसी निकलनी चाहिये थी वैसी न निकल सकी। इसके दो मुख्य कारण हैं। एक तो पुरानी डायरियोंका इधर-उधर गुम हो जाना और घटनाओंका नोट न रखना तथा साथमें कार्य करनेवाली महिलारत्न मगनबाईजी जे० पी० व पूज्य ब्र० कंकूबाईजीका स्वर्गवास हो जाना इत्यादि कारणोंसे बहुतसी घटनाएँ प्रकाशित न हो सकीं। दूसरा कारण इस समय कागजका अभाव है। अत्यधिक मूल्य देने पर भी अच्छा कागज और जिल्द बनाने योग्य वस्तुएँ नहीं मिलती हैं। मुझे आशा है कि वर्तमानका संकटकाल व्यतीत होने पर जीवनीका दूसरा संस्करण सर्वाङ्ग सुन्दर प्रकाशित होकर आप लोगोंके कर कमलोंमें अवश्य पहुँचेगा।

मैं पं० परमानंदजी शास्त्री सरसावाका अत्यन्त आभार मानती हूँ कि जिन्होंने इस जीवनीको लिखकर साहित्य संसारके लिये एक उपयोगी पुस्तक प्रस्तुत की है। इसी प्रकार ज्योतिष शास्त्री पं० नेमिचन्द्रजी न्याय-ज्योतिष तीर्थकी भी आभारी हूँ जिन्होंने जीवनीके छपाई और प्रूफ संशोधनादि समस्त कार्योंको बड़ी लगन और परिश्रमसे किया है।

ब्रजबालादेवी



श्रीमती ब्र० प० चन्दाबाईजी

(जन्म—आषाढ़ शुक्ला ३ सं० १९४)

समर्पणम्

त्वदीयात्यनुकम्पायाः गृहीत्वा धर्मपावनम् ।
आराध्य संयमं चैव सोधयामि निजात्मनम् ॥१॥
अनेनैव प्रमोदेन तुभ्यमेव समर्प्यते ।
त्वदीयं जीवनं वृत्तं अद्य जयन्तिकादिने ॥२॥

गुणानुरक्ता

व्रजबालादेवी

श्री.. की सेवा में

सादर भेंट ।

पं० ब्रजबालादेवी

विषय-सूची

आदर्श महिला पं. चन्दाबाई

वंश-परिचय

अग्रवालजाति में बा० रामकृष्णदासजी एक प्रतिभाशाली व्यक्ति होगए हैं। आप अपने ससुरके पास ही कलकत्ते में रहा करते थे। आपके ससुर सदा से ही भक्तिरसके प्रेमी थे, जो राधाकृष्ण पर विशेष अनुराग रखते थे। उन्होंने वृद्धावस्था में अपने शेष जीवनको निराकुल बनाने की इच्छासे श्रीकृष्णकी जन्मभूमि वृन्दावन में रहनेका निश्चय किया, और फलस्वरूप कलकत्ते से वृन्दावन में आकर रहने लगे। यहाँ उन्होंने बहुत सी निजी जायदाद और जमींदारी खरीद करली और वहाँ पास ही में राधाकृष्णका एक मन्दिर भी बनवा दिया। इस तरह उन्होंने अपना जीवन आजीविका आदिसे निश्चिन्त होकर सानन्द व्यतीत किया। इन्होंने अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें अपने दामाद बा० रामकृष्णदासजीको भी सकुटुम्ब कलकत्ते से बुलालिया। ससुरजी के कोई उत्तराधिकारी न होने से उनकी मृत्युके पश्चात् स्थावर-जंगमरूप सारी संपत्तिका नियमानुसार हक बा० रामकृष्ण-दास जी के सुपुत्र बा० नारायणदास जी को मिला। इनका जन्म सन् १८७२ ई० में हुआ था और नानाकी मृत्युके समय यह नाबालिग थे। अतः चराचर सम्पत्तिके संरक्षणका भार आपके पिता बा० रामकृष्णदासजीको उठाना पड़ा, जिसे उन्होंने बड़ी

योग्यता से निभाया। उस समय बा० रामकृष्णदासजीकी माँ जीवित थीं। वे प्रकृतितः भद्र, दयालु और दूसरोंकी सेवा-सुश्रूषा करना अपना कर्तव्य समझती थीं। बा० नारायणदासजी का लालन-पालन प्रायः इन्हींकी संरक्षता में ही हुआ था। इसलिये आपके सुकोमल हृदय पटल पर दादीजी के सभी गुणों का गहरा प्रभाव पड़े बिना न रहा, फलतः आपमें दादीजी के वे सभी गुण आगये जो मानवजीवन के खास अंग हैं। दादीजीका आप पर बड़ा स्नेह था और आप भी दादीजी का बड़ा आदर करते थे। आपके नानाजी वल्लभसम्प्रदायके अनुयायी थे। अतः आपने भी उसी मार्गका अनुकरण किया। आपके पिता बा० रामकृष्णदास जी बड़े ही उदार और अपने धर्म के विशेष प्रेमी थे, इसीसे आपने अपने ससुर द्वारा बनवाए मन्दिर को कई हजार रुपया खर्च कर पत्थरकी नक्कासीका काम कराकर उसे पुनः बनवाया। आपको विद्या से अत्यन्त प्रेम था और आप यह अच्छी तरहसे जानते थे कि विद्यारहित मनुष्य पशुके समान है—बिना शिक्षाके मनुष्य और पशुओं में कोई भेद नहीं है। विद्या के द्वारा ही मनुष्य की प्रतिभा का विकास होता है और उससे ही हेयोपादेय-विषयक विवेक जाग्रत होता है। अतः आपने अपने पुत्र बा० नारायणदास जी को शिक्षित बनाने में कोई कमी उठा न रक्खी। और आगरा कॉलेज में रखकर बी. ए. तक शिक्षा दिलाई। यद्यपि उनकी इच्छा और भी अधिक पढ़ाने की थी; परन्तु पुत्र का स्वास्थ्य साथ नहीं देता था।

बा० नारायणदास जी होनहार युवक थे। आप स्वभावसे ही

दयालु और परोपकारी थे। उस समय वे वृन्दावनके अमूल्य रत्न और चमकते हीरा थे। विद्योन्नति ही आपके जीवन का प्रधान उद्देश्य था, जिसकी उन्होंने बहुत कुछ पूर्ति की। आपका पतला दुबला कलेवर और किसान जैसा सख्त परिश्रम, सिंहकी सी निर्भयता, कोयल जैसी मधुरवाणी, अपने उद्देश्य एवं लक्ष्यपूर्ति में सहायक, आपकी पटुलेखनी के जौहर, कर्तव्य-निष्ठा और अचूक कार्यपद्धति ये सब बातें आपकी विशेष उल्लेखनीय हैं।

बा० नारायणदास जी की शिक्षा वृन्दावन के 'एडेड एंग्लो-वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल' में प्रारम्भ हुई थी और वहीं से मिडिल की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर वे आगरा के 'कालेजियट' स्कूल में भर्ती हुए थे, और सन् १८९० में एन्ट्रेन्स की परीक्षा स्कॉलर्शिप सहित प्रथम श्रेणी में पास करली। प्रारम्भिक एफ. ए. में कानून के प्रसिद्ध विद्वान् सर तेज बहादुर सप्रू भी मथुरा से जाकर उक्त कॉलेज में भर्ती हुए थे तभी से इन दोनों में बड़ी घनिष्ठ मैत्री हो गई थी।

बा० नारायणदास जी ने सन् १८९२ में एफ. ए. और सन् १८९४ में प्रथम श्रेणी में बी. ए. पास किया था। आप अपने विद्यार्थी जीवन में अस्वस्थ हो गए थे। बी. ए. की पढ़ाई के दिनों में दिल की घबराहट के दौरों के कारण अन्य विद्यार्थियों की भाँति आप परिश्रम करने में असमर्थ थे। फिर भी कुशाग्र-बुद्धि होने के कारण आपको प्रथम श्रेणी में सफलता प्राप्त हुई थी।

आपका विवाह बाल्यावस्था में ही जब आप वृन्दावन के अंग्रेजी मिडिल स्कूल में पढ़ते थे, भरतपुर स्टेट के प्रसिद्ध रावन

घराने में श्रीमती राधिका देवी के साथ कर दिया गया था। राधिका जी का जन्म सन् १८७४ में हुआ था। उस समय आप साधारण हिन्दी का पढ़ना लिखना जानती थीं। आपका स्वभाव प्रकृतितः दयालु और परोपकारी था। आप गृहस्थीके कार्यों में बड़ी दक्षा थीं। पतिव्रता साध्वी होनेके साथ साथ सन्तानके पालन-पोषण में बहुत ही पटु थीं। आपको अपने उदार स्वभाव के कारण कभी कभी मेघ कवि के समान कष्ट भी उठाना पड़ता था। फिर भी वे अपने इस स्वभाव को छोड़ना उचित नहीं समझती थीं। गरीबों की तो आप अन्न-वस्त्रादि के द्वारा सेवा करती ही थीं; परन्तु यदि दरिद्रता या आर्थिक संकट के कारण कभी किसी लड़की की शादी में कोई रुकावट पैदा होती देखतीं, तो उसे भी अर्थ आदिकी सहायता देकर करा देती थीं। मुहल्ले की स्त्रियों में जब कभी प्रसूति का कोई कष्ट सुनतीं तो घर के सब काम-काज छोड़कर उसकी सेवा करने को जरूर जातीं। यदि कोई अबला स्त्री किसी तरह से गुम होकर वृन्दावन में आजाती तो उसे भी महीना दो महीना रखकर उसकी सहायता करतीं और फिर प्रयत्न करके उसे अपने घर वापस पहुँचा देतीं थीं। आप अपने पतिदेव के कार्यों में हर समय सहयोग देतीं रहतीं थीं और उन्हें दीन-दुखियों की सेवा-सुश्रूषा करने की प्रेरणा भी किया करती थीं। आप पतिदेव के साथ देश-सेवा के कार्यों में भी यथा शक्ति हाथ बटातीं थीं। बा० नारायणदासजीने सन् १९२१ के काँग्रेसके पहले आन्दोलन में जब से खद्दर पहिनना शुरु किया था तब से आप भी खद्दर पहिनने लगीं थीं। आप स्वयं चर्खे से सूत कात कर उसके

कपड़े बनवातीं और उपयोग में लाती थीं। इतना ही नहीं; किन्तु सन् १९२१ के उस आन्दोलन में आपने 'प्रेम महाविद्यालय' की महिलाओं के साथ पिकेटिंग का कार्य भी किया, जो दुकानदार विलायती माल बेचना बन्द नहीं करते थे वे आप को पिकेटिंग करते हुए देखकर दुकान बन्द कर देते थे। इनकी सेवा से वृन्दावन के नागरिक चकित हो गये थे कि पर्दे की आड़ में रहने वाली बड़े घर की इस महिला ने कितना साहस कर लिया। अस्तु,

इनके जीवनकी और भी कितनी ही खास घटनाएँ हैं; परन्तु उन सबको यहाँ अनवकाश वश छोड़ा जाता है। और पाठकों की जानकारी के लिये उनमें से यहाँ सिर्फ एक ही घटना का उल्लेख किया जाता है—एक समय जमनाबाई नाम की बुढिया की पीठ में कारवंक केस के समान एक घाव हो गया था, जिसे देखकर डाक्टरों ने भी जबाब दे दिया था; परन्तु आपने अपना उत्साह नहीं छोड़ा और प्रतिदिन घाव धोकर मरहम पट्टी करके कुछ ही महीनों में उसे बिल्कुल अच्छा कर दिया। जो स्त्रियाँ अस्पताल से घबराती थीं वह इनके पास आकर अपना इलाज करवातीं थीं और उसे मरहम पट्टी कर के ठीक कर देतीं थीं। इसके लिये आप तम्बाकू की डंडी, फिटकरी का पानी और नीम का पानी सदा काम में लातीं थीं, और सफेदा मिलाकर मरहम तय्यार करतीं थीं। ऊपरके इस संक्षिप्त परिचय परसे पाठक पाठिकाओं को राधिकाजीकी सेवा, परोपकार और दयालुता का कितना ही परिचय मिल जाता है।

उस समय वृन्दावन में बा० नारायणदासजी ही सर्वश्रेष्ठ देशभक्त

सज्जन समझे जाते थे, वहाँ की जनता आपको बड़े प्रेम और गौरवकी दृष्टिसे देखा करती थी। आपकी प्रतिष्ठा केवल वृन्दावन तक ही सीमित नहीं थी किन्तु समस्त संयुक्तप्रांतमें उस समय आप एक अच्छे प्रतिष्ठित देशभक्त नेता समझे जाते थे। आपने 'प्रेम महाविद्यालय' की स्थापना में राजा महेन्द्रप्रताप को भाई के समान साथ दिया था। आपने उसमें केवल सहयोग ही नहीं दिया किन्तु जबसे उक्त राजा साहब विदेश चले गये तबसे उक्त विद्यालयका सारा कार्य भार आपके ऊपर ही आ गया था, और आपने उसे अपनी शक्ति भर चलाने में कोई कमी उठा न रक्खी थी। आपको इसका संचालन करते हुए बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। यहाँ तक कि आप को अपने आवश्यक घरेलू कार्यों को भी गौण करना पड़ता और अपने स्वास्थ्य में भी लापर्वाही वर्तने पड़ती थी; परन्तु फिर भी आप उस कार्य से मुख मोड़ना उचित नहीं समझते थे। आपने इस कार्य को अपने अन्तिम जीवन तक निबाहा और आपके स्वर्गारोहण के पश्चात् आपके चिं० पुत्र बा० जमनाप्रसाद जी बी.एस.सी.एल-एल. बी. ने भी किया, तथा अन्य सज्जनवृन्द भी उसकी देख-भाल करते रहे।

सन् १९२१ में जनता प्रिय बा० नारायणदास जी यू. पी. कौंसिल के मेम्बर चुने गए। वहाँ थोड़े दिन रहकर बृटिश गवर्नमेन्ट की शासन-प्रणाली से असंतुष्ट होकर आपने इस्तीफा दे दिया। फिर सन् १९२४ में पं० मोतीलाल जी नेहरू आदि नेताओंकी प्रेरणासे आप बड़ी कौन्सिल के लिये खड़े हुए और ५ जिलों के रायजिहन्दों के वोटों से ऑनरेबिल हुए। आप

अंग्रेजी भाषा के अच्छे लेखक भी थे। आपके व्याख्यान (स्पीच) और लेख जनता बड़ी ही उत्सुकतासे सुनती और पढ़ती थी। आप एक अच्छे जमींदार और गणयमान्य व्यक्ति होने पर भी बहुत ही सादी चाल से रहते थे—आप कहा करते थे कि प्रत्येक भारतवासी का रहन-सहन और भोजन सादा एवं सात्विक होना चाहिये, जिससे वह अपने देश को स्वतंत्र और समृद्ध बनाने में प्रयत्नशील हो सके। आप बड़ी दयालु प्रकृति के थे, यही कारण है कि जब कोई मनुष्य अधिक दुःखी होता और वह अपने दुःख को आपसे निवेदन कर उसे हल्का करना चाहता, तब आप उसके दुःखकी आत्म-कहानी अच्छी तरह सुनते और उसे सान्त्वना एवं दिलाशा देकर उसके बोझ को हल्का करते और फिर उसे दूर करने का प्रयत्न करते थे। वृन्दावन में इनके मकान पर प्रायः ऐसे लोगों की दिन भर भीड़ लगी रहती थी, और कभी-कभी तो इस कार्य में संलग्न होने से आपको अपने भोजन का नियमित समय भी उल्लंघन करना पड़ता था। यद्यपि उक्त बाबू साहब के विषय में और भी कितनी उल्लेखनीय बातें हैं। परन्तु इस समय उनका जिक्र न कर प्रकृत विषय की ओर ही बढ़ना उचित है।

ऐसे सुयोग्य दम्पति का गार्हस्थ्य जीवन स्वर्गसुख के समान व्यतीत होता है। यदि दम्पतियों में से किसी एक में अयोग्यता अथवा स्वभाव में कटुता होती है तो उनका गृहस्थ जीवन बड़े ही कष्टसे व्यतीत होता है। और जहाँ पर दोनों ही सुयोग्य, सदाचारी, धार्मिक और विवेकी हों, वहाँ जीवन का जो आनन्द रहता है वह वचनातीत है। उपर्युक्त दम्पति के यहाँ विक्रम

संवत् १९४६ की आषाढ़शुक्ला तृतीयाके शुभ दिन हमारी चरितनायिका पुत्री का जन्म हुआ। जिसका नाम चन्दाबाई रक्खा गया। पुत्री का सुन्दर शरीर, सौम्य मुख और गम्भीर आकृति देखकर माता-पिता को बड़ी प्रसन्नता हुई। पुत्री का लालन-पालन बड़े यत्न से किया गया। और उसका शरीर दौयजके चाँद की तरह निरन्तर बढ़ने लगा। चन्दाबाई के बाद बा० नारायणदास जी के दो पुत्र और दो पुत्रियाँ हुईं जिनके नाम इस प्रकार हैं:—बाबू जमनाप्रसाद, केशरदेवी, ब्रजबालादेवी और सब से छोटा जशेन्दु-प्रसाद।

आपकी ये सभी संतानें (पुत्र-पुत्रियाँ) सुयोग्य सदाचारी और शिक्षित हैं। और अपने गार्हस्थ कार्योंका यथायोग्य पालन करती हुई देश, धर्म और समाज की यथाशक्ति सेवा करते हुए अपना अपना जीवनयापन कर रही हैं।



पण्डिताजीके स्व० पूज्य पिता—श्री० बा० नारायणदासजी
एम० एल० ए०, वृन्दावन

बाल्यजीवन और वैवाहिक सम्बन्ध

बा० नारायणदासजी जैसे सुयोग्य कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तिकी सन्तानका तदनुरूप सुयोग्य होना स्वाभाविक ही है। बाबूजीकी सभी सन्तानोंमें ज्येष्ठ हमारी चरितनायिका चन्दाबाई जी स्वभाव से ही मृदु, दयालु और माता-पिता के समान ही उदार हृदया हैं। जब इनकी उम्र पाँच वर्ष की हो चुकी, तब इनके पढ़ाने के लिये एक अध्यापिका नियत की गई। इन्होंने ११ वर्ष की उम्र तक ५-६ वर्ष के अर्से में हिन्दी में साधारणतः लिखना-पढ़ना और धार्मिक स्तोत्रों का पाठ करना अच्छी तरह सीख लिया। इनकी अभिलाषा और भी अधिक पढ़ने की थी; किन्तु उस समय कन्याओंका अधिक उम्र तक पढ़ना-लिखना उचित नहीं समझा जाता था। बाई जी का चित्त संस्कृत भाषा सीखने के लिये विशेषतया उत्कंठित हो रहा था किन्तु इनको उस समय संस्कृतका अभ्यास करनेका सुयोग्य अवसर प्राप्त न हो सका। और इधर घर में माता की सुयोग्य शिक्षा से इन्होंने घर-गृहस्थी के योग्य सभी कार्य रसोई बनाना, सीना, पिरोना आदि सीख लिये। गृही कार्यों में इनको दक्षा और व्यवहारमें चतुर देखकर बाबूजी को इनके योग्य सम्बन्ध करनेकी चिन्ता हुई।

छोटी उम्रमें सन्तानका विवाह कर देना कितना बुरा है और उससे कितने बुरे परिणाम होते हैं यह सब कुछ जानते हुए भी बाबूजी में इतना मनोबल नहीं था कि उस समय आप उक्त प्रथा के खिलाफ़ कुछ कार्य कर सकें; भारतमें बाल-विवाहकी यह

राक्षसी प्रथा बहुत अरसे से चली आ रही है, संभवतः इसका अधिक भयंकर रूप बाद में बादशाही अत्याचारों की वजह से बढ़ गया हो, कुछ भी हो, परन्तु यह प्रथा कितनी निकृष्ट है इसे बतलानेकी आवश्यकता नहीं—उसके भयंकर परिणाम से सभी परिचित हैं। बाबूजी यह भी महसूस करते थे कि जब तक सन्तान विवाह और उसके उद्देश्य से भलीभाँति परिचित न हो जाय और उनमें विवाह-सम्बन्धको वहन, धारण एवं संचालन की पूरी योग्यता न आजाय, अथवा गृहस्थोचित कर्तव्यसे भली-भाँति अवगत न हो जाय, तबतक विवाहके बन्धन में बाँधना—किसी अपरिचित व्यक्तिके साथ गठबंधन जोड़ देना—किसी तरह भी समुचित नहीं कहा जा सकता। परन्तु फिर भी वे वृद्धजनों, कुटुम्बियों और ख़ास-ख़ास रिश्तेदारों आदि के भारी आग्रहको टालनेमें सर्वथा असमर्थ रहे। दूसरे इस प्रथाके खिलाफ़ प्रवृत्ति करना भी उस समय सरल नहीं था। वे जानते थे कि यदि मैं इस समय इस प्रथा के खिलाफ़ ज़रा भी प्रयत्न करूँगा तो उससे मुझे सिवाय हानि के लाभकी कोई संभावना नहीं है। इसलिये आपने ११ वर्ष की लघुवय में ही चन्दाबाई जी का विवाह-सम्बन्ध कर देना निश्चित किया। यह सम्बन्ध आरा के सुप्रसिद्ध रईस पं० प्रभुदासजी के पौत्र और बा० चन्द्रकुमारजीके पुत्र बा० धर्मकुमारजी के साथ किया गया।

पं० प्रभुदासजी बनारस में रहते थे, आपकी जाति अग्रवाल और गोत्र गोयल था। जैनधर्म के अनुयायी तथा संस्कृत भाषा के अच्छे विद्वान् थे। साथ ही, मंत्र शास्त्रके भी जानकार थे।

बड़े ही भद्र परिणामी उदार हृदय और धर्मात्मा थे। इस कारण उनसे प्रायः सब ही प्रेम करते थे। आपने बनारस में, चन्द्रपुरी और भदैनी में श्री जिन मन्दिरों का निर्माण कराया था, जो आज भी यात्रीगणोंके चित्तको आल्हादित करते हैं और जिनके दर्शन पूजनादि द्वारा अपनी चिरसंचित पाप कालिमाको धोने अथवा दूर करने में समर्थ होते हैं। इसी तरह एक मन्दिर गड़वा में और एक मंदिर स्वयं आरा में भी इनका बनवाया हुआ है। कारणवश पंडित प्रभुदास जी बनारस से आरा चले आए और यहां आपने अपना कारोबार बहुत बढ़ाया। ये चार भाई थे— प्रभुदास, जिनेश्वरदास, मुनीश्वरदास और अर्हदास। इन सभी में परस्पर भारी प्रेम था। सबने मिलकर उस समय आराके पास एक बड़ी भारी जमींदारी खरीद कर ली और तब से सब यहीं रहने लगे। उस समय आरा में कोई जैन मन्दिर न था। तब सब साधर्मी भाइयों ने मिलकर सबसे पहले श्रीचन्द्रप्रभु का मन्दिर बनवाया और पं० प्रभुदासजीने उसकी प्रतिष्ठा में बहुभाग लिया। उसके बाद से आरा में अब तक ३५ जिनमंदिर प्रतिष्ठित हो चुके हैं। पं० प्रभुदासजी संयमी पुरुष थे, वे देवपूजा, समायिक और स्वाध्याय आदि धार्मिक क्रियाओंके अनुष्ठानमें सदा सावधान रहते थे। चूंकि आप विद्वान् थे इसीसे आप अपनी प्रत्येक धार्मिक क्रियाको विवेक श्रद्धा और आदरके साथ सम्पन्न करते थे। आप लगातार ४० वर्ष तक दिन में एक बार ही भोजन किया करते थे, और जहां तक होता व्रती त्यागी संयमी पुरुषोंको प्रायः स्वयं भोजन कराकर भोजन किया करते थे। आप प्रकृति से उदार होनेके

कारण प्राप्त हुए दानादि के शुभ अवसरों को व्यर्थ नहीं जाने देते थे। आपकी धर्मपत्नी भी आपके ही समान पतिव्रता, साध्वी, गुणग्राहणी एवं धर्मनिष्ठा थीं।

इनके सिर्फ एक ही पुत्र हुआ जिसका नाम बा० चन्द्रकुमार रक्खा गया। अन्य भाइयोंके कोई संतान नहीं थी।

बा० चन्द्रकुमार जी भी अपने पिताके समान ही सर्वगुण सम्पन्न थे। और इनकी धर्मपत्नी भी बड़ी ही आज्ञाकारिणी, पतिभक्ता और साध्वी थी। बा० चन्द्रकुमारजीके दो पुत्र उत्पन्न हुए एक—बा० देवकुमार और दूसरे बा० धर्मकुमार।

बा० देवकुमारजीकी सेवाओंसे अधिकांशतया जैनसमाज परिचित है। आप जैनसमाजके प्रसिद्ध धर्मनिष्ठ परोकारी सज्जन थे। आपका जन्म संवत् १९३३ के चैत्र मासके शुक्लपक्षमें हुआ था आप अपने पिताके अनुरूप ही धर्मात्मा, उदार और कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति थे। सहृदय और दयालू थे। आपके हृदय में जैनधर्मके प्रति विशेष अनुराग था और उसके प्रचारकी उत्कट भावना आपकी नस नस में भरी हुई थी। आपने अपने ३१ वर्ष के अल्प जीवनकाल में जो सेवा-कार्य किये हैं वे समाज से छिपे हुए नहीं हैं। आपने इस थोड़े से समय में ही जैन समाज को जागृत करने का प्रयत्न किया है और उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक विद्याका जो कुछ प्रचार-कार्य किया है वह निस्सन्देह प्रशंसनीय ही नहीं किन्तु अनुकरणीय भी है। आप में विद्यानुराग और जैन साहित्यके संरक्षण, प्रकाशन और उसके प्रचारकी अनुपम भावना थी—आप चाहते थे कि दिगम्बर जैन

साहित्य के जो अपूर्व ग्रन्थ ग्रन्थभण्डारों में दीमक व कीटकादि के भक्ष्य हो रहे हैं उनकी समुचित व्यवस्था कर एक ऐसी सुरक्षित जगह में रक्खे जायं, जहाँ से वे विद्वानोंको सहज ही प्राप्त हो सकें और उनके विषयमें पर्याप्त अन्वेषणादि कार्य भी सम्पन्न किया जा सके। संवत् १९६४ के श्रावण मास में आपने अपनी मृत्युसे कुछ समय पहले जो अंतिम उद्‌गार व्यक्त किये थे, और जिनमें शास्त्रों, मंदिरों और शिलालेखों आदि के संग्रह एवं संरक्षणकी अपनी अभिलाषा व्यक्त की थी, और उसे दैववशात् पूरा न कर सकने का जो खेद व्यक्त किया था। साथ ही समाजके नेताओंसे उसके संरक्षणकी मार्मिक अपील भी की थी। उससे पाठक उक्त बाबू साहब की प्राचीन साहित्योद्धार संबंधी आंतरिक भावनाका कितना ही परिचय पा सकते हैं। उनके वे अन्तिम उद्‌गार इस प्रकार हैं :—

"आप सब भाइयों से और विशेषतया जैन समाजके नेताओंसे मेरी अंतिम प्रार्थना यही है कि प्राचीन शास्त्रों और मंदिरों और शिलालेखों की शीघ्रतर रक्षा होनी चाहिये; क्योंकि इन्हीं से संसार में जैनधर्म के महत्व का अस्तित्व रहेगा। मैं तो इस ही चिंता में था, किंतु अचानक काल आकर मुझे लिये जा रहा है। मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक इस कार्यको पूरा न कर दूंगा तब तक ब्रह्मचर्यका पालन करूंगा परंतु बड़े शोक की बात है कि अपने अभाग्योदय से मुझे इस परम पवित्र कार्यके पूर्ण करनेका पुण्य प्राप्त नहीं हुआ। अब आपही लोग इस पवित्र कार्यके स्तंभ स्वरूप हैं। इसलिये इस परमावश्यक

कार्यका सम्पादन करना आप सबका परम कर्तव्य है।"

इसी भावना को स्थायी रूपसे कार्य में परिणत करनेके लिये आपने अन्त समय में एक लाख रुपये का 'प्रहाप' नाम का एक गाँव दान किया, और आरा में 'जैन सिद्धान्त भवन' की स्थापना की जो अब तक बराबर अच्छी तरह से साहित्य-सेवा का कार्य कर रहा है। यह भवन अपनी खास विशेषता रखता है। ग्रंथों के संग्रह और उनकी व्यवस्थाका भी समुचित प्रबन्ध है। भवन से "जैन-सिद्धान्त-भास्कर" नामका एक त्रैमासिक पत्र भी निकलता है, और 'मुनिसुव्रत काव्य' आदि दूसरे साहित्यिक ग्रंथोंके प्रकाशनादिका भी कार्य होता है। भवन के अध्यक्ष विद्याभूषण, पं० के० भुजबलीजी शास्त्री, भवनका कार्य बड़ी तत्परता और लगनके साथ करते हैं।

बा० देवकुमारजी के लघुभ्राता बा० धर्मकुमारजी थे, जो अपने बड़े भाईके समान ही होनहार विद्वान्, रूपवान्, गुणज्ञ तथा उदार विचारके थे। चन्दाबाईजीका पाणिग्रहण आपके ही साथ हुआ था। विवाह के समय आपकी उम्र १८ वर्ष की थी और एफ. ए. पास करके बी. ए. में पढ़ने गए हुए थे। इस सम्बन्धके कारण चन्दाबाईजीको पीहरकी अपेक्षा कौटुम्बिक-सुख और सम्पत्ति कहीं अधिक प्राप्त हुई थी। आपके माता-पिता इस शुभ सम्बन्धको करके बहुत ही प्रसन्न हुए थे; क्योंकि सुयोग्य वर, सम्पन्न घर तथा ख्याति प्राप्त विशाल कुटुम्ब का मिलना बड़ी कठिनता से होता है। परन्तु ये सब सुख पुण्यात्माओं को सहज ही में प्राप्त हो जाते हैं।

पतिवियोग और उदासीनता

चन्दाबाईजीका विवाह हुए अभी एक वर्ष ही हो पाया था कि उनके सामने अचानक ही एक भारी विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा, जिसका यत्किंचित् दिग्दर्शन यहाँ कराया जाता है। गृह-जीवनका सुख क्या होता है? इसका चरितनायिका बाईजीको अभी कुछ भी अनुभव नहीं हो पाया था; क्योंकि वे स्वयं भी इस समय तक अबोध बालिका थीं, किन्तु अकस्मात् इनके भाग्य का सितारा पलट गया और क्रूर काल ने इनके पतिदेव बा० धर्मकुमार जीको सदाके लिये इनसे वियोजित कर दिया—इनका जीवन सर्वस्व इनसे सदा के लिये छिन गया। कर्मकी बड़ी विचित्र गति है। इस दुःखद घटना के पूर्व उक्त बाईजीके लिये जो घर और सम्पदा सुखका कारण बनी हुई थी, वही अब आपको दुःखका कारण प्रतीत होने लगी। आपका सौभाग्य-सुख क्षण-मात्र में दुर्भाग्य में परिणत हो गया। बारह वर्ष की अल्पवय में ही आपको सधवा से विधवा बनना पड़ा। दुःख और संकट की घोर घटा घिर आई। जो आपके प्राणों का एकमात्र आधार था, जिसकी गुणावली सुनकर आप मन ही मन प्रसन्न होती थीं, और जो आपके सर्वसुखों का एवं आशापूर्तिका एकमात्र साधन बना हुआ था—वह आज विधि की विपरीतता से न रह सका।

यह दुःखद समाचार सारे शहर में बिजली की तरह फैल गया, आरा और मथुरा दोनों ही स्थानों में शोक का सागर उमड़ पड़ा। सारा कुटुम्ब बा० धर्मकुमार जी के वियोगजन्य शोक से

विह्वल हो उठा। सारे शहर में इसी बातकी चर्चा होने लगी, जो भी व्यक्ति इस समाचारको सुनता शोक व्यक्त किये बिना न रहता। सब यही कहते कि संसार वैचित्र्य से अनभिज्ञ इस सुकुमार अबला पर महान् विपत्तिका पहाड़ टूट पड़ा है, चन्दाबाईजी पर आई हुई इस घोर विपत्तिको देखकर पाषाण-हृदय मानव भी रो देता था; परन्तु क्रूर हृदय उस दुर्दैवको जरा भी तरस नहीं आया।

संसारके सभी पदार्थ क्षणभंगुर हैं—वे देखते-देखते ही नष्ट होनेवाले हैं और जल के बुदबुदे के समान अनित्य हैं। जीवके आयुकर्मका क्षय हो जाने पर किसकी सामर्थ्य है जो उसे एक क्षणके लिये भी जीवित रख सके। इन्द्र धरणेन्द्रादि की तो बात ही क्या, जिनेन्द्रदेव भी अपनी आयु नहीं बढ़ा सकते।

संसार परिवर्तनशील है और उसमें सुख-दुःख, जीवन-मरण, सम्पत्ति-विपत्ति, इष्टवियोग और अनिष्टसंयोग आदि गाड़ी के चक्र के समान निरन्तर बदलते रहते हैं; 'निशि दिवासी घूमती सर्वत्र विपदा सम्पदा' इस नीति-वाक्यके अनुसार सांसारिक घटनाओं को परिवर्तनशील जानते हुए भी मोही जीव उनके इस परिणमन से अपनेको दुखी अनुभव करता है। पर पदार्थों में आत्मत्व बुद्धि रखना ही दुःख का मूल कारण है। इस मोह-मूलक आत्मबुद्धि द्वारा इष्टवियोग और अनिष्टसंयोग में दुःख का अनुभव होता है और इष्ट के समागम में सुख मानता है तथा स्त्री मित्रादि की अपने से प्रतिकूल प्रवृत्तियों में खेदखिन्न होता रहता है। परन्तु जो सद्दृष्टि हैं—संसार के परिवर्तनशील रहस्य

से परिचित हैं वे इस तरहकी घटनाओंसे कभी नहीं घबड़ाते और न खेदखिन्न ही होते हैं। प्रत्युत इनसे जागरुक होकर आत्महित में सावधान हो जाते हैं। और इसके लिये अपना सर्वस्व लगा देते हैं। इतना ही नहीं, किन्तु सांसारिक उदासीनता और स्व-पर-भेद- विज्ञानसे अपनी आत्मशक्तिके विकासका सुदृढ़ प्रयत्न करते हैं। अस्तु,

पाठक जानते होंगे कि इस महान् विपत्ति से—जीवन का सौभाग्य छिन जाने से—चन्दाबाई जी को महान् कष्ट हुआ होगा और इस समय उनकी दशा बहुत बुरी हो गई होगी। यह ठीक है कि उनका उक्त घटना से दुःखी होना स्वाभाविक है। जब एक साधारण कुटुम्बी के वियोग में विशेष दुःख का अनुभव होता है तब जीवन सर्वस्व के वियोजित होने पर क्या दुःख न हुआ होगा? दुःख अवश्य ही हुआ है; परन्तु उन्होंने ऊपर बताए हुए विवेक से उसे अपने ही शुभाशुभ कर्मोंका विपाक समझकर धैर्य धारण किया और प्राप्त विपत्तिको समभावसे सहन करनेका निश्चय किया। इसके सिवाय, अन्तःकरण में उत्पन्न हुई वैराग्यकी एक रेखाने वियोग जन्य शोकको सहन करनेका उन्हें बल प्रदान किया। और जिसके फलस्वरूप आपने अपने शेष जीवनको परोपकार, विद्याध्ययन और महिलासमाज में शिक्षा प्रचार करने की ओर लगाने का दृढ़ संकल्प किया। साथ ही, आपके जेठ बा० देवकुमार जी ने भी आप के जीवन को आदर्श बनाने के लिये सब प्रकार का सहयोग प्रदान किया, तब आपने सर्व प्रथम विद्याध्ययन करने की ओर अपने चित्तको लगानेका प्रयत्न

किया। और उक्त बाबू साहबने भी पहले विद्याध्ययन करनेके लिये ही प्रेरित किया। फलस्वरूप आपने संस्कृतके पढ़ने की अपनी बचपन की अभिलाषा की पूर्ति करने के लिये संस्कृत का लिखना पढ़ना शुरु कर दिया। अब आप बारी बारी से ससुराल और पीहर एक एक वर्ष रहने लगीं। इस बीच में आपने दोनों ही कुटुम्बियोंकी अनपढ़ एवं अशिक्षित स्त्रियोंको हिन्दी में लिखने पढ़ने का साधारण अभ्यास कराया। इस कार्यको आपने केवल अपने कुटुम्ब तक ही सीमित नहीं रक्खा; किन्तु अपने पड़ौस में रहने वाली स्त्रियोंको भी लिखाया पढ़ाया, और दस्त-कारी का, सीना-पीरोने का तथा कसीदे की कढ़ाई आदि का भी अभ्यास कराया। विद्याध्ययन, परोपकार एवं सेवा-कार्य की भावनाके कारण आपको कुटुम्बीजन और समाजके सभी लोग बड़े आदर एवं प्रेमकी दृष्टि से देखने लगे। दूसरोंको पढ़ाने लिखाने और स्वयं अभ्यास करने आदिकी ओर ज्यों ज्यों आप प्रगति करती जाती थीं त्यों त्यों आपका विद्यानुराग और भी अधिक बढ़ता जाता था और समाज-सेवा की भावना भी बलवती होती जाती थी।

कन्या पाठशाला की स्थापना

बाईजीने निर्दिष्ट आदर्शको सामने रखते हुए सन् १९०७ में आरा में एक कन्या पाठशाला बाबू देवकुमार जी से प्रेरणाकर के स्थापित कराई, और तबसे आप स्वयं उसका नियमपूर्वक संचालन एवं प्रबन्ध करती रहीं, जो अब भी आपके सत्प्रयत्न और यथेष्ट सहयोग से अपना कार्य सुचारु-रूप से कर रही है। इस पाठशाला से आरा स्त्री समाजका विशेष हित हुआ है और हो रहा है। आरा में ऐसी कोई जैन स्त्री बालिका अथवा विधवा बहिन नहीं है जिसने इस पाठशाला में शिक्षा प्राप्त न की हो। यह पाठशाला स्वर्गीय बा० देवकुमार जी के दान द्वारा प्रदत्त की गई रकम से चलती है। इसमें लगभग ६०) मासिक के खर्च होता है।

इसी बीचमें बाईजीने स्वयं धार्मिक ग्रंथोंका अध्ययन किया, और योग्यता की वृद्धि के लिये और दूसरे ग्रंथों का भी अवलोकन कर अपने ज्ञान को बढ़ाने का प्रयत्न किया।

धर्म परिवर्तन

अग्रवालजाति एक सम्पन्न जाति है। इस जाति में दो धर्मोंकी मान्यता पाई जाती है, एक जैनधर्म और दूसरी हिन्दूधर्म की। इन दो विभिन्न धर्मोंकी मान्यता होने पर भी इस जाति के व्यक्तियों में परस्पर प्रेम और रोटी बेटी का संबंध भी होता रहता है। यद्यपि विवाह संबंध अब प्रायः बहुत ही कम होते हैं; परन्तु इससे भी उनके परस्पर व्यवहार में कोई कमी नहीं हुई है। इनमें से बाई जी के माता-पिता तो वैष्णवधर्म को मानने वाले थे और ससुराल वाले जैनधर्मका पालन करते थे। आपने अपने माता-पिता के यहाँ हिन्दूधर्म के रामायण, भगवद्गीता, भागवत् और महाभारत आदि ग्रंथोंका अध्ययन-मनन एवं परिशीलन किया था। और आरा में जैनधर्मके सिद्धांत ग्रंथोंका—छहढाला, द्रव्यसंग्रह, रत्नकरण्डश्रावकाचार, तत्त्वार्थसूत्र; सर्वार्थसिद्धि, पंचाध्यायी और गोम्मटसारादि ग्रंथोंका—अध्ययन एवं मनन किया। और त्यागी-व्रती विद्वानोंसे उनके विशेष-स्थलों को पूछा, तद्विषयक शंकाओं का निरसन किया और सिद्धांत-विषयक चर्चाएँ भी कीं, जिससे आपको जैन सिद्धांत का बहुत कुछ परिज्ञान हो गया। उस परसे आपके चित्त में यह विचार उत्पन्न हुआ कि जैनधर्म ही संसार का सर्व-श्रेष्ठ धर्म है। इसके द्वारा ही आत्मा का पूर्ण विकास हो सकता है। जैनधर्मके जो आचार-विचार-संबंधी नियम हैं वे बड़े ही परिष्कृत एवं जीवनोपयोगी हैं। मेरा कल्याण इस धर्मके द्वारा ही हो सकता है। अतः मुझे इसके द्वारा आत्महित में

प्रवृत्ति करना ही श्रेयस्कर है। और फलस्वरूप आपकी श्रद्धा जैनधर्मके प्रति सुदृढ़ हो गई।

संसारके सभी प्रचलित धर्मों से जैनधर्म अपनी खास विशेषता रखता है। इस धर्मके प्रौढ़ सिद्धांतोंकी महत्ता किसी से छिपी हुई नहीं है। जिन्होंने जैनधर्म-संबंधी दार्शनिक और सैद्धांतिक ग्रंथोंका अध्ययन एवं मनन किया है वे उसके अहिंसा, स्याद्वाद और कर्मसिद्धांत जैसे महासिद्धांतों से भली भांति परिचित हैं—उन्हें उसके बतलाने की जरूरत नहीं है। जैनधर्मके अहिंसातत्त्वकी छाप भारतके सभी धर्मों पर पड़ी है। यह उसी का प्रभाव है जो आज दूसरे धर्मों में भी अहिंसाका स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। परन्तु तब भी उन भारतीय-धर्मोंमें अहिंसाकी वह सूक्ष्म परिभाषा नहीं पाई जाती जो जैन ग्रन्थोंमें बड़े ही सरल शब्दों में निबद्ध की गई है और अहिंसा के क्रमिक विकास का सुन्दर एवं हृदयग्राही वर्णन किया गया है। जैन तीर्थंकरों और जैनाचार्यों ने अहिंसा का केवल उपदेश ही नहीं दिया; किन्तु उन्होंने उसे अपने जीवन में भी उतारा—खुद अहिंसक बने और उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त होने पर फिर दूसरों को उस पर अमल करनेका—उसके द्वारा आत्म-विकासका—सरल एवं गम्भीर उपाय बतलाया। जैनधर्मका यह अहिंसा सिद्धांत कितना उपयोगी और शांतिप्रद है इसे बतलाने की जरूरत नहीं। अहिंसा-प्रेमी सज्जन इसके रहस्यसे भली भांति परिचित हैं। इसी तरह दूसरे सिद्धांत भी अपनी शानी नहीं रखते—वे बेजोड़ हैं—अभेद किले के समान सुदृढ़ हैं और प्रवादियोंके द्वारा सर्वथा अजेय एवं

अखंडित हैं। इन सिद्धान्तों में से जैनियों का स्याद्वाद सिद्धांत बड़ा ही महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है वह हमारे जीवन के व्यवहार में प्रति समय सहायक होता है। यदि इसका आश्रय न लिया जाय तो विभिन्न धर्मों में होनेवाली विषमता दूर नहीं की जा सकती, न उनमें परस्पर समन्वय तथा प्रेम ही स्थापित किया जा सकता है और न हमारे नित्यके व्यवहारिक कार्यों में होनेवाली कटुता ही दूर की जा सकती है। जैनधर्म की यह खास विशेषता है कि उसमें उपासक भी उपास्य या परमात्मा बन जाता है—वह सदा दास ही नहीं बना रहता। इस धर्मके सिद्धान्तोंका प्रकृति (nature) के साथ बहुत कुछ सम्बन्ध है, इसी कारण इसके सिद्धांत बहुत ही उपयोगी और आत्मविकासकी ओर ले जानेवाले हैं। अस्तु, ऐसे बहुमूल्य सिद्धांतों को अंगीकार करके आपने अपना जो हित-साधन किया है और कर रही हैं वह प्रशंसनीय ही नहीं, किन्तु समादरणीय है। आपने केवल अपने को ही जैनधर्म में दीक्षित नहीं किया; किन्तु अपनी दोनों बहनों को—श्रीमती केशरदेवी और श्रीमती व्रजबाला देवी को—भी इसी मार्ग का पथिक बनाया है। इतना ही नहीं, किन्तु आपके प्रयत्न से ही आपके कुटम्बियों में भी जैनधर्मसे अधिक प्रेम हो गया है।

कठिनाई में विद्याभ्यास

हमारी चरितनायिका बाईजी जब १८ वर्षकी उम्र में अपने कुटुम्बियोंके साथ दक्षिणके तीर्थोंकी यात्रा करनेको गई थीं। उस समय से ही आपका विचार संस्कृतभाषाके अभ्यासको और भी अधिक बढ़ानेका हुआ। यात्रा से सानंद घर वापिस लौट आनेके बाद आपने अपनी निश्चित धारणाके अनुसार संस्कृतके पठन-पाठनको और भी अधिक बढानेका प्रयत्न किया।

आरा बिहार प्रांतका एक रमणीय स्थान है। यहाँ पर पर्दे का आम रिवाज है। धनी-मानी सम्पन्न घरोंमें तो इसका बहुत अधिक प्रचार है। पर्देके कारण बाईजीको अपने विद्याभ्यास में बड़ी भारी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा है। परन्तु फिर भी धैर्यपरायणा बाईजीने अपने संस्कृतभाषाके अभ्यासको नहीं छोड़ा, और प्राप्त विघ्न-बाधाओं का दृढ़ता से मुकाबिला करते हुए विद्याकी साधना की, और उसकी उपासनामें अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया। अपना अधिकांश समय तो उसीके अभ्यास एवं चिन्तन में लगाया। फलतः आप इस पुनीत कार्यमें सफल भी हुईं। संस्कृतका कुछ परिज्ञान तो आपने हिंदी में अनुवादित व्याकरणों और कोष (Dictionary) आदि के सहयोग से प्राप्त किया। इसके सिवाय, आरा में जब कभी किसी विद्वान, त्यागी एवं ब्रह्मचारीसे भेंट हो जाती थी, तब बाईजी उन्हें अपना सब पाठ सुना दिया करती थीं और अगला पाठ ले लिया करती थीं और एक दिन में २० से ५० तक श्लोक पढ़ लिया करतीं

थीं और उन्हें याद कर जब मौका मिलता तब सुना दिया करती थीं। आपका क्षयोपशम अच्छा था और बुद्धि एवं प्रतिभा भी अच्छी थी, इसीसे आपको संस्कृतके साधारण अभ्यास में विशेष दिक्कत नहीं हुई, प्रत्युत आपकी ज्ञानपिपासा बराबर उग्र होती गई, यह ज्ञान पिपासा जब कभी अपने तीव्र वेग में समुदित होती तब आप उसकी पूर्तिका उपाय सोचतीं, परन्तु जब उस उपाय से अपने अभिलषित कार्यकी पूर्ति का यहाँ अन्य कोई साधन न देखतीं तब निराश होकर अंत में आपने पीहर (माता-पिता के पास) जाना ही निश्चित किया, और वहाँ जाकर संस्कृतका अभ्यास करना प्रारम्भ किया और थोड़े ही समय में काशीकी 'पंडितपरीक्षा' में उत्तीर्णता प्राप्त की, तथा धीरे-धीरे व्याकरण की 'मध्यमा' परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त की। सिद्धांतकौमुदी, मुक्तावली आदि उच्चकोटिके अनेक ग्रन्थोंका अध्ययन तथा मनन किया, फलस्वरूप आपकी प्रतिभा और भी चमक उठी।

बा० देवकुमारजीकी यह प्रबल इच्छा थी कि मेरे लघु भ्राताकी धर्मपत्नी श्रीमती चन्दाबाईजी एक विदुषी महिला बने— वह व्याकरण, साहित्य और सिद्धांतग्रंथों की मर्मज्ञा, सुयोग्य लेखिका और समाज-सेविका बने, आपने अपनी इस इच्छाको मूर्त रूप देनेके लिये अनेक प्रयत्न किये, और यथा शक्ति साधन भी जुटाए। और समय समय पर धर्मोपदेश भी दिये—वस्तु स्थिति और आदर्शजीवनका महत्त्व और उसकी उपयोगिताको बतलाया। आपके उपदेशोंका बाईजी पर बहुत अधिक प्रभाव

हुआ और यह उसीका परिणाम है जो पं० चन्दाबाई जी अपने जीवनको आदर्श बनाने में बहुत कुछ सफल हो सकी हैं, और आप अपनी निश्चित धारणाके अनुसार उसे मूर्तरूप दे सकी हैं। आपने विद्याप्राप्त करके जैन महिलाओं में एक उच्चादर्श प्राप्त किया है, आप केवल विदुषी ही नहीं बनीं, प्रत्युत आपने कितनी ही देवियों और बालिकाओंको भी तद्रूप विदुषी बनानेका ठोस कार्य किया है जो चिरकाल तक आपकी विद्योपासना, स्वार्थ-त्याग, परोपकार और सदाचारकी महत्ताको कायम रखेगा। मानव जीवन का यह सब से बड़ा साधन है, इसके बिना उसका जीवन निरर्थक है। इन सब कार्यों को सम्पन्न कर आपने बा० देवकुमारजीकी विद्याप्रचार सम्बन्धी उस आंतरिक इच्छाको पल्लवित किया है जो उन्होंने सदुपदेशोंके रूप में आपको प्रदान की थी।

यों तो आप छोटी सी उम्र में ही महिलाओंके सुधारके लिये प्रयत्नशीला थीं, परन्तु उसे अभी तक आप व्यापक रूप न दे सकी थीं— उसका मात्र प्रचार आरा तक ही सीमित था, किन्तु अब उसका दायरा विशाल हो गया। सन् १९०७ में जब लखनऊ निवासिनी श्रीमती पार्वतीबाईजी सम्मेदशिखरकी यात्रा करती हुई आरा पधारीं, तब आपने स्त्री सभामें एक व्याख्यान दिया,—उसमें स्त्रियों को धर्म साधन के साथ साथ शिक्षा प्रचार में विशेष योग देने की प्रेरणा की; चूंकि आप थकीं हुई थीं, इसलिये थोड़ी देर ही बोलकर बैठ गईं, और बैठते समय चन्दाबाईजीसे बोलनेकी प्रेरणाकी, और कहा कि आप भी

कुछ जरूर बोलें। तब चन्दाबाईजीने उठकर 'स्त्रियोंके कर्तव्य' पर एक अच्छा व्याख्यान दिया; आपका यह भाषण उपस्थित स्त्रीसमाजको बहुत ही पसंद आया। यद्यपि आपका व्याख्यान देनेका यह पहला ही अवसर था, परन्तु फिर भी आपने निर्भयता के साथ बोलनेका प्रयत्न किया। इस समाचारको जब बाबू देवकुमारजीने और उनके मामा बा० बच्चूलालजीने सुना तो आप दोनों ही सज्जनों ने यह निश्चय किया कि बहूको और भी अधिक अभ्यास कराना चाहिये; क्योंकि उसकी प्रतिभा अच्छी मालूम होती है, अतः उसकी योग्यताका और भी अधिक विकास करना चाहिये। अब पार्वतीबाईजी तो अपने घर चली गईं। परन्तु बाई जी का पठन-पाठनादि कार्य भारी उत्साह एवं लगन के साथ सम्पन्न होने लगा और विद्याभ्यासकी अपनी बाल्य कालीन सुरुचिको कार्य रूप में परिणत कर दिया गया।

पानीपत की पंचकल्याणक-प्रतिष्ठा

इसी वर्ष पानीपत (पंजाब) में एक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई जिसमें भारत के विभिन्न प्रांतों से विशाल जनसमूह एकत्रित हुआ था। इस प्रतिष्ठाके महान् अवसरपर स्त्रीसमाजको प्रोत्तेजन देनेके लिये एक महती स्त्री सभा की गई, सभा में भाग लेनेके लिये दूर दूर से विदुषी महिलाएं पधारी थीं, पं० चन्दाबाई जी भी आग्रहवश इस प्रतिष्ठोत्सव में सम्मिलित हुईं थीं। इस प्रतिष्ठा में सभी कार्य अच्छी तरह से सम्पन्न हुए थे, महिलाओं की विशाल सभामें श्रीमती गंगाबाई जी मुरादाबादने अपना संक्षिप्त भाषण प्रारम्भ किया और थोड़ी देर बोलकर आपने कहा कि मैं अधिक नहीं बोल सकती हूँ। यहाँ हजारों विदुषी महिलाएँ उपस्थित हैं उनमें से जो बहनें अपना व्याख्यान देना चाहें वे खुशी से दे सकती हैं। इस बात को सुनकर पं० चन्दाबाई जी ने 'स्त्रियों के कर्तव्य' पर अपना भाषण देना प्रारम्भ किया। आपने अपना भाषण सुललित स्वरमें ओजपूर्ण भाषामें दिया, उपस्थित जनता ने आप के भाषण को बड़ी ही शांति के साथ सुना, और अपनी प्रसन्नता व्यक्त की; क्योंकि उस समय तक जैन समाज में स्त्रीशिक्षाका इतना अधिक प्रचार नहीं था, इसीलिये बाईजीके सारगर्भित धार्मिक उपदेशको सुनकर महिलाएँ चकित हो गईं, और सब पं० चन्दाबाईजीके डेरे पर बारी बारी से मिलनेके लिये आने लगीं। बाई जी उस समय एक छोटी सी रावटी में उतर गई थीं, आपने अपना परिचय किसीको भी नहीं दिया था, किन्तु

अब क्या था स्वयमेव ही लोग आप से परिचित हो गए और आकर आग्रह करने लगे कि आप बड़े कैम्प में चलिये, बहुत कुछ मना करने के बावजूद भी, दिल्ली निवासी ला० जग्गीमलजी जौंहरी आदि सज्जन आपको बड़े डेरे में ले गये। उस समय आपसे सामाजिक विषयों पर विभिन्न पुरुषों से अनेक चर्चाएँ हुई, और आपके सामाजिक विचारोंको सुनकर सभीको बड़ी प्रसन्नता हुई। इसी समय से ही आपके सार्वजनिक-सेवा-कार्य का प्रारम्भ होता है, अब आप सामाजिक कार्यों में विशेष दिलचस्पी लेने लगीं और उसका यत्किंचित् कार्य भार भी ग्रहण करना शुरु कर दिया।

सन् १९०८ ईस्वी में जब कि आप सकुटुम्ब दक्षिणके तीर्थोंकी यात्रा करने गई थीं, तब वहाँ के प्रत्येक नगरमें, पुरुषोंमें बा० देवकुमारजीका और स्त्रियों में आपका एक एक भाषण होता था, जिसका उल्था कनड़ी-भाषा में करके वर्णी नेमिसागर जी सबको सुनाते थे। इसी तीर्थ-यात्रा में महिलारत्न श्रीमती मगनबाईजी जे. पी. बम्बई और श्रीमती कंकूबाईजी सोलापुर तथा ललिताबाईजी बम्बई से भी आप का परिचय हो गया। इन बहनों से आपका केवल परिचय एवं मित्रता ही नहीं हुई, किन्तु परस्पर में आपका एक सहोदरा बहनके समान संबंध हो गया, जो अब तक वैसा ही बना हुआ है। श्रीमती पं० मगनबाई जी ने आप को विद्या और प्रतिभा सम्पन्न देखकर, परोपकार, समाज-सेवा, शिक्षा-प्रचार आदि कार्यों में प्रवृत्ति करते हुए जीवन यापन करने की प्रेरणा की; जो आपका पहले

से ही लक्ष्य विन्दु निश्चित हो गया था, और जिसमें यत्किंचित् भाग लेना भी शुरु कर दिया था। अब पं० मगनबाई जी आप से अपने प्रत्येक सामाजिक तथा धार्मिक कार्यों में बराबर सम्मति लेती रहीं। एकबार आपने बम्बई बुलाकर अपने श्राविकाश्रमकी व्यवस्था आदिका निरीक्षण भी कराया; और सम्मति ली पश्चात् पं० मगनबाईजी अपने जीवन पर्यंत प्रत्येक कार्यमें आपसे सहयोग या सम्मति लेतीं रही, इसी तरह आप भी सामाजिक तथा धार्मिक कार्योंमें मगनबाईजी की अनुमति लेती रहीं।

महिलासभाकी स्थापना और उसका संचालन।

सन् १६०६ में जबकि श्रीसम्मेदशिखर पर सिवनी निवासी सेठ पूरणसाहजीने पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराई थी, तब उक्त स्थान पर एक वृहत् मेला हुआ था—इस प्रतिष्ठोत्सवमें विविध प्रांतोंके प्रतिष्ठित श्रीमान् और धीमान् सज्जन सकुटुम्ब पधारे थे। बम्बईसे सेठ माणिकचन्दजी जे. पी. और श्रीमती मगनबाईजी भी पधारी थीं। आरा से पं० चन्दाबाईजी और अनूपमालादेवी अपने चिं० पुत्र बाबू निर्मलकुमार और बाबू चक्रेश्वरकुमार तथा अन्य कुटुम्बी जनोंके साथ उक्त प्रतिष्ठामें सम्मिलित हुईं थी। इसी समय रा० ब० सर सेठ हुकुमचंदजी इन्दौरके सभापतित्वमें महासभाका अधिवेशन भी सम्पन्न हुआ। ऐसे सुयोग्य अवसर पर मगनबाईजीको एक 'दि० जैन महिला सभा' के स्थापित करनेकी आवश्यकता महसूस हुई साथ ही यह विचारभी उत्पन्न हुआ कि बिना किसी सभा या सोसाइटीके कोई भी समाज संगठित और समुन्नत नहीं हुआ है। और न संगठित शक्तिके बिना उसमें जीवन ही आसकता है, और न अपनी प्रगति एवं समुत्थानमें-समर्थही हो सकता है। अतः जैन-समाजकी महिलाओंको संगठित करने, उनमें जीवन फूंकने, अशिक्षाको हटाकर शिक्षाका प्रचार करने, अनावश्यक रूढ़ियोंकी सत्ता मिटाने, बल और साहसका संचार करने और स्त्री समाजमें क्रांति लानेके लिये एक महिलासमाजकी नितान्त आवश्यकता है; बिना महिलासभाकी

स्थापनाके स्त्रीसमाजका उत्थान नहीं होसकता। इन्हीं सब विचारोंको कार्यमें परिणत करनेके लिये गिरिराजकी पवित्र पुण्यमयी भूमिपर महिलासभाकी स्थापनाकी योजना कीगई और तदनुसार बहुत कुछ ऊहापोहके बाद 'भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला-परिषद्' *की स्थापना, विदुषी महिलाओंके द्वारा बड़े भारी परिश्रमके* साथ कर दी गई। जो आजतक अपना कार्य बराबर संचालन कर रही है। महिला-परिषद्ने पच्चीस तीस वर्षके अपने जीवनमें जो कुछ भी समाज-सेवाकी है वह किसीसे छिपी हुई नहीं है। जैन महिलासमाजमें आज जो कुछ भी जागृति दिखलाई देती है यह सब उसीका फल है। महिला-परिषदकी मंत्रिणी महिलारत्न मगनबाईजी जे. पी. बम्बई बनाई गईं। आपने अपने मंत्रित्व-कालमें महिला परिषद्को ऊँचा उठाने और उसकी प्रगति करनेमें यथेष्ट सहायता एवं सहयोग प्रदान किया। आपके बाद परिषद्के मंत्रित्वका भार महिलारत्न पं० ललिताबाईजीने उठाया और उसे समुन्नति करनेका अच्छा उद्योग किया, और वे अपने इस प्रयत्नमें बहुत कुछ सफल भी हुईं जान पड़ती हैं। अस्तु,

महिलापरिषद्‌की वर्तमान मंत्रिणी

श्रीमती महिलारत्न ललिताबाईजीके बाद महिलापरिषद्‌के मंत्रित्वका भार श्रीमती पं० व्रजबालादेवीजीको सौंपा गया। जो बड़े भारी उत्साहके साथ उसे सम्पन्न कर रही हैं। आप पंडिता चन्दाबाईजीकी लघु भगिनी हैं। हिन्दी, संस्कृत और इङ्गलिशकी अच्छी जानकार हैं। आपने अंग्रेजीमें एफ. ए. की परीक्षा पासकी है। आपको भी १८ वर्षकी अल्पवयमें ही एक कन्यामात्रको जन्म देकर वैधव्यका महाकष्ट उठाना पड़ा है जिसे आप साहस-पूर्वक सह रही हैं और अपने जीवनको समाज-सेवाके पुनीत कार्यमें लगा रही हैं। जबसे आपको वैधव्यका कष्ट उठाना पड़ा तभीसे पंडिता चन्दाबाईजी आपको बराबर शिक्षा देती रहीं और जीवनको आदर्श बनाने तथा अपने पास रहनेकी प्रेरणा करती रहीं, फलस्वरूप श्रीमती पं० व्रजबालादेवीने भी अपनी ज्येष्ठ बहिनके समान ही अपना जीवन जैनधर्मको पालन करते हुए व्यतीत करना उचित समझा और माता-पिता तथा स्वजन-परिजनोंके भारी अनुरोधको टालकर और तद्विषयक मोहको घटाकर अपनी धर्मात्मा बड़ी बहिनके पास ही आराममें रहने लगीं। आपने अपनी इकलौती पुत्री चिं० सुशीलादेवीका विवाह करके सब ओरसे निश्चिन्त होकर अब आप आत्मसाधनके साथ साथ समाज-सेवाके पुनीत कार्यमें संलग्न रह कर अपना जीवन बिता रही हैं। सामा-यिक, स्वाध्याय, जिनपूजा और पर्वोंमें उपवासादि श्राविकाके योग्य नित्य षट्कर्मोंका पालन कर रही है। आप सादगीको



श्रीमती प० ब्रजबालादेवीजी, आरा ।

खूब पसन्द करती हैं। सादाजीवन सुख-शान्तिका जीवन है, परन्तु असादगीसे रहना असंतोष और दुःखका कारण है। सादगीको वर्तनेवाले नरनारी ही अपने जीवनको सफल बना सकते हैं और अपना आदर्श व्यक्तित्व बनानेके साथ साथ पतित-समाज और गुलामदेशको आजाद कराने एवं उसे ऊँचा उठानेमें समर्थ हो सकते हैं। आपका विचार है कि प्रत्येक भारतीय स्त्री-पुरुषका, जीवन सादा और अहिंसक होना चाहिये। साथ ही रहन, सहन, वेष, भूषा और आहारपानादिमें भी सादगी होनी चाहिये। विश्व-बन्धुत्व और विश्वप्रेमकी भावनाको भाते हुए देश-धर्म तथा समाजकी सेवामें—उनके उत्थानादिमें इस जीवनको लगा देना प्रत्येक स्त्री-पुरुषका कर्तव्य होना चाहिये। यदि भारतवासी इस तरहसे अपने कर्तव्य पालनकी ओर अग्रसर हो जांय तो भारत गुलामीकी दासतासे मुक्त होकर अपनी खोई स्वाधीनता—स्वतंत्रताको शीघ्र ही प्राप्तकर सकता है।

पंडिता चन्दाबाईजीको अब एकान्तवास अधिक पसंद है; क्योंकि वह आत्म-साधनका अच्छा निमित्त है। दैनिक क्रियाओंके साथ स्वाध्याय और तीर्थबंदनादिमें आपका अब अधिक समय व्यतीत होता है। इसी कारण आपके प्रायः सभी कार्य आपकी लघुभगिनीही करती हैं। बाला-विश्रामकी सहायक-सँचालिका भी आपही हैं और आप उसकी उन्नतिमें अपना पूरा पूरा सहयोग देती रहती हैं और बड़ी ही लगन एवं उत्साहके साथ उसके कार्यका संचालन करती हैं। विश्रामके कार्योंके अतिरिक्त 'भारतवर्षीय दि० जैन महिला-परिषद्' का भी कुल कार्य आप संभालती हैं,

ऐसी योग्य सेवाको अपना कर्तव्य समझनेवाली बहिनको पाकर पंडिता चन्दाबाईजी सब ओरसे निश्चिन्त हैं—उन्हें बाल-विश्राम आदिके कार्योंकी कोई चिन्ता नहीं है। इसीलिये अब आप अपने जीवनको विशेष रूपसे समयसारादि अध्यात्म ग्रंथोंके पठन-पाठन,मनन, परिशीलन और आत्मचिन्तन में लगा रही हैं।

जैनमहिलादर्शका सम्पादन

सन् १९२१ में जबकि लखनऊमें 'महिलापरिषद्' का अधिवेशन हुआ और वहाँ महिलारत्न श्रीमती मगनबाईजी आदि प्रतिष्ठित महिलाएँ एकत्रित हुई थीं। उस समय जैन-स्त्रीसमाजमें एक मासिक पत्रके निकालनेकी स्कीम पेशकी गई और उसकी आवश्यकताका बड़ेही जोरदार शब्दों में समर्थन किया गया। तब उक्त परिषद्में निम्न आशयका एक प्रस्ताव भी पास किया गया कि—स्त्रीसमाजमें प्रगति करने, उसे ऊँचा उठाने तथा उसमें संगठन, प्रेम और शिक्षाके प्रचारकी भारी कमीको महसूस करते हुए यह परिषद् प्रस्ताव करती है, कि 'जैन महिलादर्श' नामका एक मासिक पत्र निकाला जाय, जिसमें स्त्रियोंके ही लेख रहें, और वे लेख लिखना सीख सकें, उनमें धार्मिक विचारोंकी प्रौढ़ता आसकें, कुरीतियोंके निवारण करनेमें समर्थ हो सकें और अपनी बिखरी हुई शक्तियोंको संगठित कर सकें। और अबला एवं कायरपनके स्वभावका परित्यागकर आप स्वयं अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हो सकें, उनमें बल और साहसका संचार हो सकें और वे अपनेको सब प्रकारसे समर्थ, गृहकार्योंमें दक्ष, विदुषी, पतिव्रता और वीराङ्गना बना सकें। इस प्रस्तावके सर्व सम्मतिसे पास होने पर 'जैनमहिलादर्श' के सम्पादनके भारकी चिन्ता हुई। और उसके लिये श्रीमती मगनबाईजीने श्रीमती पंडिता चन्दाबाईजी आराका नाम प्रस्तावित किया, और दूसरी प्रतिष्ठित बहनोंने इसका समर्थन अनुमोदनादि कर उक्त बाईजीसे

महिलादर्शके सम्पादन भारको ग्रहण करनेका सानुरोध निवेदन किया। तब आपने अपनी लघुता व्यक्त करते हुए प्रतिष्ठित महिलाओंके आग्रह और प्रेरणाको न टाल कर 'महिलादर्श' का सम्पादन भार सहर्ष स्वीकार किया। तबसे बराबर इस पत्रका सम्पादन करते हुए आपको २१ वर्ष हो गए हैं। इतने लम्बे अर्सेमें महिलादर्शने महिला-समाजकी क्या कुछ कम सेवाकी है? महिला समाजमें जागृति, शिक्षा, लेखन-कला और सामाजिक सुधार आदिका जो कुछ भी प्रचार दीख रहा है उसका बहुत कुछ श्रेय महिलादर्शको प्राप्त है। यह उसके पाठक-पाठिकाओंसे छिपा हुआ नहीं है। और न उसे प्रकट करनेकी यहाँ आवश्यकता ही प्रतीत होती है। २१ वर्षके सम्पादन कालमें 'दर्श' के सिर्फ ३-४ ही युग्मांक रूपमें निकालनेका अवसर आया है। बाकी सभी अंक प्रतिमास पर प्रकाशित हुए हैं और हो रहे हैं। पत्रमें सम्पादकीय टिप्पणियाँ बड़ी ही शिक्षाप्रद लिखी जाती हैं और उनमें धार्मिक तथा लौकिक सभी विषयों पर प्रकाश डाला जाता है। और पत्रमें हमेशा अन्य लेखोंके अतिरिक्त शिक्षाप्रद गल्प या कहानियां, कविता-मंदिर द्वारा कविताओंका संकलन और पाक विज्ञान आदि की चुनी हुई बातें भी रहती हैं, जिससे प्रायः सभी पाठिकाओंके लिये उपयोगी सामग्री मिल जाती है। यह सब होते हुए भी महिलादर्शने अपने उद्देश्यमें क्या कुछ सफलता प्राप्तकी है, यह सब पाठकों पर ही छोड़ा जाता है—वे इसका स्वतः निर्णय कर सकते हैं।

महिलादर्शके प्रकाशनादिका समस्त भार श्री मूलचन्द किसन-

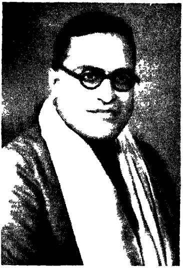
दासजी कापड़िया, सूरत पर निर्भर हैं। आप उसे बराबर व्यवस्थित रूपसे समय पर अपने ही प्रेसमें छपवाकर प्रकाशित करते हैं। आपकी यह सेवा निस्सन्देह प्रशंसाके योग्य है। आशा है कापड़ियाजी इसी तरह 'दर्शके' प्रकाशक रहकर उसके प्रकाशनमें समुचित सुधार कर उसे और भी ऊँचा उठानेमें सहयोग प्रदान करेंगे।

बालाविश्रामकी स्थापनासे पूर्व बाईजीके विचार

स्त्रियों की अज्ञानावस्थासे होने वाले बुरे परिणामोंको देखकर आपके हृदय में बड़ी चोट लगती है। आप भारतीय स्त्रियोंके इस पतनसे केवल खेदित ही नहीं होती; किन्तु अपनी शक्तिके अनुसार स्त्री-समाजकी गिरी हुई इस हालतको सुधारनेका भी प्रयत्न करती रहती हैं। समाजमें अधिकतर विधवा बहनें ही दुःखी हैं, जो अशुभकर्मोदयसे सांसारिक सुखोंसे वंचित हो गई हैं— जिनके भावी जीवनका कोई विशेष आधार नहीं रहा है—अपने कुटुम्बियोंके द्वारा तिरस्कृत होकर घोर संकटोंका सामना करती हुई जैसे तैसे अपना जीवन यापन करती हैं। सदैव कष्टोंका भार उठाते हुएभी अपने कौटुम्बिक परिजनों द्वारा सताई जाती हैं— उनके मर्म-भेदी कटुवचनोंको सुनते और प्रताड़ना सहते हुए जिनका हृदय जर्जरित होगया है—जिन्हें स्वप्नमें भी सुखका अनुभव नहीं हो पाता है। उनकी ऐसी दयनीय दशा देखकर इनका हृदय दयार्द्र हो जाता है और यह भावनाएँ उदित होती हैं कि भगवन् मुझे वह शक्ति प्राप्त हो जिससे मैं इन विधवा बहनोंका कुछ उद्धार कर सकूं—इन्हें सुयोग्य मार्ग पर लगाकर सुख और शान्तिका अनुभव करा सकूं। आपने यह अनुभव किया कि स्त्री-समाज के अधःपतनका मुख्यकारण अशिक्षा है। अतः उन्हें साक्षर करके और शिक्षा द्वारा उनके आत्म-बलको बढ़ाना है— संगठन और वात्सल्य का पाठ पढ़ाना है—भगवान् महावीरके

द्वारा बतलाए हुए मार्गका अनुसरण कर संसारके दुःखोंसे छूटना है। इसी भावना से प्रेरित होकर आपने 'बाला-विश्राम' नामकी संस्थाको जन्म दिया है। इतना ही नहीं; किन्तु स्त्री समाजके समुत्थानके लिये ही आपने अपने कौटुम्बिक सुखका परित्याग किया। आप कहा करती हैं, कि शिक्षा प्रचार द्वारा विवेकके जाग्रत होनेसे स्त्री समाजका वह विलीन हुआ आत्मगौरव पुनः प्राप्त किया जा सकता है। और वे अपनी आत्म रक्षा करनेमें भी समर्थ हो सकतीं हैं—बिना ज्ञानके आत्म-शक्तिका विकसित होना कठिन है। अतः जिस शिक्षाके द्वारा आत्मा अपने स्वरूपका लाभ करनेमें समर्थ हो सके, जो चित्तकी शुद्धि करती हो, जो बल, साहस एवं धैर्यको प्रदान करती हो, जो आजीविकाका साधन प्राप्त करा सके और पराधीनतासे छुटकारा दिला सके ऐसी शिक्षाका प्रचार करना ही श्रेयस्कर है। आज स्त्री-समाज अपने स्वत्वको भूला हुआ है—उसे अपने कर्त्तव्यका पूरा पूरा ज्ञान नहीं है। इसी कारण उसे आगे बढ़नेमें भय और संकोच मालूम होता है। अतः ये सब कमजोरियाँ शिक्षासे ही दूरकी जा सकती हैं। स्त्री, समाजके शिक्षित होने पर वे फिर रूढ़ियोंकी गुलाम भी न रह सकेगीं। किन्तु अपना प्रत्येक क्रियाएँ विवेक पूर्वक करते हुए अपने जीवनको सुखमय बनानेकी ओर अग्रसर हो सकेंगी। इन्हीं सब विचारोंके कारण आपको आराकी उस छोटी सी पाठशालाके कार्यसे संतोष नहीं होना था। अतः आपने अपने उक्त विचारोंको कार्य रूपमें परिणत करनेके लिये बाला-विश्राम जैसी संस्थाको कायम करनेका निश्चय किया।

सन् १९२१ में ही जब महिलारत्न श्रीमती मगनबाईजी अपनी पुत्री सौभाग्यवती केशरबाई आदिको लेकर सम्मेदशिखरकी यात्रार्थ जाती हुई बीचमें आरा उतरीं, उस समय आपके साथ पं० चन्दाबाईजीका इस प्रान्तमें स्त्रियों, बालिकाओं और विधवाओंमें शिक्षा प्रचार करने तथा धार्मिक संस्कार करनेके लिये एक श्राविका-श्रमके खोलने के विषयमें कितना ही विचार-विनिमय हुआ। उस समय बाईजीका विचार था कि राजगृही क्षेत्रपर ही श्राविका-श्रमकी स्थापना की जाय। परन्तु आपके इन विचारोंका मगनबाईजीने भारी विरोध किया। और साथ ही यह अनुरोध भी किया कि श्राविका-श्रमकी स्थापना आरा जैसे प्रसिद्ध नगरमें ही होनी चाहिये। बाईजी इनलोगोंके साथ बा० निर्मलकुमारजीको लेकर राजगृही भी गईं और वहाँ आश्रम स्थापित करनेके लिये स्थान आदिका निरीक्षण भी किया। परन्तु वहां आश्रमके स्थापित करनेके विषयमें किसीकी भी सम्मति नहीं हुई। कुछ समय बाद बा० निर्मलकुमारजी और अन्य सभी कुटुम्बियोंके साथ पं० चन्दाबाईजी सम्मेदशिखरकी यात्रार्थ गईं। और वहां सम्मेदशैलपर चढ़कर २३ टोंकोंके दर्शन कर अन्तिम श्री भगवान् पार्श्वनाथकी टोंक पर दर्शन पूजन कर जब लौटने लगे तब चरित्रनायिका बाईजीने सबलोगोंको कुछ न कुछ नियम लेनेकी प्रेरणाकी और नियम भी दिलाए। इनके दिलाये हुए नियमोंको स्वीकार कर बा० निर्मलकुमारजीने कहा कि अब आप भी कुछ प्रतिज्ञा ले लीजिये; और मेरी समझसे वह यह प्रतिज्ञा लेनी चाहिये कि हम एक महीनेमें कहीं न कहीं 'महिलाश्रम' स्थापित कर देंगी। छोटीसी उम्रवाले बालकके यह



श्रीमान् बा० निमलकुमारजी जैन रईस आरा

वचन सुनकर बाईजीको विशेष आनन्द हुआ, और आपने कहा कि तुम्हारा कहना ठीक है परन्तु इतने बड़े कार्यके स्थापित करनेके लिये एक महीनेका समय बहुत ही थोड़ा है। इतने थोड़े समयमें ऐसे महान् कार्यों का संस्थापन नहीं हो सकता। ऐसे कार्यों के संस्थापन और संचालन करनेके लिये अधिक समय, परिश्रम, शक्ति और उदारताकी बड़ी आवश्यकता होती है। अतः हम प्रतिज्ञा करती हैं कि तीन महीनेके अन्दर ही अन्दर 'जैन महिलाश्रम' जहाँ तुमलोगोंकी सम्मति होगी, स्थापित कर देंगी। इस तरह सानन्द यात्राकर सबही घर वापस लौट आए।

तदनंतर आश्रमको स्थापित करनेकी भावना उत्तरोत्तर बलवती होती गई और बहुत कुछ ऊहा-पोहके बाद यह विचार स्थिर हुआ कि आरामें ही उक्त संस्थाकी स्थापना होनी चाहिये। तद-नुसार आरा नगरसे एककोशके फासलेपर 'धनुपुरा'में अपने वगीचेमें ही 'जैन-बाल-विश्राम' का स्थापना कार्य बड़े भारी समारोहके साथ किया गया। इस समय बा० निर्मलकुमार चक्रेश्वरकुमार और इनकी माता श्रीमती अनूपमालादेवीने और बुआजी आदि सभी लोगोंने विश्रामकी स्थापनामें पूर्ण सहयोग दिया। और बुआ श्रीमती नेमसुन्दरबाईजीने बीस हजार रुपयेकी लागतसे एक इमारत छात्राओं के पठन-पाठनकेलिये बनवा दी। और उसी पर पांच हजार लगाकर 'जिनमंदिर' का निर्माण भी करा दिया; जिससे छात्राओंको जिनदर्शन पूजनका लाभ होता रहे। इस मंदिरकी प्रतिष्ठाका कार्य बड़ी धूम धामसे किया गया और अन्तिम तीर्थंकर श्री भगवान् महावीरकी मनोग्यमूर्ति स्थापित की गई।

इस प्रतिष्ठोत्सवमें श्रीमती कंकुबाईजी, व महिलारत्न श्रीमती मगनबाईजी जे. पी. बम्बई भी आईं थीं। आप लोगोंने बाला-विश्रामकी सुव्यवस्था देखकर सन्तोष प्रकट किया और कहा कि संस्थामें ध्रौव्य-फण्ड होना चाहिये, क्योंकि ऐसी संस्थाओंके कार्य संचालनके लिये ध्रौव्य-कोषकी नितान्त आवश्यकता होती है। ध्रौव्य-कोष संचयके बिना संस्थाका स्थायी भविष्य उज्ज्वल नहीं हो सकता और न वह आगे प्रगति करनेमें समर्थ ही हो सकती है। अतः उक्त विश्रामके स्थायित्व संरक्षणकेलिये ध्रौव्य-कोष जरूर ही संकलित होना चाहिये। दूसरी यह बात भी थी, कि अभी तक आश्रमका कुल खर्च श्रीमती पं० चन्दाबाईजी ही अपनी ओर से करती थीं, छात्राओं की संख्या भी इस समय कम थी, इसीसे उक्त बाईजीको आश्रमका कुल खर्च उठानेमें कोई कठिनाई नहीं होती थी। परन्तु छात्राओंकी संख्या वृद्धि होने पर तथा अन्य आवश्यक कार्य होने पर ध्रौव्यकोष के बिना आर्थिक संकटकी समस्या सामने आ सकती थी। संकट काल आने पर तो कितनी ही संस्थाओंको अपनी जीवन-लीला भी समाप्त कर देनी पड़ती है और कितनोंकी स्थिति भी डांवाडोल हो जाती है। ऐसी हालतमें ध्रौव्यकोषसे यथेष्ट लाभ उठाकर संस्थाकी आर्थिक कमीको पूरा किया जा सकता है। इससे संस्थाका जीवन भी खतरेमें नहीं रहता। अतः स्थायित्व संरक्षण आदि बातोंको ध्यानमें रखकर श्रीमती मगनबाईजी और ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीने बाला-विश्रामकेलिये ध्रौव्य कोष संग्रह करनेकी प्रेरणाकी। और प्रतिष्ठामें तपकल्याणके दिन उक्त संस्थाके ध्रौव्यकोष संग्रह करनेके लिये मार्मिक

अपीलकी गई जिसके फल स्वरूप ३८५००) अड़तीस हजार पांच सौ रुपये का चन्दा जमा हो गया—उसमें पन्द्रह हजार रुपये पं० चन्दाबाईजीकी ननद श्रीमती नेमसुन्दरबाईजीने दिये और अठारह हजार रुपये बाईजीके घरसे दिये गये—जिसमें दश हजार बाईजीके नामसे, और आठ हजार बा० निर्मलकुमार चक्रेश्वरकुमारजी व उनकी माता श्रीमती अनूपमालादेवी और उनकी धर्मपत्नियोंके नामसे जमा कराए गए। शेष रुपया उपस्थित जनताने लिखाया। इस तरह इस संस्थाका कार्य बराबर वृद्धि ही करता चला गया और अब इस संस्थाने अपना विशालरूप धारण कर लिया है। बाला-विश्रामसे स्त्रियोंमें शिक्षा प्रचारका बड़ा कार्य हुआ है और हो रहा है। इससे शिक्षा प्राप्त कितनी ही विधवाएँ कन्यापाठशालाओंमें अध्यापनादि कार्य करती हुई अपने जीवनको सानन्द व्यतीत कर रही हैं। समाजमें हिन्दी, संस्कृतकी उच्च धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा देनेवाली ऐसी संस्थाएँ बहुत ही कम हैं, जिनका प्रबन्ध और कार्य संचालन, उत्साह, लगन एवं प्रेमके साथ किया जाता हो। पं० चन्दाबाईजीने बाला-विश्रामको जीवन देकर जैनसमाजका भारी उपकार किया है। आपने केवल संस्थाको जन्म ही नहीं दिया, किन्तु अबतक अपनी जेबसे ६० हजार रुपया लगा दिये हैं। और इस तरह आपने अपना तन-मन-धन और जीवन सभी संस्थाको अर्पण कर समाजकी जो सेवाकी है वह स्त्री-समाजके लिये प्रशंसा ही नहीं किन्तु गौरवकी चीज है। और अन्य महिलाओंके द्वारा अनुकरणीय तथा अभिनन्दनीय है।

तीर्थयात्रा

भारतवर्षमें जैनियोंके कितने ही प्रसिद्ध तीर्थ-क्षेत्र हैं। उनमें कुछ तीर्थ-क्षेत्र अपना खास ऐतिहासिक महत्व रखते हैं। इन प्रमुख तीर्थ-क्षेत्रोंकी यात्रा, दर्शन, पूजन और बंदनादि करनेसे महान् पुण्यका संचय होता है, तथा आत्मा ऐसे पवित्र स्थानोंमें आत्म-कल्याणकी ओर अग्रसर हो जाता है। इतना ही नहीं, किन्तु यदि मन-वचन-कायकी विशुद्धिके साथ बंदनाकी जाय, तो उससे सम्यग्दर्शनादिको भी प्राप्त किया जा सकता है जो संसारोच्छेदनका प्रधान कारण है। हमारी चरित नायिका बाईजीको तीर्थ-यात्रा करनेकी बड़ी ही रुचि है। यात्रा करनेका आपका खास लक्ष्य घरके संकल्प-विकल्पोंसे दूर रहकर, दर्शन-पूजनादिके अनुष्ठान द्वारा आत्म परिणतको निर्मल बनाना है—कषायों और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना है—इसी सदुद्देश्यको लेकर आप प्रतिवर्ष श्री सम्मेदशिखरकी यात्रा करने जाती हैं। यात्रा करते हुए आपने यह अनुभव किया, कि समाज की अधिकांश महिलाओंमें कितनी ही ऐसी रूढ़ियाँ विद्यमान हैं जिनसे उन्हें तीर्थयात्राका वह पुण्य संचय नहीं हो सकता, जो होना चाहिये। जैनधर्मके वास्तविक रहस्य से अपरिचित होनेके कारण और अशिक्षित होने से अधिकतर स्त्रियोंमें ये रूढ़ियां—अनावश्यक पापजनक क्रियाएँ—घर कर गई हैं। इनके दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये और साथ ही इन्हें तीर्थयात्राके उस महत्व एवं आदर्शको भी बतलाना चाहिये जो खासकर अपने आत्म परिणामोंकी अवस्था पर ही

अवलम्बित है। आत्माकी मन्दकषायरूप शुभ परिणति ही पुण्य बंधका कारण है, और तीव्र कषाय जन्य अशुभ परिणति पापबन्धमें कारण है। तीर्थयात्राका फल कषायोंकी मन्दता, इन्द्रियोंकी दमनता और आत्म परिणामोंमें निष्काम गुणानुराग रूप भक्तिका होता है, यदि तीर्थ-क्षेत्रों पर आकर भी हमारे आत्मपरिणामों में आचार-विचारोंमें सुधार न हुआ तो फिर आत्मकल्याण कैसे होगा? जिस आत्मकल्याणके लिये ही यह सारा अनुष्ठान किया जाता है और वही न हो सके, तो इससे और अकल्याण इस जीवका क्या हो सकता है? यही सोचकर आपने यह विचार किया कि जब मैं तीर्थयात्राको जाया करूँगी तब अपने धार्मिक कर्त्तव्योंके साथ साथ यात्रार्थ आये हुए धर्मबन्धुओं और महिलाओंको धार्मिक सिद्धान्तोंके साथ साथ उनें पापजनक मिथ्या रूढ़ियों के छुड़ानेका भी प्रयत्न करूँगी; जिससे ये यात्री भी यात्राका वास्तविक लाभ उठा सकें और अपने जीवनको भी सफल बना सकें। इस दृष्टि विन्दुको ध्यानमें रखते हुए जब जब आप सम्मेदशिखरकी यात्रार्थ जाती हैं तब यात्रार्थी स्त्री-पुरुषोंको धर्मोपदेश और शास्त्र सभादि द्वारा उन्हें धार्मिक तत्त्वोंका यथेष्ट परिज्ञान कराती रहती हैं और उनके आचार-विचार एवं खान-पान आदिमें होने वाली कमियों—त्रुटियोंको समझाकर दूर करनेका प्रयत्न करती हैं। कितनी ही भोली बहनोंसे तो आपने जूं न मारनेकी प्रतिज्ञा कराई है और उन्हें त्रस जीवोंकी हिंसासे बचाया है और कितनी ही साधर्मी महिलाओंको अणुव्रत भी दिये हैं। कितनी ही बहनोंको स्वाध्याय करनेका नियम दिलाती रहती हैं। इस तरह यात्राके दिनोंमें आप

स्वपरकल्याणकी भावनाका कितने ही अंशोंमें पालन करती हैं। यद्यपि आपने इन कार्योंके नोट आदि नहीं रक्खे हैं। इसीसे इनके विषयमें यहाँ कुछ अधिक नहीं लिखा जा सकता और न उनकी निश्चित गणना ही बताई जा सकती है। फिर भी आपका यह कार्य बहुत ही प्रशस्त है और अन्य विदुषीमहिलाओंके द्वारा अनुकरणीय भी है।

कल्याण-मातेश्वरी पाठशाला की स्थापना

हमारी चरित्र नायिका बाईजी अपने धार्मिक कार्यों के साथ साथ सामाजिक कार्योंमें भी बराबर भाग लेती रही हैं। इसीसे आप बाहरकी प्रतिष्ठित जनताके आग्रहको कभी नहीं टालतीं, प्रत्युत बाहरसे निमंत्रण आनेपर यथा शक्ति आप वहां जाकर समाज-सेवा करती रहती हैं और विभिन्न स्थानोंकी जनताको अपने भाषणों तथा शास्त्र सभाओं द्वारा यथेष्ट लाभ पहुंचानेका प्रयत्न करती रहती हैं किसी किसी समय तो आपने अपने जरूरी कार्योंको छोड़कर बाहरकी समाजके निमंत्रणोंको स्वीकार कर सामाजिक तथा धार्मिक उत्सवोंमें सम्मिलित होकर अपनी उदारता तथा कर्तव्यनिष्ठाका परिचय दिया है। और अनेक स्थानों पर जा जाकर कन्या पाठशालाओंकी स्थापना कराई है, और कितनी पाठशालोंका उद्घाटन आपके हाथोंसे ही हुआ है।

इन्दौरके प्रसिद्ध सेठ तिलोकचन्द कल्याणमलजीको कौन नहीं जानता ? आपने पं० चन्दाबाईजीको इन्दौर बुलानेका विशेष आग्रह किया, और ५ तार भी दिये। उस समय आप व्याकरण मध्यमाकी तय्यारी कर रही थीं, फिर भी आपने उक्त सेठसा०का निमंत्रण स्वीकार किया और इन्दौर जाकर 'कल्याणमातेश्वरी पाठशाला'की स्थापनाको। इसी प्रकार अजमेरमें सेठ नेमीचन्दजीने भी आपसे ही कन्या पाठशालाकी स्थापना कराई। और गोहाना निवासी ला० हुकमचंद जगाधरमलजीने रोहतकमें उक्त बाईजीसे

ही श्राविकाश्रमका उद्घाटन कराया था। इसी तरह आप सर सेठ हुकमचंदजी और उनकी दानशीला धर्मपत्नी कंचनबाईजीके द्वारा भी कई बार इन्दौर बुलाई गईं और वहां सभाकी अध्यक्षा भी बनाई गईं तथा उनकी प्रेरणा एवं आग्रहसे पारमार्थिक संस्थाओंका निरीक्षण भी किया और संतोष व्यक्त किया।

जब आचार्य शांतिसागरजी (दक्षिण) के दर्शनार्थ आप शेडवाल और कुंभोज (बाहुबलि) गई थीं। तब आचार्य शांतिसागरजीने उत्तर देशमें आनेका अपना विचार प्रकट किया था। उस समयसे बराबर जहाँ जहाँ उनका चातुर्मास होता है पं० चन्दाबाईजी वहाँ दर्शनार्थ अवश्य पहुँचती रहती हैं। जब आचार्य महाराजने देहलीमें चतुर्मास किया, तब आप देहलीमें २० दिन ठहरी और वहांकी स्त्री सभाओंमें अनेक भाषण दिये, और वैद्यवाडामें एक कन्या पाठशालाका उद्घाटन भी आपसे ही कराया गया था। कटनी जि० जबलपुरमें उनका सर्वप्रथम चातुर्मास होने पर भी आप वहां गई थीं, और एक कन्या पाठशालाकी स्थापना कराई थी। इस तरह आप जहां भी गई प्रायः वहांकी स्त्री समाजको शिक्षित बनानेका आपने खूब प्रयत्न किया। फलतः आज स्त्री समाजमें जो शिक्षाका अच्छा प्रचार देखा जाता है उसका बहुत कुछ श्रेय आपको भी प्राप्त है।

जिनमन्दिर-निर्माण

विद्याप्रचारके सिवाय, जिनेन्द्र भक्तिमें भी आपका विशेष अनुराग है; क्योंकि समीचीन निष्काम भक्ति सातिशय पुण्यबंधका कारण है। बंदना, पूजा, उपासना और स्तुति आदि सब भक्तिके ही नामान्तर हैं। जैन सिद्धान्तमें इसे सम्यक्त्ववर्धिनी क्रिया बतलाया है और जिनबिम्बके दर्शनको सम्यक्त्वोत्पत्तिका निमित्त घोषित किया है, इससे जिनेन्द्रभगवान्के गुणोंमें अनुराग होना अथवा उनकी प्रशान्तमुद्राको हृदयस्थ कर लेना, चैतन्य जिन प्रतिमा बन जाना ही वास्तविक भक्तिका रूप है। ऐसी निष्काम भक्ति ही सम्यक्त्वकी उत्पत्तिमें निमित्त हो सकती है। परन्तु जो भक्ति सकाम है—ऐहिक कार्योंकी वांछारूप है—स्त्री, पुत्र और धनादि सम्पत्तिकी अभिलाषारूप है—वह वास्तविक भक्ति नहीं, भक्तिकी विडम्बना है; क्योंकि हम उस वीतरागताके पुजारी हैं जो आत्माका वास्तविकरूप है, इसीलिये हम उन्हीं अर्हन्तोंकी प्रतिकृति वीतराग प्रशान्त मुद्राओंका दर्शन पूजन करते हैं, जिसका विशुद्ध लक्ष्य वीतरागताको प्राप्त करना है। चरितनायिका बाईजीमें जिनेन्द्र भक्तिका विशेष अनुराग है। एक दिन आप वीतरागमूर्ति के प्रशांत स्वरूपका विचार कर ही रही थीं कि इतनेमें आपके हृदयमें सहसा यह विचार उत्पन्न हुआ कि विद्याप्रचारमें तो तन-मन-धन सभी छोटी अवस्थासेही लगाया है, परन्तु अभी तक जिनमंदिरका निर्माण नहीं कराया, जिनमंदिर ऐसे पवित्र और रमणीक स्थानमें बनवाना चाहिये जहाँ उसकी आवश्यकता हो।

यह विचार उठते ही आपने यह निश्चय कर लिया कि मैं एक जिनमंदिर अवश्य ही बनवाऊँगी। यद्यपि मंदिरके निर्माण करानेका सुभीता आरामें ही अच्छा हो सकता है, परन्तु यहां ३०-३५ जिनमंदिर हैं। यहाँ उसकी विशेष आवश्यकता नहीं। अस्तु, जिस स्थान पर मंदिर न हो और जहाँ उसकी आवश्यकता हो वहां उसका बनवाना ही ठीक होगा, परन्तु स्थान अच्छा सुन्दर और पवित्र होना चाहिये। राजगृही क्षेत्रके दूसरी तीसरी टोंक पर अब दि० जैन मंदिर नहीं है और यात्री लोग बिना दर्शन किये ही लौट आते हैं, स्थान भी वह पवित्र और सुन्दर है। अतएव राजगृही क्षेत्रकी उस पुण्यमयी भूमिमें ही जिन मंदिरका निर्माण कराना उपयोगी होगा, ऐसा निश्चय कर आप राजगृही गईं और वहाँ के द्वितीय पहाड़ रत्नगिरिपर जिनमंदिरकी नीव डाल आईं। मंदिरजीके लिये नबाब साहबसे जमीन खरीद ली गई; क्योंकि पर्वत पर जो जमीन जैनियोंकी थी वह नीची थी, इसलिये एक हजार रुपया नजराना देकर दूसरी ऊँची जमीन खरीद कर नीव डाली गई; किन्तु नबाब साहबको दूसरे लोगोंने भड़का दिया अतएव उन्होंने इमारत बनानेके लिये हुक्म देनेमें बहुत आना-कानीकी, तब उक्त क्षेत्रके मैनेजर नारायणरावजी बराबर पैरवी करते रहे और एक वर्ष बाद इमारत बनानेका हुक्म मिल गया। तब आरासे आपकी कोठीके मुनीम बा० सुरेन्द्रचन्द्र वहां राजगृही पर जाकर रहे और पहाड़ पर जिनमंदिर बनवाने लगे।

इसी बीचमें हमारी चरितनायिका बाईजी आचार्य शांतिसागरजीके दर्शनार्थ उदयपुर (आडग्राम) गईं। वहां आप १०-१२

दिन ठहरीं। वहांके प्रशान्त वातावरणसे आपके चित्तमें वैराग्यकी एक झलक आई, और चित्तमें सांसारिक पदार्थोंसे उदासीनताका अनुभव हुआ; क्योंकि वहाँ वैराग्योत्पत्तिका तो यथेष्ट कारण मौजूद ही था, केवल जरूरत थी अपने कषायके उपशमकी, सो निमित्त मिलते ही कषायका उपशम भी हो गया, और संसारके पर पदार्थोंसे आत्म-विरक्तिका जो स्रोत उद्भूत हुआ उसके फलस्वरूप आपने सातवीं प्रतिमाके व्रत आचार्य महाराजसे लिये और मध्यम श्राविका बन गईं। इस समय आपके साथमें आपकी जिठानी श्रीमती अनूपमालाजी और आपकी ननद श्रीमती नेमसुन्दरबाईजी भी थीं, उनको मोहवश कुछ रंज हो आया, तब बाईजीने इन लोगोंको समझाया और बतलाया कि मैंने कोई अधिक व्रत--नियम नहीं लिये हैं और न कोई ऐसा विशेष कार्य ही किया है जिससे आप लोगोंको रंज करने अथवा खेदित होनेकी आवश्यकता होती। मैंने तो उन्हीं दैनिक और नैमित्तिक क्रियाओंको जो रोजाना की जाती थीं, केवल गुरु आज्ञासे सिलसिले बार कर लिया है, इनमें खेद करनेकी कोई बात ही नहीं है इत्यादि कह सुनकर सबको शान्त कर दिया। पश्चात् उदयपुरसे केशरियाजी आकर यात्राकी और भक्ति भावसे दर्शन-पूजन कर सानन्द आरा लौट आईं।

एक बार भोजन तो आप बहुत वर्षोंसे करती ही थीं, परन्तु सायंकालमें कुछ फलादिक ले लिया करती थीं। परन्तु जबसे आपने मध्यम श्राविकाके व्रत लिये हैं तबसे आप खाद्य पदार्थोंको तो एकबार खाती ही हैं किन्तु दूसरे पेयादि पदार्थोंको भी आप अपने नियम विरुद्ध कभी ग्रहण नहीं करतीं। दवा और पानीकी

छूट है। कुछ समयसे अब आपके सामाजिक कार्य गौण और धार्मिक कार्यों में पहलेसे और भी प्रधानता आगई है। परन्तु दैवको बाईजीका यह धर्मसाधन सहन नहीं हुआ—उसे उससे इर्षा उत्पन्न हो गई, और बाईजीका स्वास्थ्य भी कुछ कुछ गिरने लगा। इस बीचमें आप अपने घरवालोंके साथ बैंगलोर गईं और वहां दो मासतक ठहरीं। बैंगलोरसे आप तीनबार श्रवणबेलगोल गईं और फिर आरा लौट आईं। अब आपके पेटमें दर्दकी शिकायत होने लगी, तब एक चिकित्सिकको बुलाकर उससे स्वास्थ्य-सम्बन्धी सब हाल बतलाया; तब उसने सब देखभाल और परीक्षण कर बतलाया कि आपके पेटमें ट्यूमर (गुल्म) हो गया है। और यह चार-पांच वर्षसे होगा; परन्तु अनुवभमें नहीं आया है। इस रोगके निदानको सुनकर समस्त परिवारको चिन्ता हुई और अन्य बन्धुओंको भी इससे खेद हुआ। यह चर्चा बिजलीकी तरह तमाम शहरमें बिना किसी प्रोपगैंडेके फैलगई। परन्तु पं० जीको इससे कोई विशेष चिन्ता नहीं हुई; क्योंकि आप जानती थीं कि जब पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कर्मका उदय आता है तब वह अवश्य ही अपना फल देता है। यदि उसे अशान्तिसे सहा जाय तब वह भविष्यमें और भी अधिक दुःखका कारण बनेगा; इससे असातोदय जन्य कष्टोंको शांतिके साथ सहन करना ही श्रेयस्कर है, इसी विवेकने आपको विशेष चिन्तित नहीं होने दिया, परन्तु इससे जो कुछ आंशिक खेद हुआ वह इसलिये हुआ कि यदि रोगने अपना प्रभाव जमा लिया तो धर्म-साधन में ज़रूर विघ्न होगा—उसका पहलेकी तरह पालन न हो सकेगा। और धर्म-साधनमें शिथिलताका

होना मुझे इष्ट नहीं है, यद्यपि पराधीनतावश यह सब मुझे सहना पड़ेगा, फिरभी मैं बुद्धिपूर्वक उसमें शिथिलता नहीं आने दूंगी, और बन सका तो इस रोगके इलाजका प्रयत्न भी करूंगी, फिरभी भवितव्यताकी शक्ति अलंघ्य है—वह यों ही टाली नहीं जा सकती।

इस भयंकर रोगका इलाज करानेके लिये बा० निर्मलकुमारजी आपको कलकत्ता ले गए और वहाँके बड़े बड़े डाक्टरोंसे उसकी परीक्षा कराई, तब डाक्टरोंने कहा कि इस रोगको दूर करनेके लिये ऑपरेशनका होना अत्यावश्यक है—बिना इसके डाक्टरी इलाजसे उसे फायदा नहीं हो सकता, परन्तु पं० चन्दाबाईजीने उसे स्वीकार न किया। अन्तमें यह निर्णय किया गया कि बिजलीका इलाज कराया जावे, तब Xray (एक्से) द्वारा इलाज कराना शुरु किया। इस इलाजसे वह पेटका गोला जलकर छोटा हो गया—वह पहले जैसा खतरनाक न रहा, यह इलाज सबसे सुलभ था, पेटके ऊपर आध घण्टे तक विद्युतयन्त्र रखनेसे ही यह कार्य हो जाता था। इसके लिये हमारी चरितनायिकाजीको पांच बार कलकत्ता जाना पड़ा, और बा० छोटेलालजी जैन रईस बड़ा बाजार, कलकत्ताके यहां आप ठहरती थीं। बाबू साहब कलकत्ताके उन प्रसिद्ध और यशस्वी रईसोंमेंसे हैं, जो मानवताके प्रेमी-पुजारी हैं, और रईस होते हुए भी विद्वान् एवं सरल स्वभावी हैं। अहंकार तो आपको छूकर भी नहीं गया है, बड़े ही उत्साही, धर्मात्मा और परोपकारी सज्जन हैं। और आतिथ्य सत्कारमें बहुत ही प्रेम रखते हैं। जो जैन भाई एवं व्यापारी कलकत्ता जाते रहते हैं—वह उनके इस आतिथ्य-प्रेमसे भलीभांति परिचित ही

हैं—उनसे बाबू छोटेलालजीकी सौजन्यता एवं समुदारता छिपी हुई नहीं है। आपका व्यवहार उक्त बाईजीसे सहोदराके समान है।

इस बीमारीके समयमें भी बाईजी अपने दैनिक धार्मिक कार्योंमें अनुत्साहित नहीं होती थीं, प्रत्युत उसे उसी लगन एवं उत्साहके साथ सम्पन्न करती थीं। और अपने दैनिक कर्त्तव्योंसे निपटकर मंदिरजीमें महिलाओंको बराबर धर्मोपदेश देती थीं। एक बार आपने कलकत्तामें चावल पट्टीके जैन मन्दिरमें एक बड़ी स्त्रीसभाकी, और उसमें आपने एक घण्टे तक 'धर्मसेवन और उसके फल' पर भाषण दिया, भाषण देते समय कमजोरीके कारण शरीर पसीनेसे तर हो गया और वह पानीकी भांति शरीरसे बहने लगा। फिर भी आपने अपने भाषणको बीचमें स्थगित नहीं किया, उसे उसी उत्साह एवं लगनके साथ पूरा किया। यद्यपि एक्सेके इलाज से उस गुल्मरोगकी शिकायत रुपयेमें चार आना रह गई थी किन्तु स्वास्थ्य बलिष्ट नहीं हुआ था—शरीरमें कमजोरी बराबर चल ही रही थी। एक्सेके इलाजसे एक नुक्सान और हुआ कि आपके शरीरमें उष्णता पैदा हो गई, और दिनमें दो-चार बार चक्कर भी आने लगे। शरीरकी यह सब अवस्था. देखकर आपने विचारा कि राजगृही पर जो मंदिर बन रहा है उसकी प्रतिष्ठा इसी वर्ष हो जानी चाहिये; क्योंकि इस अस्थायी पर्यायका कोई भरोसा नहीं है, यह पर्याय क्षणभंगुर है न जाने कब इसका अन्त हो जाय। अतः जो धार्मिक कार्य शुरु कराया है उसे अब शीघ्र पूरा हो जाना चाहिये। इसी विचारसे मंदिरका निर्माण-कार्य और भी अधिक शीघ्रतासे किया जाने लगा।

प्रतिष्ठोत्सव

कार्तिक मासमें बाईजी बा० चक्रेश्वरकुमारजीके साथ राजगृही गईं। और वहां प्रतिष्ठा-कार्यको सम्पन्न करनेका विचार-विनिमय हुआ, और वापिस आरा आने पर उसकी तय्यारी भी की जाने लगी। पश्चात् फाल्गुण मासके प्रारम्भमें ही पं० चन्दाबाईजी राजगृही चली गईं और फिर क्रमशः घरके सब लोग भी उक्त गिरिराज पर पहुँच गए। वहां प्रतिष्ठाका वह महान् कार्य बड़ी ही सादगी और शास्त्रोक्त विधिके साथ सन् १९३६ की फाल्गुन शुक्ला प्रतिपदासे पंचमी तक पंचकल्याणपूर्वक समाप्त हुआ। प्रतिष्ठा कारक पं० झम्मनलालजी तर्कतीर्थ, अपने भतीजेकी मृत्यु हो जानेके कारण न आसके। तब पं० नन्हेंलालजी भोपाल, मूड़बिद्री निवासी पं० के० भुजबलीजी शास्त्री, आरा और पं० श्रीनिवासजी शास्त्री आदि विद्वानोंने बड़े परिश्रमसे प्रतिष्ठा पाठोंमें उल्लिखित विधिसे प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई। उस समय पं० माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्य और भगत प्यारेलालजीका शास्त्रप्रवचन होता था जिससे जनता को तत्त्वज्ञानका लाभ भी मिल जाता था। प्रतिष्ठाका सब विधान बा० चक्रेश्वरकुमारजी और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती राजेश्वरीदेवीने बड़ी भक्तिसे सम्पन्न किया। पूजादि करने योग्य कार्य पं० चन्दाबाईजी भी करती रहती थीं और प्रतिष्ठाकी प्रत्येक विधि प्रतिष्ठापाठोंमें देखकर सज्ञानकी जाती थी, जिससे दर्शक जनोंको भी उसकी क्रियाओंका बहुत कुछ परिज्ञान होता जाता था। पं० चन्दाबाई-जीका यह ख्याल है कि बिना किसी क्रियाके परिज्ञान बिना

प्रतिष्ठादि कार्योंसे सर्वथा अनभिज्ञ भोले सेठोंके समान जल चन्दनादि चढ़ा देनेसे प्रतिष्ठाकी कोई महत्ता नहीं होती। इसी दृष्टिको सामने रखते हुए उक्त प्रतिष्ठा कार्यको उक्त तरीके पर किया गया था जिससे जनताको प्रतिष्ठाके विधि-विधानोंका रसास्वादन होता जाता था और जनतामें अपूर्व उत्साह एवं भक्ति रसका अक्षुण्ण प्रवाह बहता हुआ दृष्टिगोचर होता था। इस प्रति प्रतिष्ठामें सम्मिलित जनता प्रतिष्ठा विधिको देखकर यही कहती थी कि प्रतिष्ठाका सब कार्य उक्त रीतिसे ही सम्पन्न होना चाहिये जिससे उपस्थित जनता उसके रहस्य एवं महत्वसे परिचित हो सके। इस प्रतिष्ठामें सबसे महत्वकी बात यह थी कि बा० चक्रेश्वरकुमारजी स्वयं विद्वान् और सदाचारी सम्पन्न गृहस्थ हैं। आपने प्रतिष्ठाकी सभी क्रियाओंको शास्त्रोक्त विधिसे सज्ञान सम्पन्न किया था। प्रतिष्ठाके दिनोंमें प्रतिष्ठा विधानके अनुसार आप अपना रहन-सहन और भोजन भी मर्यादामय करते थे। जब कि दूसरे श्रेष्ठिजन इस आदर्शको भूल जाते हैं और प्रतिष्ठाचार्यके कहे अनुसार बिना किसी परिज्ञानके उन क्रियाओंको करते जाते हैं। और स्वयं उस विधानके अनुसार चलनेमें अपनेको सर्वथा असमर्थ प्रकट करते हैं, तब प्रतिष्ठाचार्यसे अनुनय विनयकर रियायतें हासिल कर लेते हैं, जो ठीक नहीं हैं, और न इस तरहकी प्रतिष्ठा ही ठीक कही जा सकती है। बा० चक्रेश्वरकुमारजी अपनी पितृव्या श्रीमती पं० चन्दाबाईजीके साथ समय समय पर स्वाध्याय कर अपना तत्त्वज्ञान बढ़ाते रहते हैं। जिस तरह प्रतिष्ठाका विधि-विधान उक्त बा० चक्रेश्वरकुमारजीने किया उसी प्रकार बा० निर्मलकुमारजीने

भी। दोनों ही भाइयोंने अपनी पितृव्याकी सदिच्छाको बड़े भारी समारोह एवं स्वकीयप्रबन्धसे सम्पन्न किया और प्रबन्धादि सभी कार्योंमें मुक्त हस्तसे सहस्रों रुपये व्यय करके अपनी चंचला लक्ष्मीको सफल बनाया। प्रतिष्ठोत्सवमें प्रबन्ध बड़ा ही अच्छा किया था, यात्रियोंको जरा भी कष्ट नहीं हुआ और न किसीका कुछ सामान ही खोया, और न किसी प्रकारकी बीमारीका उद्गम ही हुआ।

इस प्रतिष्ठामें एकबात बड़ी ही दिलचस्प हुई और वह यह कि जिस समय पहाड़ पर जिस कल्याणककी क्रिया सम्पन्नकी जाती थी उसी समय वही क्रिया नीचे भी सम्पन्न होती थी जिससे दर्शनार्थी यात्रियोंको दोनों ही स्थान पर बड़ा ही सुभीता रहा, और सभीको उसको देखनेकी सुविधा रही। श्री मुनिसुव्रतनाथकी साढ़े तीन फीट ऊँची एक विशाल एवं मनोग्य प्रतिमा पहलेसेही पहाड़ पर विराजमान कर दी थीं; क्योंकि प्रतिष्ठा हो जाने पर उक्त मूर्तिको ऊपर ले जानेमें अविनयका भारी भय था; इसीसे ऊपर नीचे दोनों जगह कल्याणकोंकी क्रिया की जाती थी। और यात्रीगण बड़ी भारी संख्यामें पर्वत पर उपस्थित होते थे, उस समयका दृश्य बड़ा मनोहर प्रतीत होता था।

इस उत्सवमें जैनमहिलारत्न श्री ललिताबाईजी बम्बईकी अध्यक्षतामें 'बालाविश्राम' आराकी छात्राओंको पारितोषिक वितरण किया गया था। अन्तिम दिन एक बृहत् सभा हुई जिसमें नवीन मंदिरजीकी पूजन प्रबन्ध आदिके लिये ललिताबाईजीने प्रश्न किया तब बाईजीने पांच हजार रुपया एक मुश्त या उसका सूद

२५) रु० मासिक देना स्वीकार किया। इस तरह प्रतिष्ठाका कार्य बड़े ही भक्ति भाव एवं आनन्दोत्साहके साथ सम्पन्न हुआ। कार्यके समाप्त हो जाने पर बा० निर्मलकुमार चक्रेश्वरकुमारजी बाईजीको इलाजके लिये कलकत्ते ले गए और वहां पुनः गुल्मरोगके विनष्ट करनेके लिये बिजलीका इलाज कराना पड़ा। इस अन्तिम इलाजके बाद आप निश्चिन्त हो गई।

बाला-विश्राममें बाहुबलीकी मूर्ति-प्रतिष्ठा

दूसरे वर्ष जैन-बालाविश्राममें उक्त चरितनायिका बाईजीकी ननद श्रीमती नेमसुन्दरदेवीने १४ फ़ीटकी एक बहुत मनोज्ञ एवं विशाल बाहुबलिस्वामीकी मूर्ति स्थापित कराई। यह पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी बाईजीकी ही देख रेखमें सानन्द सम्पन्न हुई। बाला-विश्राम जैसे रमणीय स्थान पर ऐसे विशाल ऐतिहासिक स्तम्भका स्थापित किया जाना उसकी महत्ता एवं प्रतिष्ठाको और भी अधिक बढ़ा देता है। इस मूर्तिकी प्रतिष्ठाके अवसर पर विभिन्न स्थानोंसे कितने ही प्रतिष्ठित सज्जन और धार्मिक जन समूह बाहुबलिस्वामीकी विशाल सौम्य मूर्तिका दर्शन करनेके लिये एकत्रित हुआ था। और प्रतिष्ठाके शास्त्रोक्त विधि-विधान तथा बाला-विश्रामको देखकर बहुत ही प्रसन्नता प्राप्तकी थी, उस समय उक्त मूर्तिके दर्शनसे जो अपूर्वता और प्रशान्तताका अनुभव हुआ वह वचनातीत है।

प्रतिष्ठाके इस अपूर्व अवसर पर पं० चन्दाबाईजीने 'भा० दि० जैन महिलापरिषद्' को अपनी ओरसे निमंत्रित किया और इसके स्टाफको बम्बईसे बुलाया। महिलापरिषद्की सुयोग्य मंत्रिणी श्रीमती पं० ललिताबाईजी भी परिषद्के कागजात लेकर नियमित समय पर आरा आगईं। इस बार परिषद्की सभाध्यक्षाका पद श्रीमती सौभाग्यवती रमारानी ने सुशोभित किया था। आप भारतके सुप्रसिद्ध व्यापारी रामकृष्ण डालमियांकी सुपुत्री हैं, और नजीबाबाद निवासी दानवीर साहू शान्तिप्रसादजी की सुयोग्य धर्मपत्नी हैं।

आप विदुषी और उदार होते हुए भी निरभिमानी हैं। आपने अपना मुद्रित भाषण पढ़कर सुनाया और परिषद्के कार्यको ठीक तौरसे अंजाम दिया। पं० चन्दाबाईजीकी प्रेरणाको पाकर जिनमति और सुमति नामकी दो क्षुल्लिकाएँ भी उत्सवमें सम्मिलित हुई थीं। इनके आजानेसे परिषद्को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई। और फलस्वरूप परिषद्के लिये १३००) रुपयेकी सहायता भी प्राप्त हो गई।

चरितनायिका बाईजीका महिलारत्न श्रीमती पंडिता ललिता-बाईजीसे छोटी अवस्थासे ही स्नेह था। महिलारत्न मगनबाई, कुंकुबाई, ललिताबाई और चन्दाबाई इन चारों विदुषी बहनोंने मिलकर भारतवर्षके विविध प्रान्तोंमें स्त्री शिक्षाका प्रचार किया, कन्या पाठशालाएँ और श्राविकाश्रम स्थापित किये और कराये। ये परस्परमें एक दूसरेके साथ सगीबहनोंके समान प्रेम रखती थीं। इनकी परस्परकी सौहार्दताको देखकर यह अनुमान करना कठिन था कि ये सगी बहनें हैं या नहीं ? इनका सात्विक धर्म-प्रेम परस्परमें खूब ही पल्लवित रहा है और एक दूसरेके कार्यमें बराबर सहयोग भी मिलता रहता था। इनमें जैन महिलारत्न श्रीमती मगनबाई जे० पी० बम्बईका अचानक ही हृदयकी गतिबन्द हो जानेसे माघशुक्ला नवमी ता० ७ फरवरी सन् १९३० की रात्रिको स्वर्गवास हो गया। श्रीमती कंकुबाई शोलापुरने क्षुल्लिका की दीक्षा लेली, जो वर्तमानमें जिनमतिके नामसे पुकारी जातीं थीं।

अब स्त्री शिक्षाके प्रचारका समस्त भार पं० ललिताबाईजी और हमारी चरितनायिका बाईजी पर ही आपड़ा, और इन दोनोंसे



श्रीबाहुबलीस्वामीके मन्दिरपर एकत्रित छात्राओंका ग्रूप चित्र ।

जहाँ तक भी हो सका उसके प्रचारमें कोई कमी उठा नहीं रक्खी। परिषद्के इसी अधिवेशनमें श्रीमती पं० ललिताबाईजीने अपनी वृद्धावस्था हो जानेके कारण परिषद्के मंत्रित्व कार्यसे और जैन महिलादर्शकी उपसम्पादिका पदके कार्य संचालनमें अपनी असमर्थता व्यक्तकी, और दोनों ही पदोंसे स्तीफा दे दिया। परिषद्ने आपकी सेवाओंके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए आपके इस्तीफा सर्वसम्मतिसे स्वीकृत किये। अब परिषद्ने उक्त दोनों रिक्त स्थानोंकी पूर्ति करनेके लिये, निम्न दो विदुषी महिलाओंके नाम पेश किये। एक नाम तो श्रीमती पं० चन्दाबाईजीकी लघुभगिनी पं० व्रजबालादेवीका, और दूसरा नाम श्रीमती जयवंतीदेवी नानौता जि० सहारनपुरका। पं० व्रजबालादेवी महिलापरिषद्की मंत्रिणी बनाई गईं और जयवंतीदेवी महिलादर्शकी उपसम्पादिका।

जीर्णोद्धार

इसी प्रतिष्ठाके शुभअवसरमें बाला-विश्रामके सम्मुख एक विशाल जैनमन्दिर है जो विक्रम संवत् १६१० का बना हुआ है। सन् १६३० के भारी भूकम्पसे यह मंदिर जर्जरित हो गया था— भूकम्पसे इसे बहुत अधिक हानि हुई थी। यह मन्दिर आराके सुप्रसिद्ध जमींदार बा० मक्खनलालजी जैन या उनके कुटुम्बियों द्वारा बनवाया गया था इस मन्दिरके मालिक स्व० बाबू मक्खन-लालजीके उत्तराधिकारी जो लोग हैं उनमें से स्वर्गीय बा० धरणेन्द्र-चन्द्रजीकी धर्मपत्नी श्रीमती चम्पामणि देवीने पं० चन्दाबाईजीसे यह इच्छा व्यक्तकी थी कि मैं भी एक जिनमंदिर बनवाकर जीवन सफल करूं; तब चरितनायिकाबाईजीने कहाकि पृथक् नवीन मन्दिर मत बनवाओ, अपनेपूर्वजों द्वारा बनवाए हुए इस मंदिरका जीर्णोद्धार कराकर उसमें एक नवीन प्रतिबिम्ब विराजमान करके प्रतिष्ठा करलो। चम्पामणिजीको बाईजीकी उक्त सलाह बहुत पसन्द आई और कहा कि आपने जो कुछ कहा है वह सब मुझे स्वीकार है, आपके कहे अनुसार ही सबकाम करा दूंगी। तब उक्त देवीजीने २० हजार रुपया लगाकर जीर्णोद्धार कराया और सहस्त्रकूट चैत्यालयकी प्रतिष्ठा बड़े भक्ति-भावसे सम्पन्न की। इस मंदिरके चारो ओर सुन-सान है इसलिये ऐसे निर्जन रमणीय स्थानमें आत्मचिंतन या ध्यानादि अच्छी तरहसे किया जा सकता है। चरितनायिकाजी इस मन्दिरमें कभी कभी महीनों रह जाती हैं और स्वाध्याय, तत्त्वचिंतन, पूजन एवं सामायिक क्रिया

करती हैं। केवल स्नान, भोजनादिके लिये बाला-विश्राम जाती हैं। बाईजीको इस मंदिरमें धर्मसाधन करते हुए कभी कभी दिनभर सम्भाषण करनेका मौका ही नहीं आता, तब आप कहती हैं कि आज कुछ समयके लिये सहज ही मौन हो गया था। मौनकी यह क्रिया बड़ी ही आनन्द दायक है, इससे आत्म शक्तिकी वृद्धि होती है और स्वाध्याय तथा तत्त्वचिंतनसे आत्मा प्रसन्न एवं गम्भीर हो जाता है, किसी गहन पदार्थके चिन्तनमें उपयोग भी स्थिर हो जाता है, तथा बाह्य संकल्प-विकल्पोंके भारी बोझसे आत्मा कुछ समयके लिये हल्का हो जाता है।

बाईजीकी दूसरी बहन श्रीमती केशरबाई और कुटुम्बीजनोंका जैनधर्मसे प्रेम

बाईजीकी दूसरी बहन केशरबाईजी भी देहलीसे आकर इस उत्सवमें शरीक हुईं थीं। इनके दो पुत्र और तीन पौत्रियाँ हैं। श्री बाहुबलिस्वामीकी मूर्तिके दर्शनकर श्रीमती केशरबाईजीको भी अपने आत्म-सुधारका उत्साह उत्पन्न हुआ, और यह विचार आया कि मुझे भी अपनी ज्येष्ठ बहिनके समान जैनधर्मका पालन करना चाहिये। साथ ही, बहिनकी प्रेरणासे भी बराबर प्रोत्साहन मिल रहा था और उस प्रोत्साहनसे इनके हृदयमें जैनधर्मके प्रति रुचि एवं श्रद्धा भी उत्पन्न हो गई थी; परन्तु इस समय तक वे उसे क्रियात्मक रूप न दे सकीं थीं। अतः अब इन्होंने उसे क्रियात्मक रूप देकर यह विचार किया कि मुझे अपनी बहिनके सत्संगसे समय समय पर समुचित लाभ उठा कर आत्म कल्याणमें प्रवृत्ति करनी चाहिये। यद्यपि चरितनायिका बाईजीकी ये दोनों बहनें वैष्णव सम्प्रदायानुयायी अग्रवालोंमें ही विवाहित हैं। तोभी जैनधर्मकी परम श्रद्धालु हैं; और जिन पूजनादि आवश्यक षट्कर्मों का यथा विधि पालन करती हैं। इतना ही नहीं; किन्तु इनकी जैनधर्ममें दृढ़ श्रद्धा हो जानेके कारण इनकी सन्तति भी जैनधर्मका पालनकरती है। यह सब प्रभाव पं० चन्दाबाईजीका है जिनकी प्रेरणा और सत्संगसे इन दोनों बहिनों और उनकी सन्तानोंका जैनधर्मकी ओर झुकाव हुआ है—वे उसकी उपासक बन गई हैं। आपका यह प्रभाव केवल बहनों और उनकी सन्तानों तक

ही सीमित नहीं रहा, किन्तु अपने पितृगृहमें भी सबको जैनधर्मसे रुचि हो गई। आपके भाई राय बहादुर बा० जमुनाप्रसादजी एडवोकेट, चेयरमैन, मथुरा; तथा द्वितीय लघुभ्राता बा० जशेन्दु-प्रसादजी जैनधर्मको पूज्यदृष्टिसे देखते हैं। इस प्रतिष्ठोत्सवमें आपके कई बंधु भी सम्मिलित हुए थे। तप कल्याणकके दिन सब लोगोंने अपनी अपनी शक्त्यनुसार व्रत-नियम भी लिये। बाला-विश्रामकी छात्राओंने भी इस उत्सवमें भाग लिया और आगन्तुक व्यक्तियोंको ठहरने आदिकी व्यवस्थामें समुचित सहयोग दिया।

बाईजीका जयवन्तीके साथ प्रेम-भाव

जयवन्तीदेवी स्व० लाला प्रभुदयालजी नानौता जिला सहारनपुरकी सुपुत्री हैं। आपकी माता आपको २-३ वर्षका छोड़कर चल बसी थीं। तबसे आपका पालन-पोषण और शिक्षादिका सब प्रबन्ध आपकी दादी और बुआ श्रीमती गुणमालादेवीने ही किया है। जयवन्तीका प्राथमिक शिक्षण कार्य मुख्तार श्री जुगलकिशोरजीके द्वारा सम्पन्न हुआ है, जब आप देवबन्द जिला सहारनमें 'मुख्तारगिरी' का कार्य करते थे। सन् १९२० ई० में श्रीमती पं० चन्दाबाईजीके पास संस्कृतका अभ्यास करनेके लिये गुणमालादेवी अपनी भतीजी जयवन्तीको लेकर आरा आईं। उस समय तक 'बाला-विश्राम' का उद्घाटन नहीं हुआ था। परन्तु पठन-पाठनादिका सब कार्य बाईजी अपने घर पर ही किया करतीं थीं। इन दोनोंको उन्होंने अपने पास रखकर स्वयं पढ़ाना प्रारम्भ किया। बालिका जयवन्तीदेवीकी बुद्धि तीव्र थी—वह संकेत मात्रसे अथवा थोड़े परिश्रमसे ही अपना सब पाठ याद कर लेती थी। इस कारण इस आशुबोध शिष्यासे चन्दाबाईजी बहुत प्रसन्न रहती थीं। धीरे धीरे जयवन्ती पर बाईजीका स्नेह बढ़ने लगा और वे उससे पुत्रीवत् स्नेह करने लगीं। जयवन्तीदेवी भी मातृ-विहीन बालिका थी अतः वह बाईजीको माताके समान मानने लगी। यह स्नेह परस्पर आज भी ज्योंका त्यों बना हुआ है। दो वर्षके अध्यापनसे ही जयवन्तीकी योग्यता संस्कृतकी प्रथम परीक्षाके योग्य हो गई और हिन्दीका भी उसे अच्छा परिज्ञान हो

गया। सन् १९२१ में जब बाला-विश्रामकी स्थापना हुई तब बाईजीकी ये दोनों ही शिष्याएँ सर्व प्रथम रहीं और संस्थाके सभी कार्योंमें आपको सहायता भी प्रदान करती रहीं। सन् १९२३ में पं० झम्मनलालजी तर्कतीर्थ कलकत्तासे आरा आए, तब आपने बाला-विश्रामको भी देखा और संस्कृतके एक नवीन श्लोकका अर्थ जयवन्तीसे पूछा, तब जयवन्तीने उसका अन्वयार्थ ठीकठीक बतला दिया, इस पर पंडितजी बहुत प्रसन्न हुए और बाईजीने जयवन्तीदेवीको पुरस्कार भी दिया। विद्याध्ययन कर आरासे वापिस आने पर जयवन्तीदेवीका विवाह-सम्बन्ध भी बा० त्रिलोकचन्दजी बी.ए.के साथ कर दिया गया। इस सम्बन्धको जोड़कर दादीजीने सोचा था कि जमींदारीका सारा भार चि० त्रिलोकचन्दजी वकीलके सुपुर्द करके मैं निश्चिन्त हो जाऊंगी और अपना शेष जीवन धर्म ध्यानके साथ व्यतीत करूंगी; परन्तु दुर्दैवको यह इष्ट नहीं हुआ—अभी सम्बन्धके छह वर्ष भी पूरे न होने पाये थे कि बा० त्रिलोकचन्दका अचानक स्वर्गवास हो गया! जयवन्तीदेवी बाल-विधवा बन गईं! और पुत्रके पहले ही चल बसनेसे उसकी गोद भी खाली हो गई। और दादीजीकी उन सारी आशाओं पर भी पानी फिर गया। जयवन्तीदेवीके इस इष्ट वियोग जन्य दुःखसे पं० चन्दाबाईजीको भी भारी खेद हुआ और आप सान्त्वना देनेके लिये स्वयं नानौता गईं। जयवन्तीदेवीने वैधव्यके इस दुःसह वियोगको बड़े धैर्यके साथ सहन किया और कर रही हैं। और गृह कार्योंके अतिरिक्त पठन-पाठन तथा लेखकादिके कार्योंमें अपना समय लगाती रहती हैं सन् १९३४ में जब बाला-विश्राममें पंचकल्याणक

छाके साथ महिला-परिषद्का अधिवेशन हुआ, तब जयवन्ती-देवी 'जैन-महिलादर्श' की उपसम्पादिका बनाई गईं। बाईजी जब कभी यात्रार्थ या महिला-परिषद्के अधिवेशनके लिये कहीं बाहर जाती हैं तब जयवन्तीदेवीको बुलाकर साथ ले जाती हैं। जयवन्ती-देवी भी आपके प्रति बड़ा आदर और सम्मानका भाव रखती हैं। जयवन्तीदेवी भी कुछ न कुछ लिखती ही रहती हैं। आप एक अच्छी कहानी लेखिका हैं, महिलादर्शमें अक्सर आप कहानी लिखती ही रहती हैं, इसके सिवाय, कभी कभी दूसरे पत्रों को भी लेख प्रकाशनार्थ दे देती हैं। आप अच्छी व्याख्याता भी हैं। समय समय पर स्त्री सभाओंमें अपने भाषण देती रहती हैं, वीर सेवा मन्दिर की 'वीरशासन जयन्ती'के अवसर पर भी प्रत्येक वर्ष स्त्री-सभामें आपका भाषण होता है। इस तरह बाईजीके सत्प्रयत्नसे जयवन्तीका समय भी समाज-सेवामें व्यतीत होता है।

卐

जयन्ती

संसारमें जब कभी महापुरुष जन्म लेते हैं, और जनताको सुमार्गमें लगाने और उनके दुःखोंको दूर करनेका प्रयत्न करते हैं। उनके जीवनको आदर्श एवं समुन्नत बनानेकी ओर ध्यान देते हैं। तब जनता भी इनके द्वारा निर्दिष्ट पथ पर चलनेकी कोशिश करती है और उनके बतलाए हुए मार्गका अनुसरण कर उससे समुचित लाभ उठाती है। ऐसे महापुरुष जो अपने लिये खुद न जीकर दूसरोंके लिये जीते हैं, और कंटकाकीर्ण मार्गको सुगम बना देते हैं। जिनका नैतिक एवं आध्यात्मिक जीवन बड़े ही ऊँचे दर्जेका होता है। जो आत्मबलके धनी होते हैं। आत्मनिर्भयता और अहिंसाकी प्रतिष्ठासे उच्चादर्श प्राप्त करते हैं। ऐसे महापुरुषोंका जनता बड़ा आदर करती है और उनके गुणोंकी स्मृति बनाए रखनेके लिये 'जयन्ती' आदिके द्वारा अपनी कृतज्ञता और भक्ति प्रकट करती रहती है। इन्हीं सब आदर्शोंके अनुरूप पं० चन्दाबाईजीने भी अपने जीवनको स्त्री समाजके कल्याणार्थ लगाया है। उनकी शिक्षा आदिके प्रसारमें अपना तन, मन और धन सभी अर्पण कर दिया है—बाईजीके इन्हीं उपकारोंसे उपकृत होकर बाला-विश्रामके कर्मचारीगण और छात्राएँ तथा स्थानीय कुछ दूसरे व्यक्ति भी बाईजीका जन्म दिन या जयन्ती मनाते हैं—उनके कर्तव्यों और गुणों आदिका उल्लेख करते हुए उनके प्रति आदर, भक्ति और कृतज्ञताके रूपमें उनका परिचय देते हैं। और उनके जीवन पर प्रकाश डालते हैं।

जयन्ती पर पढ़ी गईं कविताएँ

छाया था अविद्या अन्धकार यहाँ नारियोंमें
जड़ता-निमग्न वे अनेक कष्ट पाती थीं।
भूलीं कर्तव्य निज निद्रा प्रमाद वश,
श्रेष्ठ बुद्धि वैभवमें क्षीण हुई जाती थीं।
बालब्रह्मचारिणी निवारिणी अशिक्षा-तम,
उदित हुईं मात अहो! भारत गगनमें।
चन्द्रकी कलासी 'चन्दाबाई नाम रमणीय,
सहसा प्रकाश हुआ वाणीके भवनमें।
लाख विघ्न-बाधाओंको भेद वीर नारीने,
फिरसे जगाया गत गौरव हमारा है।
अबला कहातीं थीं जो सबला बनाके उन्हें,
डूबता जहाज नारी जातिका उबारा है।
'बाला-विश्राम' संस्थापित सयत्न कर,
देशमें बहाई नव-जीवनकी धारा है।
नूतन उमङ्गे उत्साह नव दिन-दिन,
महिला-समाजका सुसाज अब न्यारा है।
फूल श्रद्धाके भरलाई उर अञ्जलिमें,
चरणों चढ़ाऊं कर बन्दना सुमातकी।
माँकी अविनाशी हो कीर्ति बाहुबलिसे,
प्रार्थना यही है शक्तिमान भुजा जाकी।
सबका सुभाग्य आई माताकी जयन्ती आज,
सबका मन हैं प्रसन्न सब ओर हर्ष छाया है।
सूर्य से सरोजनी-सी प्रमुदित सुशीलाने,
भक्ति भरे उरसे जननि यश गाया है।

मातृ-वन्दना

जननि ! आपकी कीर्ति ज्योत्स्ना दिग्दिगन्तमें करती वास।
स्वर्णिम दिन आया है मानो मुखरित होता है मधुमास ॥
जैनकमल-कुल-तरणि ! आपकी कीर्ति अमर जगमें छाई।
उदित हुई महिलाम्बरमें तुम नूतन ज्ञान-रश्मि लाई ॥
जननि ! तुम्हारी स्वर्ण-जयन्ती देती साहस दूना है।
पावन चरित तुम्हारा सुखकर जगके लिये नमूना है ॥
महिला-मणि ! वनिता-समाजकी आप सहज ही हैं सिरताज।
पादाम्बुजमें निज श्रद्धाञ्जलि देने आई प्रमुदित आज ॥
घोर व्यथाको सुख सम माना पीड़ाओंमें करती हास।
जीवन अन्धकारमय था पर विद्याबलसे किया प्रकाश ॥
गुरुपद-सेवी हृदय आपका जिसमें करुणा रही विराज।
अभ्यन्तरमें विस्मयकारक गुणावलीका सुन्दर साज ॥
थीं अज्ञान-नींदमें सोई विद्या धर्म कलासे हीन।
शिक्षाकाप्रकाश दे तुमने रक्षा करली जननि ! प्रवीन ॥
विविध भाँति शिक्षा देनेमें है विश्राम महातत्पर।
जननि ! आपके त्याग-बीजसे निकला है यह तरु सुन्दर ॥
जैन जाति पर आज आपका है निःसीम चढ़ा ऋण भार।
जिसे युगों तक यत्नशील भी कर न सकेगा कभी उतार ॥
अमर नाम मांका हो जगमें उठती है भावना यही।
आत्मोन्नतिकी शक्ति मिले हम सबकी है प्रार्थना यही ॥

अतिथि-सत्कार

चरितनायिका बाईजीको तथा आपके समस्त कुटुम्बीजनोंको आगन्तुक सज्जनों, साधर्मीजनों, तथा व्रती-त्यागियोंका आतिथ्य करनेका बड़ा शौक है—अतिथियोंका आदर-सत्कार करनेमें आपको बड़ा ही आनन्द आता है। आपके यहाँ गरीब, अमीर, धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय नेतागण समय समय पर पहुँचते रहते हैं। कोई भी विद्वान् और विदुषी महिला आपसे बिना मिले नहीं जाते—आपसे मिलकर उन्हें बड़ी ही प्रसन्नता होती है। सामाजिक विद्वान् और त्यागी-व्रती तो वहां प्रायः आते ही रहते हैं। आप उनका आतिथ्य बड़ी भक्तिके साथ करती हैं। आपकी आतिथ्य सत्कार प्रियता दूसरे धनी मानी सज्जनों और महिलाओंके द्वारा अनुकरण करने योग्य है। नवागन्तुक अतिथियों, विद्वानों, नेताओं, श्रीमानों और साधर्मी जनताकी सेवा-सुश्रूषा करना उन्हें आहार पानादिके द्वारा सम्मानित करना प्रत्येक स्त्री पुरुषका कर्तव्य है।

आरामें जब विश्वविभूति महात्मा गांधीजी पधारे, तब आपके ही कुटुम्बमें ठहरे थे, और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरीबाई बराबर पंडिताजीके साथ रहीं थीं। सभामें महात्माजीके मार्मिक भाषणमें कुछ अपीलका प्रकरण आते ही स्वयं हमारी चरितनायिका बाईजीने अपनी सौनेकी चूड़ी उतार कर दे दीं, फिर क्या था उसी समय आपके कुटुम्बकी सभी महिलाओंने अपना एक एक आभूषण उतार कर दे दिया, जिससे उस समय चन्देकी एक अच्छी रकम हो गई।

जब पं० मदनमोहन मालवीयजी आरा आए। तब आपने 'बाला-विश्राम' का निरीक्षणकर बड़ी प्रसन्नता व्यक्तकी, और पं० जीसे स्वयं वार्तालाप करते हुए बोले कि एक महिलाश्रम हम भी खोलना चाहते हैं, तब आपसे उसके सम्बन्धमें विचार-विनिमय करेंगे।

सन् १९३७ में जब भारतके युवक सम्राट् पं० जवाहरलालजी नेहरू इलेक्शनके प्रचारार्थ आरा आए, तब बाला-विश्राममें ही ठहरे थे और बाईजीका अपने आतिथ्य स्वीकार किया था, और भोजनकर आप पटना चले गए थे।

१९३९ में श्रीमती अमृतकौरजी आरा पधारीं, तब आपने उन्हें बाला-विश्राममें बुलाया, उस समय वे आपकी शिक्षा-संस्थाका निरीक्षण कर बड़ी ही प्रसन्न हुईं और पं० चन्दाबाईजीको हार्दिक धन्यवाद देने लगीं। साथ ही आपने कहा कि—"आप तो देश का बड़ा उपकार कर रही हैं, यदि भारतकी देवियाँ आपके समान ही अपने कर्तव्यका पालनकर स्त्रीशिक्षाके प्रचारमें जुट जांय, तो भारतकी निरक्षरता शीघ्र ही दूर हो जाय। जब एक बच्चेका पालन-पोषण माताके लिये भार रूप हो जाता है तब आप तो इतनी बहनों और बच्चियोंकी सम्हाल कर रही हैं। यदि आपके समान बड़े घरोंकी महिलाएँ ऐसा ठोस कार्य करने लगें तो देश और जातिके उत्थानमें देर न लगे"। पश्चात् बाईजी श्रीमती अमृतकौरको अपने घर ले गईं; और १०० जोड़ा नई साड़ियाँ आपने अकाल पीड़ितोंकी सहायताके लिये प्रदान कीं। बाईजीके जीवनकी यह खास विशेषता है अथवा इसे प्रकृतिकी देन ही

समझिए कि आरामें जब किसी प्रकारका कोई भी प्रचारक पीड़ित और आपत्ति ग्रसित व्यक्ति क्यों न आजाय, आप उसकी करुण-कहानी बड़ी दिलचस्पीसे सुनती हैं और उसकी यथाशक्ति सहायता भी करती हैं। संस्थाओंके प्रचारकों को तो आप कभी भी विमुख होकर नहीं जाने देतीं—उन्हें स्वयं सहायता प्रदान करती हैं और दूसरोंसे भी दिलानेका प्रयत्न करती हैं।



परोपकार और कर्तव्य-पालन

आप लेखिका एवं व्याख्यातृ होते हुए भी जैनसमाजकी एक सच्ची-सेविका आर्य ललना हैं। आपको अपने शारीरिक सुखोंके प्रति भारी उपेक्षा है—व आसक्ति अथवा अनुरागको बढ़ने नहीं देतीं; क्योंकि साथमें विवेक उनमें विरक्तिके अंकुरको स्फुरायमान करता रहता है, और जीवनको सीधा कार्यक्रम, उत्साही और आपत्तिकालमें हृदयमें धैर्य एवं सहन-शीलताका उद्गम करता है जिससे चित्त सहसा आई हुई अनेक आपदाओंका सामना करते हुए भी खेदित नहीं होता, किन्तु उन्हें शुभाशुभ कर्मोदयका विपाक (फल) समझ कर शांतिसे सह लिया जाता है। आप विघ्न बाधाओंकी कोई परवाह भी नहीं करती हैं, प्रत्युत तज्जन्य कष्टको शांति और साहसके साथ सह जाती हैं। जब कि हमारी बहुत सी बहनें तो थोड़ी सी आपत्ति आने पर ही अपने साहस और धैर्यको खो बैठती हैं, रोने तथा विलाप करने आदिकी ओर अग्रसर हो जाती हैं और उससे अपनी रक्षा करनेमें भी आपको असमर्थ पाती हैं। तथा अपने इस कायर एवं दब्बू स्वभावके कारण अबलापनको प्रकट कर देती हैं, जो उन्हें हमेशासे बलहीन अशक्त और कायर बनाये हुए हैं, उन्हें चाहिये कि वे हमारी चरितनायिका बाईजीके जीवनसे शिक्षा ग्रहण करें, और पूर्वकालमें हुई आर्य ललनाओंका—वीरांगनाओंका—जीवन-परिचय पढ़ें और उनके द्वारा अपनाए हुए वीरोचित कर्तव्यका यथार्थ पालन करते हुए अपनेको साहसी, सबला और कर्तव्य दक्षा बनाएँ।

चरितनायिका बाईजीको प्रमाद तो छूकर भी नहीं गया है, मालूम होता है आपने छोटी अवस्थासे ही प्रमादपर विजय प्राप्तकी है, इसी कारण समाज-सेवा, दैनिकचर्या और निज कर्तव्य पालनमें प्रमादका लेश भी नहीं है। आपका स्वभाव प्रशांत और गम्भीर है। दूसरोंका उपकार करना तो आपके जीवनका खास अंग बन गया है। जो व्यक्ति कुछ समयके लिये आपके सत्समागमका रसास्वादन कर लेता है वह आजन्म परोपकारके महत्वको कभी नहीं भूल सकता और न उसके मूल्य एवं स्वभावसे अपरिचित ही रह सकता है। विद्यासे विशेष अनुराग होनेके कारण आप सदैव अशिक्षित बालक-बालिकाओं और अनपढ़ एवं अशिक्षित स्त्रियोंको पढ़ानेका प्रयत्न तो करती ही रहती हैं। किंतु कुछ समय उपरोक्त कन्यापाठशालाकी सेवामें भी देती हैं। और प्रतिदिन कुछ स्त्रियोंको घर पर बुलाकर उन्हें नियमपूर्वक शिक्षा देनेमें कुछ समय देती थीं। परोपकारकी विशेष लगन एवं रुचि होनेके कारण आप कभी कभी अपने स्वास्थ्यकी भी चिन्ता नहीं करतीं। वैसाख और ज्येष्ठ मासकी भीषण गर्मीके दिनोंमें भी जब कि धनिक पुरुषोंकी स्त्रियाँ खसके पर्दोंसे बाहर निकलना नहीं चाहतीं, तब भी आप २ बजेसे ४ बजे तक दो घण्टे शहरके मंदिरके मकान पर—जो अपने मकानसे कुछ दूरी पर स्थिति है—बालिका और स्त्रियोंको पढ़ाने जाया करती थीं। आपने कई वर्ष तक इस तरह शिक्षाका कार्य किया है।

आपका हृदय बड़ा ही दयालु है—दूसरोंके दुःखोंको आप कभी नहीं देख सकतीं—यदि कोई दीन-दुःखी, दरिद्री सामने

दिखाई देता है, अथवा किसी दीन दुःखी जीवके विषयमें आपको विश्वस्त सूत्रसे पता चलता है—कि अमुक पुरुष या स्त्री दुःखी है, तब आप सुनने या देखनेके साथ ही उसके प्रतीकारका उपाय करती हैं और अपनी शक्ति भर तन-मन-धनसे दुःख दूर करने तथा उसे निरोग बनानेका यथेष्ट प्रयत्न करती हैं। आपने समय समय पर अनेक रोगी स्त्री-पुरुषोंकी द्रव्यादिसे सहायताकी है और करती रहती हैं। आस-पासके गांवोंकी स्त्रियाँ कभी कभी आपकी निस्वार्थ-सेवा अथवा परोपकारताको सुनकर रोगादि व्याधि जन्य कष्टके समयमें सहायतार्थ आती हैं। और आप कभी भी इस प्रकारके व्यक्तियोंको निराश नहीं लौटातीं। सदैव यथा साध्य उनके दुःख दूर करनेका प्रयत्न करती हैं। आपने कितने ही असमर्थ गरीब छात्रोंको छात्रवृत्ति देकर उन्हें पठन-पाठनमें आर्थिक सहयोग दिया है।

इसके सिवाय, आप अपने कर्तव्य-पालनसे कभी नहीं घबड़ातीं; क्योंकि दैववशात् बाला-विश्राममें जब कोई छात्रा बीमार पड़ जाती है तब आप उसकी परिचर्या, सेवा-सुश्रूषा और औषधोपचार आदिका समुचित प्रबंध करती हैं, बीमारीका अधिक प्रकोप होने पर भी कभी नहीं घबड़ातीं, और न रोगोके इलाजमें किसी प्रकारकी शिथिलता ही आने देती हैं। उस समय आप अर्थके अधिक व्ययका भी कोई खयाल नहीं करतीं; किन्तु अपने परिजनों के समान ही उसकी परिचर्या स्वयं करतीं और दूसरोंसे करवातीं हैं। और रोगीको औषधोपचारके साथ साथ धार्मिक उपदेश भी देती रहतीं हैं, जिससे रोगीके चित्तमें अशान्ति न बढ़े, और

उसकी वेदना भी हल्की हो सके। आपने सैकड़ों रुपये खर्च करके कितनी ही छात्राओंको मृत्युके मुखसे बचाया है। डाक्टर और वैद्य भी आपके इस निस्वार्थ सेवा भावको देखकर दंग रह जाते हैं—कभी तो उन्हें बड़ा ही आश्चर्य होता है जब कि आप स्वयं किसी असहाय रोगी बालिकाकी परिचर्या करती हुई दृष्टिगत होती हैं। आप इस सेवा-सुश्रूषाको किसी मान-बड़ाई अथवा ख्याति-लाभ और पूजादिकी दृष्टिसे नहीं करतीं, प्रत्युत उसे अपना कर्तव्य समझती हैं। साथ ही, यह भी महसूस करतीं हैं कि यदि हम समर्थ होते हुए भी दूसरोंके संकटके समय सहायक नहीं होंगे, तब फिर स्वकीय असातोदयमें हमारा कौन सहायक होगा। दूसरे सुदूर-देशोंसे आई हुई ये बालिकाएँ अथवा विधवा बहनें हमारे ही आश्रित हैं। यहाँ हमलोगोंके अतिरिक्त इनका और हितू नहीं है। ऐसी हालतमें हमें इनके दुःखको अपना दुःख समझ कर उसे दूर करनेका प्रयत्न करना और भी अधिक जरूरी है।

एक समय बाला-विश्राममें दक्षिण-देशकी दो छात्राएँ लक्ष्मी-देवी और सरस्वतीदेवी एक साथ ही रोग ग्रस्त हुईं। औषधोपचार करनेके बावजूद भी पूर्वोपार्जित असाता कर्मके तीव्र उदयसे उनका रोग दिन पर दिन ही बढ़ता चला गया। इन दोनों छात्राओंमेंसे एक बालिका थी, और दूसरी अल्पवयस्क विधवा। रोगोपचारका भारी प्रयत्न होने पर भी दोनोंकी हालत सुधरनेके बजाय गिरती ही जाती थी, और जो भी उपाय या प्रयत्न किये जाते थे वे सब प्रायः असफल ही सिद्ध हो रहे थे। दोनों ही

छात्राएँ टाईफाइड—डबल-निमोनिया आदि भयंकर रोगोंसे घिरी हुई थीं, और मालूम होता था कि मानों दोनों मृत्युके सन्निकट पहुँच रही हैं। चरितनायिका बाईजीने इनके इलाजके लिये एक एक दिनमें ४-४ बार डाक्टरोंको बुलाया। उस समय आरा शहर में ऐसा कोई भी प्रसिद्ध डाक्टर या वैद्य अवशिष्ट नहीं था, जिसे बाला-विश्रामकी इन छात्राओंके लिये बुलाया न गया हो। अस्तु,

आराके प्रसिद्ध डाक्टरोंकी पारी पारीसे दावाओंका सेवन करते हुए और महीनोंकी भीषण यातनाओंको सहते हुए दोनों ही छात्राएँ रोगसे मुक्त हुईं। इन छात्राओंकी परिचर्यामें आश्रमके अन्य-कार्य कर्ताओंने भी भारी श्रम किया, जब कभी ऐसा मालूम पड़ता था कि शायद अब ये न बचेंगी, तब बाईजी उन्हें मीठे और सरल शब्दोंमें धर्मका स्वरूप समझतीं थीं और इस तरह उनके परिणामोंको संक्लेशतासे हटातीं और वैराग्यकी ओर अग्रसर करतीथीं। आप स्वयं कई सप्ताह तक रात-दिन सतर्क रहती थीं कि कहीं जरा सी असावधानीसे इनकी मृत्यु न हो जाय, सदैव उनके उत्थानका ध्यान रखतीं और क्षणमात्र भी शांति नहीं लेती थीं। इन दोनों छात्राओंको निरोग हुआ देखकर आरा नगरके समस्त स्त्री पुरुषोंके आश्चर्यकी सीमा न रही, और सभी उक्त पं० जीके सेवा-कार्यकी प्रशंसा करने लगे।

इसी तरह इतनी बड़ी संख्यामें रहनेवाली छात्राओंमें कभी किसी न किसी छात्राको कुछ न कुछ व्याधिका सामना करना ही पड़ता है। परन्तु पाठकोंको यह जानकर विशेष आश्चर्य होगा कि उक्त बाईजीको रोगोंसे घृणा छू तक नहीं गई है; प्रत्युत जिन

रोगोंके विषयमें संसारमें यह बात प्रचलित है कि चेचककादि रोगोंमें रोगीके पास नहीं बैठना चाहिये; अन्यथा यह रोग तुम्हें भी लग जायगा। ऐसी मान्यताएँ प्रचलित होते हुए भी बाईजी ऐसे रोगीकी परिचर्यासे कभी भी मुख नहीं मोड़तीं, और न इनके हृदयमें घृणाका आंशिक भाव ही कभी जागृत होता है। वास्तवमें ऐसे रोग तो उन कमजोर दिलवालोंको ही सताते हैं जो उक्त मान्यताओंके कारण भयभीत रहते हैं। परन्तु आप रोगीकी परिचर्या—एवं सेवा-कार्यमें बड़ी दक्ष और सहन-शीला हैं, कोई कैसा ही असाध्य रोग क्यों न उदित हो जाय, फिर भी आप साहसा घबड़ाती नहीं हैं और न दूसरोंकी तरह हतोत्साह ही होती हैं आप रोगीकी परिचर्या करती हुई महीनों नींद और आरामको भी भूल जाती हैं। उस समय आपका एकमात्र प्रधान लक्ष्य रोगीकी परिचर्या करना होता है, और उसीकी रात-दिन चिन्ता रहती है। जब कभी घरमें रोगादिका उद्रव हो जाता है, तब आप उसमें अपना विशेष योग देती हैं। स्वभाव बड़ा ही मृदु और दयार्द्र तो है ही, साथ ही सहिष्णुता और कर्तव्य-परायणता आपमें बहुत अधिक मात्रमें पाई जाती है। मामूली सा रोग हो जाने पर भी आप सचिन्त्य हो जाती हैं और फिर उस रोगके निदान एवं चिकित्साकी ओर अपनी शक्ति लगानेका प्रयत्न करती हैं। और थोड़े ही दिनोंमें उस रोगसे रोगीको मुक्त करनेमें सहायक हो जाती हैं। यदि आपकी निस्वार्थ-सेवाओं और परोपकार-सम्बन्धी सभी घटनाओंका उल्लेख किया जाय तो उनसे एक खासा ग्रन्थ तय्यार हो सकता है। परन्तु इस छोटी सी पुस्तकमें उन सभी घटनाओंके

उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं, फिर भी पाठकोंकी जानकारीके लिये उनमेंसे सिर्फ यहाँ एक दो घटनाएँ बतौर नमूनेके नीचे दी जाती हैं।

एक समय आरामें प्लेगका तीव्र वेग जोरोंसे बढ़ा, इस रोगसे भय-भीत होकर नगरके धनी मानी सेठ और कुछ साधारण जनता नगरसे बाहर अपने बाग-बगीचोंमें चली गई। चरित्रनायिका बाईजी भी अपने कौटुम्बिक परिजनोंके साथ शहरसे बाहर उद्यानमें स्थित बंगलेमें चली गई थीं। परन्तु दुर्दैववशात् उसी समय आपकी पाठशालाकी अध्यापिका जानकीबाई अस्वस्थ हो गई—उसको प्लेगकी गांठ निकल आई। ऐसी स्थितिमें पाठक शायद यह समझें कि उक्त पंडिताजीने ऐसे विकट अवसरों पर अपने कर्त्तव्यका पालन न किया होगा? क्योंकि यह रोग इतना भयानक है कि दूसरे रोगियोंके संसर्गसे ही अधिकतर फैलता है। इस रोगसे बहुत कम लोग मृत्युसे बच पाते हैं। ऐसी स्थितिमें जो सहृदय धीर-वीर एवं निर्भीक सज्जन होते हैं, वे इस रोगकी कभी भी परवा नहीं करते; और न रोगियोंको छोड़कर भागते ही हैं; प्रत्युत उनकी यथा योग्य सेवा-सुश्रूषा कर उन्हें उससे उन्मुक्त करनेका सतत प्रयत्न करते हैं। आपके कौटुम्बिक परिजनोंका विशेष आग्रह होने पर भी आपने उनके भारी अनुरोधको टाल दिया और अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहीं। समस्त कुटुम्बियोंको उनके बाल-बच्चों सहित घर भेज दिया और आप अपनी ननद नेमसुन्दरबाईजीके साथ वहीं पर रहीं और उक्त अध्यापिका जानकीबाईकी बड़ी सेवा-सुश्रूषा की; परन्तु उसकी मृत्यु सन्निकट आ चुकी थी, इस

कारण उसपर उपचारका कोई असर नहीं हुआ। तब आपने सद्धर्म की महान् औषधिका उपयोग किया। और उसके पास बैठकर बड़ी मुस्तैदीसे उसके परिणामोंको अशान्तिसे बचाती रहीं, कुछ समय बाद धर्म श्रवण करते हुए उसके प्राण-पखेरु इस असार संसारसे कूंच कर गए। तब आपने उसकी अन्त्येष्ठी क्रिया भी बड़ी सावधानी और धैर्यके साथ सम्पन्न की। यह सब सेवा-कार्य करते हुए आपको प्लेगका ज़रा भी भय नहीं हुआ। इस तरहकी अनेक घटनाएँ आपके जीवन कालमें बराबर घटित होती रहती हैं। परन्तु आप उन सबको निर्भीकतासे सह लेती हैं और कर्त्तव्य विहीन नहीं होतीं इससे पाठक बाईजीकी निर्भयता और कर्तव्य-निष्ठाका अन्दाजा लगा सकते हैं, वे विपदाओंके समागमसे घबड़ातीं नहीं और न साता परिणति रूप सांसारिक सुखसे आप प्रफुल्लित ही होती हैं, किन्तु इनमें आप मध्यस्थ भाव रखती हैं। तत्त्वज्ञानके विकाससे जब सद्दृष्टि प्राप्त हो जाती है—आत्म स्वरूपका बाधक दर्शनमोह चला जाता है—तभी वास्तविक आत्मनिर्भयता और सत्साहस एवं धैर्यका विकास होता है। संसार में सद्दृष्टि ही महापुरुष होते हैं। अनेकान्त दृष्टि ही सद्दृष्टि है। जो इस समीचीन दृष्टिको भूल जाते हैं, संसारमें उनकी कोई प्रतिष्ठा नहीं होती।

बाईजीमें कर्तव्य पालन और सेवाकी वह स्प्रिट अब भी ज्योंकी त्यों रूपसे विद्यमान है। और वे उसे समय आनेपर बराबर काममें लाती रहती हैं। अभी अक्टूबर सन् १९४२ में बाईजी अतिशय क्षेत्र महावीरजीकी यात्रा करती हुई मथुरा अपने

पितृगृह भी गई थीं; वहां एक जैन वृद्धा-महिलाको जो रिश्तेमें बाईजीकी बुआ दादी होती हैं। इनकी उम्र इस समय ९० वर्षकी है। उठना बैठना दूसरे व्यक्तिके सहारेसे ही करती हैं। तब उक्त वृद्धाने कहा मुझे अपने साथ ले चलिये और आरामें ही समाधि-मरण करा दीजिये। इसे बाईजीने सहर्ष स्वीकार कर लिया। और उसे अपने साथ आरा ले आईं, और उसकी परिचर्याका यथोचित प्रबंध भी कर दिया है। चूंकि देशकी परिस्थिति इस समय विषम है और युद्ध स्थितिके कारण आजकल सफर करनेमें बड़ी कठि-नाइयां उपस्थित हो गई हैं। फिर भी आप उक्त वृद्धाको इतनी दूरसे साथ ले आईं, मार्गमें ट्रेन पर जो महिलाएँ मिलीं, जब उन्हें यह मालूम हुआ, तब कहने लगीं कि आपमें बड़ा साहस है, जो इस वृद्धाको अपने साथ इतनी दूरसे सानंद ले जा रही हैं और रात्रि भर उनकी देख रेखमें लगी हुई हैं। जब कि घर पर स्वजनोंसे भी अपने वृद्ध कुटुम्बियोंकी सेवा-सुश्रूषा करना कठिन हो जाता है और कभी कभी तो उसे छोड़ भी देते हैं, परन्तु आप यह जानती हुई भी दूसरोंकी सेवा-सुश्रूषासे नहीं घबड़ातीं, यही आपके जीवनकी विशेषता है।

पर्दाप्रथाके सम्बन्धमें पं० चन्दा-बाईजीके विचार

भारतवर्षके कितने ही प्रदेशोंमें पर्दाप्रथाका रिवाज कुछ अर्सेसे चला आता है। यद्यपि इसका निश्चित इतिहास अभी प्रकट नहीं हुआ कि पर्दाप्रथा कबसे कायम हुई है ? परन्तु इस प्रथाका प्रचार प्रायः मुसलमानी बादशाहतके समयसे हुआ समझा जाता है। इस प्रथाने आज बड़ा ही उग्ररूप धारण कर लिया है। यह प्रथा स्त्री-समाजके लिये बड़ी ही घातक है। सैकड़ों स्त्रियां इसके कारण अपने बहुमूल्य जीवनसे हाथ धो बैठी हैं और कितनी ही क्षयरोगका ग्रास बन चुकी हैं और बन रही हैं। परन्तु फिर भी समाजमें इस पर्दाप्रथाका रिवाज उठा देनेके लिये कोई जोरदार प्रयत्न नहीं किया गया। और न उसमें उचित सुधार ही किया गया। इसीलिये पर्दासे होने वाली हानियां अब भी उसी तरह हो रही हैं। इसके कारण ही यदि किसी स्त्रीका पति कभी आकस्मिक बीमार हो जाता है तब स्त्री जेठ, ससुर और सास आदिके रहते हुए अपने जीवन सर्वस्व पतिकी कोई सेवा नहीं कर पाती और न उनसे कोई बात-चीत ही कर सकती है। इसके सिवाय, गृही कुटम्बीजनों और रिश्तेदारों आदिसे तो पर्दा किया जाता है; परन्तु चूड़ी पहनाने वाले मुसलमान मनिहार और नौकर-चाकरोंसे कोई पर्दा नहीं किया जाता। पर्देकी इस विकृतिसे आज भारतवर्षमें पर्देका वह उद्देश्य विलुप्त हो गया है जो इसकी तहमें छुपा हुआ था और जिसे आत्मरक्षा एवं शील-संयमादिकी रक्षाका ध्येय बनाया

गया था। पं० चन्दाबाईजी ऐसे पर्देकी कायल नहीं हैं जिससे स्वास्थ्यको हानि पहुँचती है और जो शील-संयमादि तथा धर्म सेवनादि कार्योंमें बाधक है—रुकावट पैदा करता है—और जिसे रखते हुए आत्म रक्षादिमें प्रवृत्ति नहीं हो सकती। आप उसे अनावश्यक और घातक समझती हैं। साथ ही, आप ऐसी बेपर्दगी भी नहीं चाहतीं जो प्राचीन आर्य संस्कृतिको विलुप्त करने वाली है और पाश्चात्य सभ्यताके रंगमें रंगने वाली है तथा जो आर्य सभ्यता एवं शिष्टताके प्रतिकूल पड़ती है। आप उस पर्देको पसन्द करती हैं जिससे उक्त कार्योंके साधन में कोई हानि नहीं पहुँचती। आपका विचार है कि स्त्रीका पर्दा लज्जा और शील-संयम एवं अपनी दृष्टिको पुरुषोंसे बात-चीत करते हुए नीची रखना और निर्विकार रूपसे अपनी प्रवृत्ति करना है। स्त्रीका आभूषण लज्जा, विनय और शीलकी रक्षा करना है, वास्तवमें स्त्री और पुरुषका भूषण शीलका निर्दोष पालन है। इसके बिना उनके जीवन का कोई मूल्य नहीं—वह चाहे कितने ही रूपवान् और वस्त्रा-भूषणोंसे अलंकृत हों; परन्तु शीलके बिना उनकी कोई शोभा नहीं।

आरामें पर्दा-सिष्टमका आम रिवाज़ है—वहां बड़े बड़े घरोंकी बहु-बेटियोंमें बहुत अधिक पर्दा किया जाता है। इसके कारण आपको अपने विद्याभ्यासादिमें कितनी ही कठिनाइयाँ उठानी पड़ी हैं, फिर भी आप अपने कार्यमें सफल हुई हैं; क्योंकि आपका लक्ष्य विशुद्ध था और विद्याके प्रचारकी उत्कट भावना थी। अतः आपने इस प्रथाके बावजूद भी डोलीमें बैठकर दूसरोंके घर जाकर शिक्षणका कार्य किया है—वहांकी अनपढ़ एवं अशिक्षित स्त्रियों

और बालिकाओंको शिक्षित बनाया है। उसीका फल है कि आज आरा स्त्री-शिक्षाका एक केन्द्र बन गया है और वहाँसे विभिन्न प्रान्तोंकी विधवाएँ और बालिकाएँ शिक्षित होकर अपने जीवनको सफल बनानेमें समर्थ हो सकी हैं—कितनी ही विधवाएँ तो शिक्षित होकर शिक्षाके पुनीत कार्यमें जुटकर अपना जीवन आनन्द-मय व्यतीत कर रही हैं। यह सब उक्त चरितनायिका बाईजीकी निःस्वार्थ-सेवाका फल है। बाईजीके पर्दा सम्बन्धी इस विचारसे स्त्री-समाज अपने पर्दासिष्टमके रिवाजको—पर्दा विषयक रूढ़ियोंको—परास्त करेगी अथवा उनमें समुचित सुधार कर पर्दासे होने वाली हानियोंको दूर करनेका प्रयत्न करेगी। और आर्य संस्कृतिके अनुसार शील-संयम-लज्जा और विनयादिका वह पर्दा रखना उचित समझेगी, जिससे स्त्री-समाज अपने अबला एवं कायर स्वभावका परित्याग कर सके और सबला तथा मातृ गौरवके महत्वके महत्वसे अपनेको उद्दीपित कर सके, एवं धर्म-देश और समाज-सेवामें एक वीराङ्गनाकी भांति अपना कर्तव्य अदा कर सके और विपदाओंके आने पर उनका समुचित प्रतीकार करते हुए अपने अटूट धैर्य, साहस एवं पराक्रमका परिचय दे सके।



पण्डितजीकी पूजनीया माता—श्रीमती स्व० राधिकादेवीजी

पं० चन्दाबाईजीके माता-पिताका स्वर्गवास

चरितनायिका बाईजीकी माता श्रीमती राधिकादेवी बड़ी सुयोग्य एवं चतुर महिला थीं, उन्होंने अपने जीवनका बहुत कुछ भाग दूसरोंकी सेवामें गुजारा है। यह लोक-सेवा जैसे कार्योंमें बड़ी दिलचस्पी रखती थीं। यद्यपि इनके पतिदेव बा० नारायणदासजी प्रायः बीमार ही रहा करते; परन्तु फिर भी इनको यह दृढ़ विश्वास था कि मेरा मरण सौभाग्यावस्थामें ही होगा। जब कभी आप अपने भोले स्वभावके कारण इस बातका दूसरोंसे जिक्र कर देती थीं तब वे सब इनकी हंसी उड़ाते थे, और इनकी बातको गलत साबित कर देते थे। परन्तु हुआ वही, जो यह चाहतीं थीं—अर्थात् इनका स्वर्गवास ६० वर्षकी अवस्थामें पतिदेव बा० नारायणदासजीसे दो महीने १७ दिन पहले ही माघकृष्णा चतुर्दशी सन् १९३३ को एकाएक हो गया। वे पुत्र-पुत्रियों और पौत्रों आदिसे सम्पन्न घरको छोड़कर सदाके लिये चली गईं।

चरितनायिका बाईजीके पिता बा० नारायणदासजीमें देश और समाज-सेवाकी वह अटूट लगन एवं उत्साह वृद्धावस्थामें भी कम नहीं हुआ था। इस अवस्थामें भी उनके अदम्य उत्साह और सख्त परिश्रमको देखकर लोग दंग रह जाते थे। अन्तिम दिनोंमें उक्त बा० साहबका लक्ष्य स्वकीय आर्थिक उन्नतिकी ओर गया और उन्होंने उसे कृषि आदिके द्वारा खूब ही बढ़ाया; इससे पहले तक आपका जीवन प्रायः सार्वजनिक कार्य-क्षेत्रमें ही लगता था,

परन्तु अब आपने सुदृढ़ परिश्रम द्वारा शक्करका कारखाना खोल दिया, और उसका कार्य भी अच्छा चल निकला।

मृत्युके तीन मास पूर्व इन्हें एक विवाहमें सम्मिलित होना पड़ा था, जिससे वे बीमार पड़ गए। एक महीने तक मथुरामें आराम करने पर भी शारीरिक स्वास्थ्यमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ, किन्तु जो कुछ भी स्वास्थ्य लाभ हुआ उससे पहले जैसा परिश्रम कर सकना उनके लिये नितान्त कठिन था; परन्तु घर पर आराममें पड़े रहना उन्हें बिल्कुल ही पसंद नहीं था। अतः ज्येष्ठ पुत्रके बार बार मना करने पर भी आप एक दिन मोटरमें बैठकर पासके इलाकेमें शुगरका काम देखने और प्रबंध करनेके लिये चल ही दिये। और वहां एक महीने तक बराबर काम चलाते रहे परन्तु चैत्रमासके दिनोंमें इन्हें एक दिन बुखार आ गया और वह क्रमशः बढ़ता हुआ १०४ डिग्री तक पहुँच गया। इसी अवस्थामें वे मोटर द्वारा मथुरा लाए गए और उनका अच्छे होशियार एवं अनुभवी चिकित्सकों द्वारा इलाज कराया गया, बहुत उपचार करने पर भी, उनकी दशामें ज़रा भी सुधार होता हुआ दिखाई नहीं दिया, और ११ अप्रैल सन् १९३३ को इनका स्वर्गवास हो गया। इनकी मृत्युसे लोकका एक सजीव-सेवक, कर्मठ एवं निर्भीक व्यक्ति मथुरासे सदाके लिये उठ गया।

सादगी और धर्मध्यान

धर्म-साधनके साथ साथ आपका कुछ समय तो परोपकार और समाज-सेवामें ही व्यतीत होता है। परन्तु इनसे अवशिष्ट समयको भी आप अपने आत्म-हितमें जरूर लगाती हैं। और अपनी दैनिकचर्यामें कभी भी कोई अन्तर नहीं आने देतीं। देवपूजा, गुरुउपासना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान इन गृहस्थोचित षट् कर्तव्योंका भली भांति पालन करती हैं और व्रत-उपवास आदिके अनुष्ठान तथा आत्मचिंतन और स्वाध्याय द्वारा इन्द्रियोंका दमन और कषायों पर विजय प्राप्त करनेका प्रयत्न करती रहतीं हैं। दयालुता और परोपकारता तो आपके जीवनके खास अंग हैं ही।

आत्म साधनके साथ साथ आपका जीवन बड़ी सादगीसे व्यतीत होता है। आपका रहन-सहन बिल्कुल ही सादा है और भोजन अत्यन्त सात्विक, सादा, शुद्ध और मर्यादाके अनुकूल ही रहता है। १७-१८ वर्षोंसे तो आप एकबार ही भोजन करती हैं। और हाथके कते बुने हुए शुद्ध खादीके वस्त्रोंको ही सदा काममें लातीं हैं। स्वभावसे आप बहुत ही विनम्र और प्रकृतितः भद्र हैं। चुनांचे आपका शरीर भी आन्तरिक भद्रताको प्रकट करता है। आपका स्वभाव बड़ा ही मिलनसार और वात्सल्यभावको लिये हुए हैं आपके कर्मचारी गण आपसे सदा ही प्रसन्न रहते हैं। और आपका समुचित आदर सत्कार करते रहते हैं। ब्रह्मचर्यकी प्रतिष्ठा होनेसे शारीरिक ओज और तेज दोनों ही सहोदर भाईके समान रहते हैं। आपके धार्मिक और नैतिक जीवनकी छाप आपके

कुटुम्बीजनों और बाल-विश्रामकी छात्राओं पर तो पड़ती ही है। परन्तु कभी कभी नवागन्तुक सज्जन भी आपके सद् व्यवहारसे प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। आप अपने वचनों पर सदा दृढ़ रहती हैं और जो कुछ किसीसे कह देती हैं उसे पूरा करनेका बराबर ध्यान रखती हैं। धार्मिक कार्योंसे अविशिष्ट समयको भी व्यर्थ नहीं जाने देतीं—उसे परोपकार या समाज-सेवा जैसे ठोस कार्योंमें लगा देती हैं। गृहस्थावस्थामें रहते हुए कभी कभी ऐसे समय भी उपस्थित हो जाते हैं जब क्रोधादि कषायका सहज ही उदय हो जाया करता है। परन्तु आप ऐसे समयमें भी उसे बुद्धिपूर्वकरोकनेका प्रयत्न करती हैं और दैवयोगसे यदि वह उदित ही हो जाता है तब उसे वस्तु तत्त्वके विवेचनसे शान्त करनेका प्रयत्न करती हैं और जब वह प्रशान्त हो जाता है तब यह विचार करती हैं कि—हे आत्मन् तेरा स्वभाव तो क्रोधी नहीं है, तेरा स्वभाव तो ज्ञाता दृष्टा है—जानना, देखना है। तू व्यर्थ ही अपने चिदानन्द स्वभावका परित्याग कर इन पर-पदार्थोंकी परिणतिसे असंतुष्ट होकर क्रोधादिका अवलम्बन लेता है। यह समुचित नहीं। इन पर-पदार्थोंका परिणमन तेरे आधीन नहीं, ये तो अपने परिणमनके आपही कर्ता-धर्ता हैं। इनकी विकृति परिणतिसे तुझे जो असंतोष होता है, वह तेरी कमजोरी है—बुजदिली है, मोहका विलास है और यही आत्म-पतनका कारण है। सद्दृष्टि पुरुष कभी भी इनकी (पर-पदार्थोंकी) शुभाशुभ परिणतिसे खेदित नहीं होते; और न अपनेको इनका कर्ता ही मानते हैं। इसलिये उन्हें कभी भी क्रोधादि कषायोंका भाजन नहीं

बनना पड़ता। राग-द्वेष परिणति ही आत्माकी घातक है उनका परित्याग करना अथवा तत्त्वज्ञानके अभ्यास द्वारा उन्हें कृश बनाना ही आत्म पुरुषार्थ है, यही आत्महितका उपाय है। इन्हीं सब विवेक युक्त विचारोंसे आप क्रोधादिका शमन करती हैं, आत्म-निन्दा और गर्हादि द्वारा भी उसके विपाकको क्षीण बनानेका प्रयत्न करती रहती हैं। इस तरह धर्मका अनुष्ठान करती हुई आप अपना जीवन सादगी और सदाचारसे व्यतीत कर रही हैं, जो स्त्री-समाजके लिये अनुकरणीय हैं। आपका प्रयत्न तो अब अधिकतर आत्म-कल्याणकी ओर ही रहने लगा है।

आदहिदं कादव्वं जइ सक्कइ परहिदं च कादव्वं।
आदहिद परहिदादो आदहिदं सुट्ठु कादव्वं॥

इस गाथामें संकेतित आत्महितकी प्रधानताको ही अपना लक्ष्यबिन्दु बनाए हुए हैं, इसीसे अब आपने बाला-विश्राम सम्बन्धी और दूसरे सामाजिक कार्योंको गौण कर दिया है। यद्यपि इनकी विशेष चिन्ताके भारसे आप मुक्त हो गई हैं—उन्हें आपकी लघु-भगिनी श्रीमती व्रजवालादेवीने सम्हाल लिया है—फिर भी आपको इनकी देखरेखमें बहुत कुछ समय देना ही पड़ता है। इस सबको करते हुए भी आप धार्मिक क्रियाओंके अनुष्ठानसे अवशिष्ट समयको अध्यात्म ग्रन्थोंके मनन एवं परिशीलनमें लगाती हैं। और अध्यात्म रसके रसज्ञ विद्वान् पूज्य पं० गणेशप्रसादजी न्यायाचार्य जो ईसरीके संत हैं, प्रशान्त और दयालु हैं, तत्त्वज्ञानके साथ साथ देशचारित्रके धारक हैं। जिनकी निस्पृहता स्पष्टवादिता और अध्यात्मरसके कथनकी शैली बड़ी ही सरस और मनमोहक है।

जिनका सौम्य शरीर ही आन्तरिक भद्रता और कषायोपशमताको प्रकट करता है। जो एक भाव मुनिके सदृश हैं, जैन समाजके प्रमुख विद्वान् और शिक्षाके प्रसारक हैं। ऐसे संत पुरुष के पास जाकर और दो-दो, तीन-तीन मास ठहर कर आप समयसारादि अध्यात्म ग्रन्थोंका मनन करती हैं—आध्यात्मिक तत्त्वचर्चाके अभि-चिन्तन और श्रवण द्वारा आत्म-विकासका प्रयत्न करती हैं। और इस तरह आपसे इस दिशामें जो कुछ भी प्रयत्न हो सकता है उसे अवश्य कार्यमें परिणत करती रहती हैं।

जीवनकी कुछ घटनाएँ

प्रत्येक स्त्री पुरुषके सांसारिक जीवनमें कुछ न कुछ ऐसी भी घटनाएँ स्वयमेव घटती रहती हैं जिनसे आत्म परिणतिमें अनेक तरहके परिवर्तन स्वतः होते रहते हैं। इन घटनाओंमेंसे कुछ घटनाएँ तो आत्मविकासकी ओर ले जाती हैं और कुछ दूसरे ही निकृष्ट एवं अनिष्ट मार्गपर ले जानेका प्रयत्न करती हैं। परन्तु जो मानव घटने वाली अच्छी-बुरी घटनाओंके होते हुए भी अपने स्वरूपसे अथवा कर्तव्य मार्गसे नहीं चिगता प्रत्युत उनके प्रतीकारका उपाय करता है; परन्तु उनकी इष्टानिष्ट परिणतिसे अपनेको खेदित नहीं करता, यही उसका विवेक है। इस विवेकके जागृत रहने पर वे घटनाएँ चाहे कैसी भी भयानक क्यों न हों, किन्तु उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकतीं। प्रत्युत जो मानव साधारणसी छोटी छोटी घटनाओंके आने पर उनसे विचलित हो जाता है—जरासी विपत्ति या थोड़ा सा संकट आने पर ही अपने धैर्यको खो बैठता है—घबड़ा उठता है और किं कर्तव्य-विमूढ़ बन जाता है। वह कभी भी उनपर विजय प्राप्त नहीं कर सकता और न वह ऐसे समयमें अपनी रक्षा ही कर सकता है।

पंडिता चन्दाबाईजीके जीवनमें भी इस तरहकी साधारण अनेक घटनाएँ घटी हैं, उनमें कोई कोई घटना तो बड़ी ही भयंकर एवं जीवनको भी संकट में डाल देने वाली घटित हुई है। परन्तु फिर भी अपने कर्तव्य मार्गसे जरा भी विचलित नहीं हुईं और न आई हुई विपत्तिमें अपने धैर्य और साहससे उद्विग्न होकर पथ-भ्रष्ट

हुई किन्तु उसे समतासे सहन किया है; क्योंकि आप यह भलीभांति जानती हैं कि पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कर्मों का फल उदय आने पर अवश्य ही भोक्तव्य होता है—वह बिना भोगे नहीं छूटता। यदि उसे अशान्ति, पश्चाताप या रोने और विलापादि करके सहन किया जाय तब भविष्यमें फिरभी ऐसे ही अशुभकर्मोंका फल भोगने के लिये बाध्य होना पड़ेगा, इससे उसे यहीं पर-शान्तिसे क्यों न सह लिया जाय, जिससे फिर इस प्रकारके संकटका समय उपस्थित ही न हो। दूसरे संसारके महापुरुषोंको अनेक भीषण विपत्तियों एवं कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा है परन्तु वे अपने कर्तव्य मार्गमें कभी भी विचलित नहीं हुए हैं। मुझे तो यह थोड़ा सा ही संकट उपस्थित हुआ है। अतः ऐसे अवसर पर मुझे अपने धैर्य तथा साहसका अवलम्बन करना अच्छा है और विवेकसे कार्य करते हुए मुझे उसके प्रतीकारका समुचित उपाय करना भी ज़रूरी है। इन्हीं सब विचारोंसे आपने आए हुए संकटोंका सामना किया है—उनपर विजय प्राप्त की है। पाठकोंकी जिज्ञासा पूर्तिके लिये यहां उदाहरणके तौर पर घटनाएँ नीचे दी जा रही हैं, उनसे पाठक सहजहीमें बाईजीकी धीरता, वीरता और दृढ़ता आदिका परिचय पा सकेंगे। वे घटनाएँ इस प्रकार हैं:—

१

एक समय चरितनायिका बाईजी अपने पितृगृहसे ससुराल रेल द्वारा अपने कुटुम्बीजनके साथ आ रही थीं। नौकर दूसरे कम्पार्टमेन्टमें था, साथके व्यक्ति भी दूसरे डिब्बेमें थे। इत्तिफाकसे जिस डिब्बेमें आप बैठी थीं वह बिल्कुल खाली था कोई दूसरी

महिला उस डिब्बेमें न थी, उस समय रेल ठहरानेकी चैन भी डिब्बेमें नहीं लगी थी। बाईजी अकेली ही बैठी थीं। इतनेमें एक वर्फ बेचने वाला खानसामा बारबार डिब्बेके पास आने लगा। इन लोगोंको चलती हुई ट्रेनमें भी पकड़ पकड़ कर एक डिब्बेसे दूसरे डिब्बेमें जानेका अभ्यास रहता है। उसे आता हुआ देख कर बाईजीको कुछ चिन्ता हुई कि यह दुष्ट शायद कोई उपद्रव न करे, मेरी अवस्था छोटी है और आभूषण तथा बहुमूल्य वस्त्रादि भी मेरे पासमें हैं। किन्तु दूसरे ही क्षण उसे आता हुआ देखकर आपकी चित्तवृत्ति पलट गई। और हृदयमें कुछ वीरताका संचार हो आया। और अपनी आत्मरक्षार्थ एक साधारणसा उपाय उसी समय सूझ पड़ा। बाईजीने एक लोटा अपने हाथमें लेकर उसी समय दरवाजे पर आकर खड़ी हो गईं, और यह विचार स्थिर हो गया कि कोई दुष्ट डिब्बेमें आनेका प्रयत्न करे तो उसे भीतर घुसनेसे पहले ही लोटेसे पीट कर मार भगाऊंगी। उस समय इनके शरीरकी आकृतिने कुछ विकराल रूप धारण कर लिया था—नेत्रोंमें लालिमा आ गई थी और उससे क्रोधकी स्पष्ट झलक दिखलाई देती थी, उसने दूरसे ही इनके शरीरकी वीरोचित और क्रोधयुत चेष्टाको देखकर डिब्बेमें घुसनेका साहस नहीं किया—यहां तक कि वह लौटते समय उधर झांका भी नहीं। पश्चात् जब स्टेशन आया तब ट्रेन रुकी, उस समय दूसरा इन्तजाम कर लिया गया। इस घटनासे दूसरी बहनोंको इतनी ही शिक्षा लेनेकी आवश्यकता है कि ऐसे अवसर प्राप्त होने पर अपने धैर्य और साहसके साथ अपनी आत्मरक्षाका प्रयत्न करना चाहिये।

और आगत आपदाका प्रतीकार करनेके लिये दृढ़ता और साहसके साथ तैयार हो जाना चाहिये।

२

किसी व्यक्तिको दुःखी देखकर उसके दुःखको दूर करनेके लिये आप प्राण-पणसे जुट जाती हैं। श्रीमान् बा० निर्मलकुमार-जीके सुपुत्र चिं० प्रबोधकुमारके विवाहमें एक स्त्रीकी लड़कीका किसीने आभूषण उतार लिया। इससे उसकी माता बड़ी दुःखी हुई। कन्याकी माताको दुःखी देख आपने उसका वह आभूषण स्वयं बनवानेका वचन देकर उसके कष्टको दूर कर दिया और विवाहोपरान्त उसे शीघ्र बनवाकर दे दिया।

एक गरीब सुनारका लड़का कुछ छोटे छोटे आभूषण लेकर विवाहके समय बेचनेको आया, और यह आशा लगाए बैठा रहा कि यहाँ अनेक धनी स्त्री-पुरुष आए हुए हैं कोई न कोई मेरे आभूषणोंको जरूर खरीद लेगा, जिससे मेरा काम चलेगा। परन्तु किसीने उससे बात तक नहीं की, बेचारा म्लान मुख किये घरको वापिस लौट रहा था कि इतनेमें पं० चन्दाबाईजीकी दृष्टि उस पर पड़ी। उसे म्लान मुख देखकर बिना किसी आवश्यकताके उसका एक आभूषण आपने इस आशयसे खरीद लिया कि बेचारे गरीब लड़के के हृदय पर कोई बुरा आघात न पहुँचे; और वह प्रसन्नता पूर्वक अपने घर जा सके। खरीदे हुए आभूषणको आपने किसी आदमीको दे दिया।

३

विवाहके समय एक और विचित्र घटना घटित हुई, और वह यह कि लगभग दश हजार रुपयेकी कीमतकी एक हीरेकी चैन लड़केके पहननेकी थी। वह एक दिन पहले ऊपरसे जा चुकी थी परन्तु उसे रखनेवाले व्यक्तियोंको उसका ठीक पता याद न होनेके कारण उसे पुनः मांगनेसे खोजनेमें बड़ी ही हड़बड़ी पड़ी। उस समय बाईजी सामायिक कर रही थीं। अब प्रश्न हल ही नहीं होता था कि उक्त चैन तालेमेंसे कहाँ गायब हो गई। अनेक कल्पनाओंके बाद जब उसका पता लगा कि वह मिल गई तब रखनेवालेको शान्ति हुई। यह व्यक्ति इनके निकट सम्बन्धी होने थे। यदि वह न मिलती तो उनके दुःख मानने पर बड़ा अनर्थ हो जाता। तब आपने गम्भीरतासे उत्तर दिया "ओह क्या बात थी दश हजारका अभी चेक काट देती वैसी बन जाती, ऐसा तो होता ही रहता है—गहनेके साथ तो खोना लगा ही हुआ है"।

४

धनुपुराके बड़े मंदिरजीमें चरित्रनायिका बाईजी और आपकी जिठानी श्रीमती अनूपमालादेवीजी चतुर्मासमें ठहरी थीं और अपना समय शास्त्र-स्वाध्याय, सामायिक और पूजन-पाठ आदिमें व्यतीत करती थीं। तब श्रावण शुक्ला त्रयोदशी ताः १० अगस्त सन् १९३८ को पासकी जमीनमें मुसहरों (चमारों) ने देवीकी पूजा प्रारम्भकी। बहुत लोग इकट्ठे हुए और बाजे बजाने लगे, तथा कुछ सुअरोंके चिल्लानेकी भी आवाज आई। इसी समय बाईजीकी

बहन श्रीमती ब्रजवालादेवीजी आपसे मिलने आई हुई थीं, वे इस मामलेको तुरंत समझ गई और कहा कि मालूम होता है कि बलिदान हो रहा है उसीका बाजा और यह दीन पशुओंकी चीत्कार अथवा आक्रंदन है। बस फिर क्या था दयालु बहनोंका हृदय दयासे आर्द्र हो आया और उसके निवारणार्थ उठ खड़ी हुईं, तथा प्रयत्न करने लगीं। आपने सिद्धांत शास्त्री पं० नन्हेलालजीको बुलाया जो कि बाल-विश्राममें अध्यापन कार्य करते थे। साथ ही, पासमें ठहरे हुए बा० धनकुमारचंद्रजी जैन, जो कि एक धर्मात्मा सज्जन हैं और द्वितीय प्रतिमाधारी हैं बुलवाया, और बाला-विश्रामके नौकर एवं सिपाही वगैरहको साथ लेकर घटनास्थल पर भेजा। इन लोगोंने वहाँ पहुँच कर देखा कि चार सुअर बड़ी बुरी दशामें बांध कर डाल रक्खे हैं और उनके बलिदानकी तय्यारी हो रही है। इन पशुओंकी भयानक वेदनाको देखकर ये सब लोग कांप गए, और उन चमारोंसे उन पशुओंको छुड़ा देनेके लिये उपदेश देना प्रारम्भ किया; परन्तु वे चमार बहुत बिगड़े और कहने लगे कि आप चाहे हम सबको गोलियोंसे अभी मरवा डालिये, किन्तु यह बलिदान नहीं रुक सकता है। ऐसी कठिन समस्यामें भी इन उपदेशक महाशयोंने अपना धैर्य नहीं छोड़ा और शाम-दाम-भय तथा भेद नीतिसे काम लिया और अन्तमें अहिंसाकी ही विजय हुई। चारों बंधे हुए मूक पशुओंको खोल दिया गया, जो खुलते ही इधर उधर भाग निकले। इसके सिवाय, सूअरोंके सात छोटे छोटे बच्चे (घेंटा) जो कि बलिदानके लिये रक्खे गये थे वे भी सब मुक्त कर दिये। इस हर्जानेके एवजमें मुसहरोंको २५) रुपये बाईजीने

दिये, जिनकी पूरी व मिठाई आदिसे उन लोगोंने अपनी पूजा समाप्तकी। जब तक यह उपसर्ग जारी रहा तब तक बाईजी निस्तब्ध होकर बैठी रहीं और अहिंसाधर्मके विजयकी भावना भाती रहीं। बलि की यह घोर प्रथा अब भी भारतवर्षमें यज्ञके शेषांश रूपसे अवशिष्ट रह गई है। इस प्रथाके द्वारा प्रति वर्ष लाखों करोड़ों मूक पशुओंको मौतके घाट उतार दिया जाता है—उन्हें जबर्दस्ती मार दिया जाता है, यह दृश्य कितना भयानक और दर्दनाक है इसे बतलानेकी आवश्यकता नहीं; किन्तु जो सहृदय स्त्री पुरुष हैं वे इसे भलीभांति जानते हैं। क्रूरता एवं नृशंसताकी द्योतक यह राक्षसी प्रथा आज भारतके लिये कलंक स्वरूप बनी हुई है। इस प्रथाका उन्मूलन करना ही प्रत्येक भारतीय स्त्री पुरुषका कर्तव्य है। इन घटनाओंके संक्षिप्त दिग्दर्शनसे पाठक और पाठिकाएँ पं० चन्दाबाईजीकी दयालुता, परोपकारता और सत्साहससे अच्छी तरह परिचित हो गये होंगे।

५

सन् १६२० ई० में पं० चन्दाबाईजी राजगिरि यात्रार्थ गई थीं और वहां एक सप्ताह रहकर भक्ति-भावसे तीर्थवन्दना कर आरा वापिस लौट रहीं थीं, कि मार्गमें यकायक रेलके दो डिब्बे पटरीसे नीचे उतर गये। डब्बोंके पटरीसे नीचे गिरनेके साथही तमाम ट्रेनमें जोरका एक धक्का लगा जिससे ट्रेनमें बैठे हुए सभी मुसाफिर भय-भीत हो गए। धक्केके कारण ट्रेनके सभी मुसाफिर अपने अपने स्थानसे च्युत होकर इधर-उधर गिरने लगे, और सामान भी ऊपरसे धमाधम गिरने लगा। बाईजीके साथ उस समय दो

महिलाएँ और एक सिपाही था। इन सब लोगोंकी दशा भी ऊपर लिखे अनुसार ही होने लगी—ये सब लोग भी अपनी-अपनी सीटोंसे नीचे गिर गये—ट्रेन रुक गई, और कोलाहलसे आकाश गुंजायमान होने लगा। कितनेही मुसाफिर ट्रेनसे उतर पड़े, कुछ भयसे कांपने लगे और कुछ रोने, चिल्लाने लगे। इनमेंसे कोई भगवान्‌का नाम लेता, कोई एक दूसरेको आवाज़ देकर बुलाना चाहता और कोई इस बातको जाननेकी कोशिश कर रहा था कि गाड़ी पटरीसे यकायक कैसे उतर गई? और कोई चोट खाए हुए मुसाफिरोंसे उनका हाल पूछता था, और उन गिरे पड़े मुसाफिरोंको उठानेकी चेष्टाकर रहा था। ऐसे समयमें चरित्रनायिका बाईजी भी ट्रेनसे उतरीं और अपने साथियोंसे कहने लगीं, कि जल्दी उठो और चले चलो। बिलम्ब होनेसे नहीं मालूम क्या क्या षडयंत्र रचे जायगें। हमें इन बातोंसे दूरही रहना चाहिये। हमें इस बातकी तहकीक़ात करने, गवाही या सहादत देनेकी जरूरत नहीं है। अपना सभी सामान यहीं पर छोड़ दो और पैदल मेरे साथ चले चलो। सामान भी कोई अधिक नहीं था, क्योंकि सामानको कम रखनेका अभ्यास तो पहलेहीसे था। इसे सुनकर रामशरण नामका एक पुराना सिपाही बोला, हजूर मैं सब सामानको सिर पर रखकर ले चलता हूँ। अपना कोई भी सामान यहां नहीं छोड़ सकता। तब उसने सामानको सिर पर रक्खा और अवशिष्ट सामानको सब व्यक्ति थोड़ा थोड़ा लेकर दो मिनटमें ही स्टेशन छोड़कर खेतों में चले गए। बाईजी जानती थीं कि पैसिंजर ट्रेन पास पासमें ही रुकती हैं इस कारण स्टेशन भी दूर नहीं होगा,

पैदल चल दीं, और थोड़ी ही देरमें विहारके स्टेशन पर आगई है, वहांसे दूसरी ट्रेनमें बैठकर आरा सकुशल आगई, नियमित समय पर आजानेके कारण किसीको उस समय इस घटनाका पता न चला, परन्तु धीरे धीरे बाईजीने उक्त घटना सभीको बतला दी। बाईजीमें निर्भय पुरुषों जैसा उत्साह और धैर्य है। इसीलिये वे ऐसे अवसर आने पर घबड़ाती नहीं, और न कायरोंकी भांति दीनता या कमजोरीका आश्रय ही लेती हैं।

जीवनकी विशेषताएँ

यों तो संसारमें सभी प्राणी अपना अपना जीवन व्यतीत करते ही हैं, परन्तु वास्तवमें जीवन उन्हींका सार्थक समझा जाता है जो अपने जीवनको आदर्श बनाते हुए देश, धर्म और समाजकी ठोस सेवा करते है। अपने स्वार्थोंकी बलि देकर परार्थके लिये जी जानसे जुट जाते हैं। चरितनायिका पं० चन्दाबाईजीने वैधव्यके महान् कष्टको सहन करते हुए विद्याका उपार्जन किया और अखण्ड ब्रह्मचर्यके तेजसे अपनेको उद्दीपित करते हुए भारतीय महिलाओंके लिये एक अनुपम आदर्श उपस्थित किया है, और सर्व साधारणको यह बतला दिया है कि स्त्रियाँ अब भी बाल ब्रह्मचारिणी रह सकती हैं—वे ब्रह्मचर्यका पालन करती हुई अपना जीवन यापन कर सकती हैं। और अपने धर्म तथा समाजकी ठोस सेवा कर सकती हैं। निर्भय तथा विदुषी बनकर शिक्षाके प्रसार एवं प्रचारमें जीवन लगा सकती हैं। इन्होंने अपने जीवनको सफल करनेके लिये जैन धर्म जैसे विश्वधर्मके सिद्धान्तोंका केवल अध्ययन और परिशीलन ही नहीं किया; किन्तु यथात्म-शक्ति उसे आंशिक रूपसे जीवनमें भी उतारनेका प्रयत्न किया है। साथ ही, अपनी सम्पत्तिको शिक्षा-प्रचार, तीर्थ-यात्रा, जिनमंदिर-निर्माण और गरीबों की सहायता आदि धार्मिक और लौकिक कार्योंमें लगाकर स्त्री-समाजके सम्मुख जो आदर्श उपस्थित किया है वह प्रशंसनीय ही नहीं किन्तु अनुकरणीय भी है।

आपके जीवनमें बहुत ही सादगी है—खान-पान, रहन-सहन

और वस्त्रादिके व्यवहारमें बहुत ही सादापन है। अपने पास अलमारी या बक्स वगैरह नहीं रखतीं, सिर्फ कपड़ेका एक थैला रखती हैं, उसीमें पहरने, ओढ़ने और बिछानेके भी कपड़े रहते हैं, जिनकी कुल संख्या २० से अधिक नहीं है, रुईका बिछौना अपने पास नहीं रखतीं, केवल चादर बिछाकर ही सोती हैं। और यथात्म-शक्ति संयमका आचरण करती हैं, उपवास रखती हैं और कषायों तथा इंद्रियोंको दमन करनेके लिये सदा प्रयत्नशील रहती हैं। स्वाध्याय एवं तत्त्वचर्चा द्वारा आत्मज्ञानको बढ़ाती रहती हैं। साधु-सन्तों और विद्वद्वर्य पूज्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी जैसे विद्वानोंके सत्समागमसे और उनके वैराग्यपूर्ण एवं सारगर्भित आध्यात्मिक भाषणों, विवेचनों और व्याख्यानोंसे भी समुचित लाभ उठाती रहती हैं।

समयका सदुपयोग करना आपके जीवनकी खास विशेषता है। इसीलिये आप कहा करती हैं कि समयका कोई मूल्य नहीं, वह अमूल्य है। उसके जो उपयोगी क्षण हम अपनी लापर्वाहीसे यों ही व्यतीत कर देते हैं वे करोड़ प्रयत्न करने पर भी पुनः वापिस नहीं आसकते। खोई हुई सम्पदा पुनः प्राप्तकी जा सकती है परन्तु गुजरा हुआ समय पुनः वापिस नहीं आ सकता। अतः प्रत्येक भारतीय स्त्री, पुरुषोंको चाहिये कि वे अपने समस्त कार्य निश्चित समय पर ही करें—उन्हें भविष्यके लिये न छोड़ें।

एकान्तवास

कुछ समयसे पं० चन्दाबाईजीको एकान्तवास अधिक प्रिय हो गया है। अष्टमी, चतुर्दशी और दश-लक्षणादि पर्वोंके अवसर पर सामायिकादिका अनुष्ठान किया करती हैं। एकान्त स्थानमें—जहां पर किसी किस्मकी कोई बाधा नहीं है जो स्थान सुन्दर एवं शान्ति-प्रद है ऐसे निर्जन स्थानमें—आत्म-साधन, तत्त्वचिन्तन तथा सामायिकादि धार्मिक क्रियाओंका अनुष्ठान भलीभांति किया जा सकता है। खासकर ऐसे मनोज्ञ स्थानों पर सत्समागम और समयसारादि अध्यात्म-ग्रन्थोंका अनुचिन्तन किया जा सकता है और ध्यानादिमें विशेष उपयोग लगाया जा सकता है, मनकी चंचलता भी दूर हो सकती है। और आत्मा सर्व विकल्पोंसे कुछ समयके लिये छुट्टी पाकर ज्ञान और वैराग्यकी ओर सविशेष रूपसे प्रवृत होने लगता है। इससे आत्मलाभके सिवाय दूसरा लाभ और भी होता है—वह यह कि गृही और सामाजिक कार्योंसे कुछ समयके लिये आपको छुटकारा मिल जाता है; क्योंकि कार्य चाहे गृहस्थीका हो या सामाजिक दोनों में ही कभी कभी चित्तकी अस्थिरता हो जाती है और किसी समय ऐसी झंझटें भी उपस्थित हो जाती हैं जिनसे चित्तमें बड़ा ही खेद उत्पन्न होता है। अतः मुमुक्षु जीवोंके लिये एकान्तवास बहुत ही उपयोगी है। इससे कुछ समयके लिये उपयोगकी स्थिरता तो हो ही जाती है, साथ ही अनायास मौनका लाभ भी हो जाता है। आत्मचिन्तन, स्वरूपानुभव और तत्त्व-विचारमें उपयोगकी एकाग्रता होनेसे जो आनन्द होता है वह

वचनातीत है उस समय गोष्ठी, कथा, कौतुहल और इन्द्रियोंके विषयोंका व्यापार बन्द हो जाता है और आत्मा मोह-ग्रंथीको भेदनेका प्रयत्न करता है परन्तु थोड़ी ही देरमें उपयोग भ्रष्ट होकर वही पुराना संस्कार जो अनादि कालसे इस आत्मामें लगा हुआ है हृदयको वेचैन बनाने लगता है; कषायोंका जितना भी दमन एवं उपशमन किया जाय आत्मामें उतनी ही निर्मलता बढ़ती जाती है, कषायोंकी शक्ति ज्यों-ज्यों क्षीण होती रहती है त्यों-त्यों आत्मबल की वृद्धि भी होती रहती है। स्वरूपानुभवमें परिग्रहका संग्रह अथवा उसके संग्रहकी अभिलाषा कितनी अधिक बाधक है इसे बतलानेकी आवश्यकता नहीं। इस अभिलाषाके रहते हुए स्वरूपानुभव कभी नहीं हो सकता। अतः जो मुमुक्षु हैं संसार समुद्रसे तरना चाहते हैं आत्मस्वरूपमें रत होकर वास्तविक स्वाधीनता प्राप्त करना ही जिनका विशुद्ध लक्ष्य है जो निजानन्द रसको पान करनेके अभिलाषी हैं उन्हें उभय प्रकारकी झंझटोंको छोड़कर एकान्त स्थानोंमें, जो चित्तकी स्थिरतामें निमित्त हो सकते हैं जाकर आत्माका साधन करना चाहिये। खासकर विदुषी बहनोंको तो अवश्य ही बाईजीके इस प्रशस्त मार्गका अनुसरण कर आत्म-साधनमें प्रवृत होना चाहिये।

दिनचर्या

बाईजी अपने जीवनको व्यवस्थित रूपसे चलानेके लिये दिनचर्या बना लेती हैं और फिर उस समय-विभागके अनुसार ही अपने सब काम निश्चित समय पर प्रतिदिन किया करती हैं। इस समय आपकी दिनचर्या निम्न प्रकार है:—

४ बजे प्रातःकाल शय्यासे उठना। ४ बजेसे ५ बजे तक एक घण्टा सामायिक करना। ५ बजेसे ६ बजे तक पाठ व शास्त्र-स्वाध्याय करना। ६ बजेसे ७ बजे तक भोजन सामग्रीका संशोधन। ७ बजेसे ८ बजे तक शौच और स्नान आदि बाह्य क्रियाओंसे निवृत्त होना। ८ बजेसे १० बजे तक जिनमंदिरमें पूजन और स्वाध्याय करना। १० बजेसे ११ बजे तक विश्राम और दैनिक पेपर वगैरहका अवलोकन। ११ बजेसे १२ बजे तक भोजन और विश्राम।

१२ से १ बजे तक मध्यान्ह सामायिक करना। और १ से ४ बजे तक लिखा पढ़ी करना, लेख लिखना, संशोधन करना तथा बाला-विश्रामके आफिसका कार्य देखना और पत्र व्यवहार करना ४ बजेके बाद पानी पीना और फिर कुछ देर तक टहलना, पुनः मंदिरजीमें दर्शन करना, सामायिक और पाठ वगैरह करना।

पाठक देखेंगे कि ऊपरकी दिनचर्याके अनुसार कार्य सम्पन्न करनेसे जीवन कितना व्यवस्थित हो जाता है। और इससे अपने दैनिक कार्योंमें किसी तरहकी कोई विषमता पैदा नहीं होती, और न समयका दुरुपयोग ही होने पाता है। प्रत्येक स्त्री पुरुषोंको चाहिये कि वे भी अपना जीवन दिनचर्याके अनुसार बितानेका यत्न करें।

बाईजीका धर्म-प्रेम

जैन-समाजमें अर्सेसे जैन कालेजके स्थापित करनेके लिये उत्सुकता हो रही थी, यद्यपि कालेजका सूत्रपात दूसरे स्थानों पर भी हो चुका है। परन्तु आरा निवासी बा० हरप्रसादजीने अपनी मृत्युसे पहले ५ लाखकी सम्पत्तिका ट्रस्ट सन् १६१८ में किया था उसमें उन्होंने अपने विलमें सभी धर्म कार्योंमें उक्त सम्पत्तिको खर्च करनेका उल्लेख किया था, उसमें ६० हजार रुपये जैन-कालेजमें खर्च करनेके लिये भी संकल्प किये थे। जब इस विलकी चर्चा पं० चन्दाबाईजीने सुनी तब उनके चित्तमें कालेजकी परि-स्थितिका विचार हुआ और यह भावना उदित हुई कि कालेजमें जैनधर्मकी पढ़ाई अवश्य होनी चाहिये। इसके लिये विलमें कोई संकेत होना जरूरी है अन्यथा सम्भव है आगे चल कर ट्रष्टी लोग कालेजमें जैनधर्मकी पढ़ाईसे इंकार कर दें। अतः बाईजीने बा० निर्मलकुमारजी जो उस समय छोटी अवस्थामें ही थे बा० हरप्रसादजीके पास भेजा और कहा कि दादाजी विलमें धार्मिक शिक्षाके लिये कुछ अवश्य लिख देना चाहिये। तब उन्होंने उसे स्वीकार किया और विलमें पुनः संशोधन करके यह लिख दिया कि कालेजमें जैनधर्मकी शिक्षाके लिये कोई जैन विद्वान् अवश्य रहेगा। समयके फेरसे ३८ वर्ष तक कालेज स्थापित न हो सका वह ६० हजार रुपया मय सूदके वृद्धि करता चला गया तब मई सन् १६४२ की जुलाईमें कालेज स्थापित हो गया। उस समय जैनधर्मकी शिक्षाके लिये सीनेटके मेम्बरोंने

विरोध किया। जैन कमेटीके सभी लोग हैरान थे परन्तु पटना यूनिवर्सिटी किसी तरहसे भी उसे स्वीकार नहीं करती थी। तब लोगों ने बा० हरप्रसादजीके विलको पुनः बारीकीसे देखा; तब उसमें बाईजीका उक्त संदेशा मिल गया, उसे यूनीवर्सिटीमें दिखाने पर उसे स्वीकार कर लिया गया। इस तरह बाईजीके जैनधर्मके प्रेमकी वजहसे कालेजमें जैनधर्मका शिक्षण शुरु हो गया। इससे बाईजीके धर्म प्रेमका और उनकी विचार पद्धतिका कितना ही परिज्ञान हो जाता है।



पूज्य पंडिताजी द्वारा निर्मापित मानस्तम्भपर छात्राओंका ग्रूप-चित्र ।

बाला-विश्राममें मानस्तम्भका निर्माण

पं० चन्दाबाईजीने अपने जीवनमें कितने ही ऐसे कार्य किये हैं जिससे धर्म और समाजको यथेष्ट लाभ पहुँचा है। धार्मिक और सामाजिक कार्योंका अनुष्ठान करते हुए आपके जीवनमें दो बातोंकी खास विशेषता देखी जाती है—विद्याप्रचार और जिनेन्द्र-भक्ति। विद्याके प्रचारमें तो आप बाल्यकालसे ही प्रयत्नशील रही हैं, जिनेन्द्रदेवकी भक्ति भी आपमें अपूर्व है। भक्तिवश ही राजगृही पर जिनमंदिरका निर्माण कराया गया है। मंदिरके निर्माण हो जाने पर भी भक्तिरसकी अभिलाषा पूर्ण नहीं हुई। आपका यह विचार बराबर बना ही रहा कि एक बहुत ही सुन्दर मानस्तंभका निर्माण आरा जैसे प्रसिद्ध स्थानमें होना चाहिये, जो देखनेमें अपूर्व हो, और कलाकी दृष्टिसे भी महत्वपूर्ण हो, उसमें विविध भाषाओंमें शिलालेख भी अंकित किये जांय। और उसमें स्थित प्रशान्त मुद्राओंको देखकर जनता अपने स्वरूपको पहिचान सके और उन जैसा चैतन्य जिन-प्रतिमा बननेके योग्य अपनेको बना सके। इन्हीं सब विचारोंको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिये आपने ता० १८-९-१९३८ को रामचन्द्र मूलचन्द्र नाटा जयपुरको एक मानस्तम्भका आर्डर दिया तथा सन् १९३९ में विशेष विधानके साथ मानस्तम्भकी नींव खोदना प्रारम्भ किया गया। यह कार्य श्रीमान् बाबू चक्रेश्वरकुमारजीके द्वारा पंडिता चन्दाबाईजीने सम्पन्न कराया। अब मानस्तम्भ बनकर तय्यार हो गया है, उसमें बाला-

विश्रामकी स्थापना आदिका पूर्ण इतिहास भी उत्कीर्ण करा दिया है इसकी सारी बनावट संगमरमरके द्वारा ही तैयारकी गई है। इसमें १२ मूर्त्तियाँ उत्कीर्ण की गई हैं। इन प्रशान्त मूर्त्तियोंके दर्शन मात्रसे अभिमानियोंका अभिमान गलित हो जाता है। तथा इसके दर्शनसे आत्मामें अलौकिक आनन्दकी प्राप्ति होती है। वास्तुकलाकी दृष्टिसे यह मानस्तम्भ अत्यन्त सुन्दर बनाया गया है इसकी बनावट देखते ही बनती है। इसके बाद लगभग एक वर्ष तक यह कार्य सुचारुरूपसे चलता रहा। बीच-बीचमें पंडिता चन्दाबाईजी उसकी देख रेख करती रही तथा शिल्पी लोगोंसे सुन्दरसे सुन्दर मानस्तम्भ तैयार करनेके लिये विचार विमर्श करती रहीं। इसके निर्माणमें पंडिता चन्दाबाईजीने मुक्तहस्तसे खर्च किया है। आपने इसके बनवानेमें लगभग सात हजार रुपये निजी व्यय किये हैं। वास्तविकमें आरा जैसे नगरमें पंडिताजीने इस कमीको पूरा करके आरा समाजका मुखोज्वल किया है। पंडिताजीके श्रमसे आरा तीर्थस्थान बन गया है।

बाला-विश्रामके सच्चे सहायक

बा० छोटेलालजी जैन रईस कलकत्तासे जैन समाज भलीभांति परिचित है। आप रईस होते हुए भी विद्वान्, अच्छे विचारक, धर्मात्मा और भद्र-परिणामी हैं। अतिथि सत्कारके आप बड़े ही प्रेमी हैं। कलकत्तेमें आप एक सम्माननीय व्यक्ति माने जाते हैं। आपका व्यवहार छल-कपटसे रहित बड़ा ही सात्विक है। उदारता और परोपकारता तो आपके जीवनके खास अंग ही हैं। आप 'बाला-विश्राम'के प्राण हैं, संस्थाके सभापति हैं। विश्राम के सच्चे सहायक हैं। आपने अपनी प्रेरणासे अपने भाई बा० फूलचन्दजीसे ३००००) तीस हजार रुपयेकी एकमुश्त रक़म बाला-विश्रामको दिलाई थी, जिसका उल्लेख भी आपने अबतक पत्रोंमें नहीं आने दिया। और दूसरे भाई बा० गुलजारीलालजीसे भी ४०००) चार हज़ार रुपये दिलवाए थे। इसके सिवाय, सात-आठ हज़ार रुपये आपने स्वयं भी प्रदान किये हैं। और भी कितनी ही सहायता समय समय पर देते रहते हैं। अभी आपकी धर्मपत्नी श्रीमती मूंगाबाईजीके स्वर्गवास होने पर उसके किये हुए २५०००) पच्चीस हज़ारके दानमेंसे तीन हज़ार रुपये बाला-विश्रामको भी दिये हैं। इसके पहले भी आपकी धर्मपत्नीने आश्रमकी सहायताकी है। इससे पाठक आपकी उदारता; कर्त्तव्य परायणता एवं सौजन्यताका बहुत-कुछ परिचय प्राप्त कर सकते हैं। आप बड़े ही निरभिमानी और मिलनसार हैं। और नामवरी आदिसे कोशों दूर रहते हैं। ख्याति-लाभ और पूजादिकी आपको कोई चाह नहीं है। बाला-विश्रामके सिवाय आप वीर सेवामन्दिर सरसावा,

और स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस आदिको भी समय समय पर कितना ही आर्थिक सहयोग प्रदान करते रहते हैं। और अपने सत्परामर्शादि द्वारा उनकी प्रगतिमें सहायक होते रहते हैं।

इसी प्रकार बा० निर्मलकुमार और चक्रेश्वरकुमारजीसे जैन समाज अच्छी तरह परिचित है। जैन अग्रवालोंमें आप सम्पन्न और प्रतिष्ठित गिने जाते हैं। आपलोग स्वर्गीय बाबू देवकुमारजीके सुपुत्र हैं, और अपने पिताके अनुरूप ही समाज-सेवाके कार्योंमें भाग लेते रहते हैं। धर्मात्मा और सदाचारी हैं, उदार और व्यवहार कुशल हैं, अतिथि सत्कारके बड़े प्रेमी हैं। मिलनसार और दयालु हैं और सामाजिक तथा धार्मिक कार्योंमें बराबर ही हिस्सा लेते रहते हैं तथा सामाजिक संस्थाओंको समय समय पर अच्छा आर्थिक सहयोग भी प्रदान करते रहते हैं। तीर्थ-क्षेत्रादिके विषयमें भी अपनी अमूल्य सेवाएँ देते रहते हैं और यथाशक्य उनकी रक्षा आदिका प्रयत्न भी करते रहते हैं।

बाला-विश्रामके ध्रौव्य कोषमें ८०००) आठ हजार रुपये अपनी कोठीसे प्रदान किये हैं। और १००) सौ रुपया महीना सुगर मिल विहटाकी मैनेजिंग एजेन्सीमेंसे देते थे। तथा आश्रमके लिये बगीचा और एक बंगला भी उन्होंने प्रदान किया है जिसका कि ट्रष्ट भी कर दिया गया है। इस तरह आपलोगोंका इस संस्थाके साथ बड़ा भारी प्रेम है और उसके संचालनमें आप अपनी पितृव्या बाईजीको संतुष्ट रखते हैं, और संस्थाको अपना हर प्रकारका सहयोग देते रहते हैं।



श्रीमान् बाबू चक्रेश्वरकुमारजी जैन बी एम पी एम एल ए, आरा।

आगत पत्रादिकोंके कुछ सार-वाक्य

बाईजीके पास समय समय पर बाहरसे संस्था प्रेमी और धर्मात्मा सज्जनोंके ऐसे अनेक पत्र आए हैं जिनमें आपके कार्योंकी प्रशंसाकी गई है। और आपके व्यक्तित्वको उच्च दृष्टिसे देखा गया है। साथ ही संस्थाको महत्वशालिनी बनानेकी ओर प्रेरणाकी गई है। इसके अतिरिक्त कुछ पत्र तो आपके जीवनसे ही खास सम्बन्ध रखते हैं—उनमें आपके व्यक्तित्वके प्रति विविध विशेषणोंका प्रयोग किया गया है। और कुटुम्बियोंके प्रति भी सहानुभूति प्रकट की गई है। ऐसे पत्र तत्त्वज्ञानकी गंभीर चर्चाको लिये हुए हैं—उनमें आत्म हितकी भावना सन्निहित है। वे मुमुक्षु प्राणियोंको पथ-प्रदर्शनका काम देते हैं। तथा जो सर्वसाधारणकी दृष्टिसे भी बहुत उपयोगी हैं। ऐसे पत्रोंमें न्यायाचार्य पूज्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी ईसरीके पत्र प्रमुख हैं। उन्हें अन्यत्र ज्योंका त्यों प्रकाशित किया जायगा।

यहाँ पर कुछ दूसरे सज्जनोंके पत्रोंके सार वाक्योंको ही दिया जाता है जिनका बाईजी के व्यक्तित्वसे खास सम्बन्ध है और जो समाजके सम्माननीय प्रतिष्ठित व्यक्तियोंके द्वारा लिखे गये हैं—उनमें उक्त बाईजीको 'प्रशान्तमूर्ति' और उनके विचारोंको 'आगमानुकुल' और प्रवृत्तिको 'ज्ञानपूर्वक' बतलाया है। और 'आदर्श महिला' 'ब्रह्मचारिणी' 'विदुषीरत्न' 'निस्वार्थसेविका' 'महिलाभूषण' 'परोपकारिणी' 'धर्मात्मा' और 'धर्मवत्सला' आदि महत्वपूर्ण वाक्योंके द्वारा आपके व्यक्तित्वकी प्रशंसा कर अपनी सौजन्यताका परिचय दिया है। साथ ही आपकी संस्थाके प्रतिभी निम्न उद्गार प्रकट

किये हैं—"आपकी यह जीवन संस्था केवल वह अपने छोटेसे वर्तमान रूपमें ही न रहकर समस्त भारतवर्षकी एक प्रतिनिधि संस्था बने। और इससे शिक्षित विदुषी महिलाएँ संसारमें भगवान् महावीरके शासनका प्रचार करें, और उनके द्वारा निर्दिष्ट चर्याको जीवनमें उतारकर—उसे अमलीजामा पहनाकर स्त्री-समाजके विलीन हुए आत्म गौरवको पुनः चमका सके"।

पत्रोंके इन थोड़ेसे नमूने रूप दिये गये वाक्योंसे पाठक और पाठिकाओंको बाईजीके व्यक्तित्वका अच्छा परिचय मिल जाता है और इनसे बाईजीकी लोक प्रियता और उनकी धार्मिक वत्सलताका का भी भान हो जाता है।

आपकी विचित्रकार्यप्रणाली, परोपकारता, जीवन-सादगी, स्त्री-दुःख-निवारण-दक्षता, दूरदर्शिता, धार्मिकता, साहित्यसेवा, देशसेवा, वात्सल्य आदि गुणोंसे मुग्ध होकर प्रधान भारतीय जैनाजैन पत्र सम्पादकोंने आपकी गुणावलीकी भूरि २ प्रशंसा करते हुए, अपना २ अहोभाग्य माना है। सरस्वती मासिक पत्रके विद्वान् सम्पादकने (भाग ३०, संख्या ३) मार्च सन् १९२९ के अंकमें सचित्र संक्षिप्त परिचय प्रकाशित करते हुए निम्न प्रकारसे आपकी पुनीत सेवामें श्रद्धाञ्जलि अर्पितकी है।

"श्रीमती चन्दाबाई आराके एक सम्भ्रान्त जैन घरानेकी एक आदर्श महिला हैं। स्त्रियोंमें शिक्षा-प्रचार करनेके उद्देश्यसे आपने 'जैनबालाविश्राम' नामक संस्था स्थापितकी है। यहां हिन्दी, संस्कृत, गणित, तथा अंग्रेजी आदिकी शिक्षाका अच्छा प्रबंध है। आप अपने ही व्ययसे अधिकांश छात्राओंके भोजन-वस्त्र तथा

पुस्तक आदिका प्रबंध करतीं हैं। इस प्रकार आपकी बदौलत कितनीं निर्धन बालिकाएं तथा युवतियां शिक्षा प्राप्तकर अपना जीवन सुधार रहीं हैं।

आप बहुत सरल एवं दयालु हैं। हिन्दीसे भी आपको बड़ा प्रेम है। आपने हिन्दीमें कई उत्तमोत्तम पुस्तकें भी लिखीं हैं। स्वर्गीय कुमार देवेन्द्रप्रसादने प्रेम-मंदिर आरासे जो उत्तमोत्तम पुस्तकें प्रकाशित करके हिन्दी-साहित्यकी श्रीवृद्धिमें योग-दान किया था, उसमें आपने बड़ी सहायता दी थी। आप बड़ी परोपकारिणी हैं। एवं आपके विचार उच्च हैं।"

इसी प्रकार सुयोग्य सम्पादक 'विशाल भारत' ने फरवरी १९२९ ई० के (वर्ष २, संख्या २) अंकमें आपकी गुण-गरिमाकी गाथाको आपका चित्र प्रकाशित करते हुये निम्नप्रकार से स्मरण किया है—

"विदुषी चन्दाबाई जैन—वृन्दावनके श्रीयुत नारायणदासकी ज्येष्ठ पुत्री और आराके प्रतिष्ठित जमींदार चन्द्रकुमार जैनकी पुत्रबधू हैं। विवाहके एक वर्ष बाद ही आप विधवा हो गईं। बचपनहीसे आपकी विद्याध्ययनकी ओर विशेष रुचि थी। संस्कृतमें आपकी अच्छी गति है और जैन-सिद्धांतका तो काफी ज्ञान है। बिहारमें पर्दा प्रथाका बड़ा जोर था, फिर भी आप शिक्षा संबंधमें हताश न हुईं। स्त्री-जातिके हितके लिये इन विदुषी महिलाने बहुत सी पुस्तकें लिखीं हैं। जिनमेंसे—'महिलाओं-का 'चक्रवर्तित्व' 'सौभाग्य-रत्नमाला' 'उपदेश-रत्नमाला' आदि उल्लेख-योग्य हैं। पिछले सात वर्षोंसे आप जैन-महिलादर्श' नामक

मासिक-पत्रका सम्पादन कर रहीं हैं। कुछ दिन पहले 'भारतवर्षीय जैन महिलापरिषद्' ने आपको सभानेत्री चुना था। धनाढ्य घरानेकी होने पर भी आप बहुत ही सादगीसे रहती हैं। आराके पास धनुपुरा नामक स्थानमें आपने एक "श्रीवीर बाला-विश्राम" नामकी संस्था स्थापितकी है, जिसमें दूर दूरसे कुंआरी कन्याएँ तथा साधवा और विधवा महिलाएँ आकर रहतीं और शिक्षा पातीं हैं। जैनोंमें यह संस्था स्त्री-जातिकी उन्नतिके लिये अच्छा काम कर रही है। बन सका तो इस संस्थाका सचित्र विवरण आगामी किसी अंकमें दिया जायगा।"

सम्पादक 'दिगम्बर जैन' ने भी वीर निर्वाण संवत् २४५९ के वर्ष २६, अंक १-२ (विशेषाङ्क) में आपका चित्र प्रकाशित किया है। तथा सम्पादकीय नोट देते हुये आपके पुनीत गुणोंका स्मरण इस प्रकारसे किया है—

"आप एक उत्तम लेखिका, कवियित्री, पण्डिता और 'जैन-महिलादर्श' की सुयोग्य सम्पादिका तथा 'जैन-बाला-विश्राम' आरा की संस्थापिका एवं संचालिका हैं। आपके तत्त्वावधानमें बालाविश्राम निर्विघ्न रूपसे चल रहा है।"

इसी प्रकार और भी कई महानुभावोंने आपकी पवित्र सेवामें श्रद्धाञ्जलियां अर्पितकी हैं जैसे कि इंग्लिश पत्र 'मोडर्न-रिव्यू' वंगभाषाके कई पत्रोंने चित्र और परिचय प्रकट किये हैं। परन्तु विस्तार-भयसे उन्हें यहां नहीं उद्धृत किया गया है।

कामकी लगन

बाईजी काममें लग जातीं हैं तब तन्मय हो जाती हैं। एक बार आपके हाथकी अंगुलीमें चोट लग गई, उसमें दर्द होनेसे पट्टी बांधीं गई। सामायिक करनेके बाद फिटकरी लगाकर बाईजीने अपने आप पुनः पट्टी बांध ली और महिलादर्शके लिये लेख लिखने बैठ गईं। परन्तु दर्द बढ़ता ही गया, कुछ देरके बाद जब अधिक दर्द होने लगा, तब बाईजीका ध्यान अंगुलीकी ओर गया, तो देखतीं क्या हैं ? कि पट्टी, घाव वाली अंगुलीमें न बांधकर दूसरी अंगुलीमें बाँधकर लेख लिख रहीं हैं। और घाव खुला होनेके कारण दर्द कर रहा है। इस पर वे स्वयं हंसने लगीं और पासमें बैठे लोग भी हंसने लगे एवं कहने लगे कि "कामके आगे आपको शरीरका होश बिलकुल ही नहीं रहता। तभी तो अच्छी अंगुलीमें पट्टी बांध ली और घाववाली अंगुली खुली रखकर वेदना बढ़ाती रहीं।" इससे पाठक आपके कार्य तन्मयताका अनुभव कर सकते हैं।

रचनाएँ

पं० चन्दाबाईजी केवल विदुषी, व्याख्यातृ एवं भद्र महिला ही नहीं हैं, किन्तु एक अच्छी सुलेखिका भी हैं। समय समय पर आप कुछ न कुछ लिखती ही रहती हैं। 'जैनमहिलादर्श' में तो शिक्षाप्रद सम्पादकीय टिप्पणियाँ २१ वर्षसे बराबर देती ही रहती हैं। साथ ही, कुछ विचारात्मक निबंध भी आपने लिखे हैं जो 'महिलादर्श' और दूसरे जैन-अजैन पत्रोंमें समय समय पर प्रकाशित होते रहे हैं। आप कहानी भी अच्छी लिखती हैं। आपके लेख और कहानियोंसे स्त्री-समाजमें काफी जागृति आ गई है—अधिकांश बहनें अब कुछ न कुछ लिखने भी लगी हैं। जैन कन्या पाठशालाओंमें स्त्रियोंके द्वारा लिखी गई पुस्तकोंका अभाव देखकर आपने अपनी कुछ रचनाओंके पुस्तक रूप संस्करण भी निकाले हैं। जिनसे स्त्री समाजमें शिक्षाके प्रचारमें बहुत सहायता मिली है। आपने अपनी लेखनकला आदिसे महिला-समाजका जो उपकार किया है वह भारतीय इतिहासमें अपना खास महत्व रखता है। इस समय तक आपकी ६ रचनाएँ पुस्तक रूपमें प्रकाशित हुई हैं; उनके नाम इस प्रकार हैं :—

१ उपदेशरत्नमाला २ सौभाग्यरत्नमाला ३ निबन्धरत्नमाला ४ आदर्श कहानियाँ ५ आदर्श निबन्ध और ६ निबन्धदर्पण। इन सभी रचनाओंका विषय उनके नामसे ही प्रकट है—इनमें लौकिक और धार्मिक सभी विषयों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। इनकी भाषा बड़ी ही सरल और रोचक है, ये स्त्री-समाजके लिये बहुत ही उपयोगी हैं, और उन्हें इनसे अच्छा सहयोग भी

मिला है—कितनी ही बहनें इनसे निबन्ध लिखना सीख गई हैं, और प्रयत्न करके सुयोग्य लेखिका बन गई हैं। कितनी ही कन्या-पाठशालाओंमें ये पुस्तकें पाठ्य-पुस्तकोंकी भांति पढ़ाई जाती हैं, और इस तरह इनसे शिक्षा के प्रचारमें बड़ी मदद मिली है।

आदर्श कहानियां नामकी पुस्तक भी बड़ी उपयोगी है, इसकी सभी कहानियाँ रोचक और शिक्षाप्रद हैं, यह कहानी लिखनेवाली बहनोंके लिये विशेष उपयोगी है। इन पुस्तकोंकी लोकप्रियताका इससे अच्छा सबूत और क्या हो सकता है कि इनमेंसे कुछ पुस्तकोंके ३-४ तक संस्करण निकल चुके हैं। शिक्षित बहनोंको चाहिये कि वे इन पुस्तकोंसे समुचित लाभ उठाएँ।

निबन्ध-परिचय

हमारी चरितनायिका बाईजीने अपना सर्वस्व समाजसेवाके लिये अर्पित कर दिया है। आप महिला-समाजके उत्थानके लिये सतत प्रयत्नशील रहती हैं। आप धनकुबेरकी पुत्री व पत्नीहू होती हुई भी निर्धन बहनोंकी सेवा-सुश्रूषा एक सेविकाके रूपमें करती हुई अपने गौरवका अनुभव करतीं हैं। यदि आप चाहतीं तो संसारके उत्तमोत्तम भोग भोग सकतीं थीं। आपके लिये संसारकी सभी सामग्री सुलभ थी। आपके इसारेसे नाचनेवाले दास-दासियां आपकी सेवामें सदैव प्रस्तुत रह सकते थे। आप चिन्ता-रहित हो आमोद-प्रमोदमें अपने जीवनको व्यतीत कर सकती थीं। उपन्यासोंका अध्ययन कर मनोरंजन करती हुई देश-विदेशका ज्ञान प्राप्त कर सकती थीं। अलकापुरीकी स्पर्धा करनेवाले मणि-

माणिक्य मण्डित महलोंमें रहकर स्वर्गसुखको भोग सकती थीं। आप वैज्ञानिक विश्व-वैचित्र्यमें विचरणकर चित्र-विचित्र संसारको अपने भावों और मनोवेगोंके रागमें रंगकर संसारके मायाजालमें तन्मय हो सकती थीं। जो भौतिक सुख दूसरोंके लिये दुर्लभ थे, वे आपको सहजमें ही प्राप्त हो सकते थे। परन्तु आपने उन सब क्षणिक सुखोंको जलाञ्जलि देकर समाज और साहित्य सेवाके भारको वहन करनेमें अपना उपयोग लगाया। आपकी प्रतिभाका विकास मानव-समाजके कल्याणार्थ भिन्न-भिन्न क्षेत्रोंमें हुआ है।

आपने अबला एवं निरक्षरा महिला-समाजको सबला और साक्षरा बनानेमें अपनी वास्तविकताका अनुभव किया है। आप निरन्तर निर्बल, दुःखी एवं अनाथ बालिकाओंका स्वसन्तानके समान सेवा करके; उन्हें साक्षरा और कर्तव्यपरायणा बनानेके लिये कटिबद्ध रहती हैं। आपने अपने जीवनमें वास्तविक परोपकारके महत्वको समझा है। आपके द्वारा महिला-समाजका बहुत कुछ उत्थान हुआ है। आपने महिलोपयोगी साहित्यकी सृष्टि करके हिन्दी-साहित्यकी श्री वृद्धि की है। आपके लेखोंमें भारतीय संस्कृति और सभ्यताकी गंध सर्वत्र व्याप्त रहती है। आपकी प्रतिभा बहुमुखी है, इसी कारणसे आप सफल लेखिका बन सकी हैं। आपकी स्वाभाविक और अध्ययनोत्पन्न शक्तिने आपके निबन्धोंको कल्पना और भावुकता प्रदान की है। आपकी विचारधाराने आपके निबन्धोंमें गाम्भीर्य उत्पन्न करके सदाचारकी प्रतिष्ठा की है।

आपके इतिहास प्रेमने इतिवृत्तात्मकता और वास्तविकताका पुट दिया है और उसके लिये नये नये विषय उपस्थित किये हैं।

आपके पाण्डित्यने आपको शब्दों पर अधिकार दिया है। आपने गद्य पद्यका समन्वय करके महिलोपयोगी साहित्यके द्वारा मानव समाजका बड़ा भारी कल्याण किया है। आपके रोचक निबन्धोंके अध्ययनसे महिलाओंके शरीरमें अटूट स्वास्थ्य, भुजाओंमें विजयिनी शक्ति, हृदयमें साहस और जीवनमें तपोमयी साधनाके भाव उत्पन्न होते हैं। महिलारत्न मगनबाईजी के स्वर्गारोहणके समय आपने मृत्युका कैसा मार्मिक चित्रण किया है। यह महिलादर्श वर्ष ८ अंक ११ से प्रकट है। उदाहरणके लिये उसका कुछ अंश नीचे उद्धृत किया जाता है। वास्तवमें बाईजीने अपनी लेखनी द्वारा मृत्युका चित्र खींचते हुये सांसारिक विषयवासनाओंमें लिप्त जीवोंके लिये अत्यन्त कल्याणकारी उपदेश भी दिया है—" 'मृत्यु' यह कैसा रहस्यमय भयानक शब्द है, इसके भीतर वीभत्स, मालिन्य एवं शोकका संमिश्रण है। इसका संसारी जीवोंको समय समय पर अनुभव होता रहता है। इस पर विजय प्राप्त करनेके लिये ऋषि महर्षि आजन्म तप करते रहते हैं, सांसारिक मृगतृष्णाके पीछे पड़ा हुआ जन समुदाय भक्ष्य अभक्ष्यके विचारको तिलाञ्जलि देकर अशुद्ध से अशुद्ध और तीखी से तीखी औषधियोंका सेवन करता रहता है। सिर्फ इतना ही नहीं किन्तु मृत्युसे भयभीत होकर देश और घर छोड़कर सूनसान निरापद स्थानकी तलाशमें दर-दर भटकता फिरता है। कभी कभी महामारी आदिके भयसे स्त्री-बच्चों तकको छोड़कर भाग जाता है। इस पिशाचिनी मृत्युसे बचनेके लिये नाना प्रकारके उपाय करता है। पर सब निष्फल; जब आयु कर्म पूरा हो जाता है तब इस जीवकी रक्षा करने वाला कोई भी

नहीं हो सकता है। गुप्तसे गुप्त स्थानों पर क्षणभरमें इस मृत्युका प्रवेश हो जाता है। यह समस्त औषधि उपचारोंको पद दलित करके मनुष्यके पास जाकर खिलखिलाकर हंस देती है और जता देती है कि तुमने मेरा सामना करनेमें बड़ी भूलकी है। व्यर्थ ही इतना धन व्यय किया, व्यर्थ ही इतनी चिन्ताएँ की और प्रभु स्मरणको व्यर्थ ही छोड़ा, मैं तो अजेय हूँ। मुझे तो केवल अर्हन्तने ही जीता है तथा मोक्षमें विराजमान परमात्माओंने जीता है। भला, तुम्हारे समान पामर मनुष्य मेरा क्या कर सकते हैं। मैं तुम्हें पल भरमें पीस दूंगी। परन्तु यह मोही प्राणी मृत्यु देवीके उपदेशको धारण नहीं करता और सदैव स्वपर मृत्युके सन्तापसे परितप्त रहता है। जैसा कि आचार्य पूज्यपाद विरचित 'समाधितंत्र'के निम्न पद्यसे प्रकट है:—

दृढ़ात्मबुद्धिर्देहादावुत्पश्यन्नाशमात्मनः।
मित्रादिभिर्वियोगं च बिभेति मरणाद् भृशम्॥

अर्थात्—शरीरादिकमें जिसकी आत्मबुद्धि दृढ़ हो रही है ऐसा बहिरात्मा शरीरके छूटने रूप अपने मरण और मित्रादि सम्बन्धियोंके वियोगको देखता हुआ मरनेसे अत्यंत डरता है"।

इस तरह आपने मृत्युका विश्लेषण करते हुए जो अपने मनोगत विचार प्रकट किये हैं वे बहुत ही सुन्दर जान पड़ते हैं।

आपके निबन्धोंकी विवेचन शैली सरस, आशुबोधिनी, और मनोहारिणी है। पढ़ते ही पाठक पाठिकाओंके हृदय पट पर भाव अंकित हो जाते हैं। प्रायः आपके सभी निबंध हृदयग्राही एवं जीवनमें सुधार उत्पन्न करने वाले हैं। परन्तु मैं यहां पर केवल

एक दो निबंधोंका कुछ अंश नीचे उद्धृत करके ही आपकी शैलीका परिचय करा देना पर्याप्त समझता हूँ।

"नारियोंका सबसे बड़ा भूषण पतिसेवा है। धर्मप्राण भारतवर्ष इसी पातिव्रत-धर्मके बलसे आज संसारके सामने उन्नत है। अन्यान्य देशोंकी महिलाएँ अनेक गुणोंको धारण करती हुई तथा विद्या, कला, कौशलका भण्डार स्वरूप होती हुई भी वे भारतीय-पवित्र-सतीकी तुलना किसी प्रकार नहीं कर सकतीं।

सांसारिक सुख दम्पत्य प्रेमके आधीन है। जिस जगह योग्य दम्पती हैं, वहीं धनादिका उपयोग करके तथा सन्तानके द्वारा मनुष्यको सांसारिक सुखका अनुभव हो सकता है। परन्तु इसके विपरीत जहाँ मूर्ख और पातिव्रत-धर्मसे अनभिज्ञ हैं वहाँ सुख शाँति कदापि नहीं रह सकती। बहुत ऐश्वर्य-कुटुम्बादि रहने पर भी यदि पत्नी पतिके साथ और पति पत्नीके साथ उचित बर्ताव करना नहीं जानते तो वह कदापि सुखी नहीं हो सकते। इस अवस्थाका मानचित्र प्रायः निरंतर ही हमारी दृष्टिगोचर होता है, तथा पुराणों में भी ऐसी अनेक कथाएँ मिलतीं हैं। जिनसे पातिव्रतके सद्भाव असद्भावसे होनेवाले लाभालाभका भलीभाँति ज्ञान हो जाता है।

आधुनिक उपन्यास लिखे जानेका भी प्रधानकारण, पातिव्रतके लाभ प्रकट करना है। औपन्यासिक कसौटीका मापदण्ड भी चरित सुधार है। हमारी पढ़ी लिखी बहिनें प्रायः सभी उपन्यास पढ़तीं रहतीं हैं। यह सभी जानते हैं कि पति-पत्नीके प्रेमाभावसे कितनी हानियां होतीं हैं। अतएव यहां पर इस विषयको गौण करके प्रधानतया यही विचार करना है कि पातिव्रत धर्मका स्वरूप

वास्तवमें क्या है ? पतिकी आज्ञानुसार केवल विषयकषायोंका सेवन करना ही पातिव्रतधर्म नहीं है। किन्तु पतिके हितानुकूल आचरण करना ही वास्तविक पातिव्रत है।

प्रत्येक स्त्रीको मन-वचन-कायसे सदैव अपने पतिका हित करनेमें संलग्न रहना चाहिये। अपने स्वार्थको तिलाञ्जलि देकर, अपने तथा पतिके सुधार पर तत्पर रहकर, सदा पति-आज्ञाको शिरोधार्य करना ही सच्चा पातिव्रत धर्म है। पतिव्रता स्त्री अपने पतिको सदैव गौरवकी दृष्टिसे देखती है। चाहे वह कुरूप हो या सुन्दर, धनी हो या निर्धन, उसे ही अपना सर्वस्व समझती है। पतिके सुखमें सुखी और दुःखमें दुःखी होकर पतिका सुख दुःख बटाती है।

परन्तु पाश्चात्य वातावरणमें पली हुईं आधुनिक नवबधुएँ बढ़िया-बढ़िया वस्त्र और आभूषणोंसे सजधज कर पतिको मोहित करके और नाना प्रकारके हाव भावसे पतिके विद्याभ्यासमें विघ्न स्वरूप बनतीं हैं। आधुनिक बहनोंने पतिके साथ रहकर विषय-वासनाको पूरी करना ही पातिव्रत धर्म मान रक्खा है। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। यह तो योरोपियन पातिव्रत है कि चित्तमें आया तो पतिके साथ साथ कण्ठसे लगी-लगी फिरें, और मन चाहा तो झटिति विवाहका स्तीफा देकर बन्धनसे मुक्त हो गईं बस, इसी दूषित वातावरणके प्रभावने भारतके पातिव्रतको भी दूषित कर दिया दिया है।"

—सौभाग्य-रत्नमाला

इस प्रकार पातिव्रतकी पूर्वीय और पश्चिमीय तुलना करते

हुये आपने पातिव्रत पालनेके कई नियम स्थिर किये हैं, जो मननीय हैं।

आपने 'जीवनोद्देश्य' शीर्षक निबन्ध में भी जीवन के उद्देश्य बड़ी ही रोचक और तुलनात्मक शैलीसे बताये हैं। जैसा कि निम्नवाक्योंसे प्रकट है :—

"पृथ्वीपर जितने प्राणी हैं उनके मन्तव्य कुछ न कुछ विलक्षण ही होते हैं। परन्तु वास्तवमें देखा जाय तो सबके लिये सच्चा उद्देश्य एकही उचित है। आत्महित और परोपकारमें ही सारी भलाइयोंके मूल कारण हैं। इस सूत्रोक्त वाक्यके जीवनोद्देश्यमें बंधा हुआ मनुष्य स्वयं लौकिक सुख भोगते हुये दूसरोंकी भी यथेष्ट सहायताकर सकता है। तथा उपर्युक्त जीवनोद्देश्यसे भिन्न जीवनोद्देश्यवाला संसारमें कुछ भी नहीं कर सकता। वह अपने उभय लोकको बिगाड़ लेता है।"

—सौभाग्य-रत्नमाला

इस तरह जीवनका उद्देश्य निर्धारितकर लेनेपर प्रत्येक मनुष्य अपना जीवन सफल बना सकता है। आवश्यकता है, जीवनके साधक कारणोंको अमलमें लानेकी, उन्हें यथाशक्ति जीवनमें उतारने की—और बाधक प्रवृत्तियोंपर आत्मविजय करने की। सो इन सबके करनेपर जीवनकी सफलतामें फिर कोई संदेह नहीं रहता।

आपने महिलाओंको देश सेवाकी ओर संकेत करते हुए 'स्वदेश-सेवा' शीर्षक निबन्धमें बड़ी मार्मिकता के साथ कर्त्तव्यका ज्ञान कराया है जैसा कि उसके निम्न अंशसे प्रकट है :—"प्रिय सुज्ञ बहिनो! उठो, मातृभूमिको मातासे कम मत समझो। इसकी

सेवा करना भी अपने जीवनका मुख्य ध्येय समझो। तुमने अपनी कौटुम्बिक सेवाको ही पर्याप्त समझ लिया है, परन्तु वास्तवमें तुम्हारी यह भूल है। तुम्हारे प्रयत्नके बिना यह सदियोंसे गुलामीकी जंजीरोंसे जकड़ी हुई मातृभूमि पराधीनताके बन्धनसे मुक्त नहीं हो सकती है। जबतक देशकी सेवामें तुम लोग सहायिका नहीं होगी, तब तक यह कठिन कार्य पूरा नहीं हो सकता है। परन्तु तुम लोगोंको इस बातका विचार रखना चाहिये कि जिन-जिन साधनोंसे पुरुष स्वदेश सेवाकर रहे हैं, उन्हीं उपायोंसे हमलोग कृतकार्य नहीं हो सकतीं। यद्यपि देश सेवाके अनेक अंग हैं, परन्तु वर्तमानमें सर्वसाधारण स्त्रियाँ दो मार्गोंसे समुचित और सामयिक सेवा भलिभांति कर सकतीं हैं। पहिला मार्ग इतना सरल और सुसाध्य है कि प्रत्येक पढ़ी-अनपढ़ी, छोटी-बड़ी, गरीब-अमीर, सभी बहिनें उस पर आसानीसे चल सकती हैं। वह क्या है? स्वदेशी वस्तुओंका व्यवहार। बहिनो! विदेशी वस्तुओंने हमलोगोंका कैसा सर्वनाश किया है, इसका उल्लेख एक दो नहीं बरन् दस-बीस ग्रन्थोंमें किया जाय तब भी पूरा होना कठिन है। यह वह बिष है जो समस्त समाज रूपी शरीर में प्रविष्ट हो चुका है। इससे अपनी रक्षा करना आपके ही ऊपर निर्भर है।" इस प्रकारसे आपने विदेशी वस्तुओंके त्यागके ऊपर जोर देकर जीवनको सच्चा सात्विक बनाकर देश सेवाकी ओर अग्रसर होनेके लिये बहिनोंको सचेत किया है। आपके इन उपदेशपूर्ण निबन्धोंका समाजके ऊपर काफी असर हुआ भी मालूम पड़ता है। आपकी बदौलत अब महिलाओंमें कुछ नया जीवन आया हुआ भी प्रतीत होता है।

एक स्थल पर आपने अपने 'मानव-हृदय' शीर्षक लेखमें मानव-हृदयका विश्लेषण बड़ी कुशलतासे किया है। आपने मानव-हृदयके सभी स्रोतोंका दिग्दर्शन कराते हुए हृदयकी कमजोरियोंका विवेचन किया है। जिन कमजोरियोंके कारण ही यह मानव व्यसनोंका शिकार है। विषय कषाय रूपी जालमें फसकर सदाके लिये उनका भक्त बन जाता है। आपने उक्त लेखमें इन्हीं कमजोरियों पर विजय प्राप्त करनेके उपाय बताये हैं। आपके इस निबन्धको आद्योपान्त पढ़नेसे मानव-हृदय किन किन परिस्थितियोंमें किस प्रकारसे झुक जाता है, आदि बातोंकी शिक्षा मिलती है।

इस प्रकार आप निरन्तर महिलाओंके उत्थानके लिये कर्तव्य कर्मका ज्ञान कराया करती हैं। आपके ये निबन्ध "जैन महिलादर्श" में हमें देखने मिलेंगे। अभी हालमें आपके 'आधुनिक-शिक्षा' तथा 'शिक्षाका फल' ये निबन्ध प्रकाशित हुये हैं। वास्तवमें ये निबन्ध अत्यधिक व्यवहारोपयोगी हैं। इनके पढ़नेसे सिर्फ बहिनोंको ही लाभ नहीं होगा, प्रत्युत पुरुषवर्ग भी अपने कर्त्तव्य कर्मका ज्ञान प्राप्त कर सकता है। आपके निबन्ध आर्षमार्गके पोषक तथा धार्मिकताका पुट लिये हुये होते हैं।

रात्रि पाठशालाकी स्थापना और उसका संचालन

जब आप लखनऊ प्रतिष्ठामें गईं और वहां पर आपके महत्व-पूर्ण भाषणोंको जनताने सुना तब वहाँकी जनता कृतज्ञता वश आपकी प्रशंसा करने लगी। साथ ही आपके आश्रम और उससे होने वाली स्त्री-शिक्षाके प्रचारकी भूरि भूरि प्रशंसा भी की; इतनेमें एक सज्जन बोले जिन्हें किसी समय आरा जानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था कि वहांकी स्त्री समाजमें ही बाईजीकी वजहसे धार्मिकता और शिक्षाका प्रचार है, परन्तु वहांके पुरुषोंकी धार्मिकतामें बड़ी शिथिलता आगई है यहां तक कि वहांके लड़कोंसे पूजा-प्रक्षाल भी नहीं आता, मैंने एक नवयुवकसे स्वयं प्रक्षाल व पूजा करनेके लिये प्रेरणाकी, तब उसने कहा कि हम स्वयं पूजा-प्रक्षाल करना नहीं जानते, इस बातसे मुझे बड़ा ही खेद हुआ, कि आरा जैसे स्थानमें भी पुरुष समाजमें धार्मिक क्रियाओंमें इतनी अधिक शिथिलता है।

बाईजीने जब इन वाक्योंको सुना तभीसे आपने निश्चय कर लिया कि लड़कोंको धार्मिक शिक्षाका प्रबन्ध मैं आरा पहुँच कर ज़रूर कर दूंगी, और जाते ही आपने अंग्रेजी स्कूलोंमें पढ़ने वाले लड़कोंके लिये धार्मिक शिक्षाका समुचित प्रबन्ध कर दिया और उसका कुल-खर्च आपने स्वयं अपने पाससे ही किया, इसके लिये आपने किसीसे चन्दा देने आदिके विषयमें जिक्र तक नहीं किया, तबसे अब तक उक्त पाठशाला बराबर उसी तरहसे चालू है। और इसके द्वारा नवयुवकोंमें धार्मिकशिक्षाका अच्छा प्रचार हो रहा है।



श्रीमती प० चन्दाबाईजी
(२० वर्षकी अवस्थाका चित्र)

बाला-विश्रामका वर्तमानरूप

दि० जैन समाजकी शिक्षा-संस्थाओंमें बाला-विश्राम भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस संस्थासे अब तक २८४ छात्राओं एवं विधवा बहनोंने शिक्षा प्राप्त की है। और वर्तमानमें करीब ८९ छात्राएँ पढ़ रही हैं। देशकी विषम परिस्थिति होते हुए भी आश्रमकी व्यवस्था एवं पढ़ाई आदिमें किसी प्रकारकी दिक्कत उपस्थित नहीं हुई। छात्रालयमें छात्राओंके रहन-सहन और भोजनादिकी समुचित व्यवस्था है। श्रीमती पं० ब्रजबालादेवीजी विश्रामकी पूरी देखभाल रखती हैं, और विश्रामके कार्यों में अपनी बहन श्रीमती पं० चन्दाबाईजीको अपना पूरा-पूरा सहयोग प्रदान करती हैं।

विश्रामका स्थान शांत एवं सुन्दर है और भवन तथा छात्रालय आरासे कुछ दूर पर धनुपुरामें बनाए गए हैं, छात्राओंको दर्शन-पूजनादि धार्मिक क्रियाओंकी पूरी-पूरी सुविधा है, मन्दिर तो हैं ही, परन्तु बाहुबलिस्वामीकी प्रशान्त और चित्ताकर्षक मनोज्ञ मूर्तिके दर्शनादि का भी निरन्तर सौभाग्य प्राप्त होता रहता है। छात्राओं के चारित्र-चित्रणका भी विशेष ध्यान रक्खा जाता है और उनके स्वास्थ्य आदिका बराबर ख्याल रक्खा जाता है। स्वच्छता एवं सफाईकी ओर खास लक्ष्य रहता है। शिक्षाका भी समुचित प्रबन्ध है हिन्दी और संस्कृतकी उच्च शिक्षा दी जाती है। साथमें सीने-पिरोने आदि दस्तकारी और शिल्पकी शिक्षा भी दी जाती है। प्रारंभिक ज्योतिषकी शिक्षा भी छात्राओंको दी जाने लगी

है। और तीन छात्राओंने इस वर्ष ज्योतिष मध्यमा प्रथमखंडमें उत्तीर्णता भी प्राप्त की है। वर्तमानमें दो अध्यापक और छह अध्यापिकाएँ हैं। जिनसे छात्राएँ शिक्षा प्राप्त करती हैं। संस्थाका प्रबन्ध कार्य एक प्रबन्धकारिणी समितिके सदस्योंके द्वारा होता है। संस्थाके पदाधिकारीगण भी समाजके प्रतिष्ठित महानुभाव और विदुषी बहनें हैं। संस्थाकी संचालिका और कोषाध्यक्ष श्रीमती पं० ब्रजवालादेवीजी हैं। आश्रमका कुल कार्य अधिष्ठात्री श्रीमती पं० चन्दाबाईजीके द्वारा होता है। छात्राओंके रहन-सहन की देख-भाल, पं० सितारासुन्दरी, काव्यतीर्थ; सुपरिंटेण्डेण्ट बाला-विश्राम करती हैं। संस्थाका ध्रौव्यकोष एक लाखके करीब है। इसके सिवाय बाहरसे भी कितनी ही सहायता प्राप्त हो जाती है जिससे संस्थाका कार्य बिना किसी आर्थिक संकटके सुचारु रूपसे चल रहा है।

बालाविश्रामसे जिन छात्राओंने शिक्षा प्राप्त करके दूसरी शिक्षा संस्थाओंमें अध्यापनादि कार्य किया है या कर रही हैं उनमेंसे कुछ छात्राओंका विवरण अन्यत्र दिया गया है जिससे पाठक पाठिकाएँ विश्रामके शिक्षाकार्यसे भली-भांति परिचित हो सकती हैं।

मेरी तो यह हार्दिक कामना है कि पंडिता चन्दाबाईजीकी यह संस्था खूब वृद्धिको प्राप्त हो और ऐसा भी समय आवे जब यह बाला-विश्राम एक कन्या महाविद्यालयसे भी अधिक उन्नतिको प्राप्त हो और इससे शिक्षा प्राप्त बालिकाएँ और विधवाएँ सच्चारित्रवती और आदर्श विचारोंकी होकर धार्मिक, सुशीला एवं कर्तव्यपरायणा

हों, जो नारिजातिकी पतितावस्थाको समुन्नति बना सकें और सीताके समान भारतीय ललिनाओंके उस पुनीत गौरवको पुनः एक वार भूमण्डलमें चमका सकें। और जो आगत विपदाओंसे न घबड़ावें, प्रत्युत उनके दूर करनेका दृढ़ साहस करें और वीराङ्गनाकी भांति अपने धर्म-देश तथा जातिकी रक्षाके लिये अपने जीवनको भी उत्सर्ग करनेमें जरा भी हिचकिचाट न लाएँ। जिनके चरित्र बलके आगे विषयी जनोंको उनकी ओर आंख उठाकर देखनेका साहस न हो सके। जो सत्यकी मूर्ति हों, और कला-कौशल्यमें निपुण हों, साथ ही धर्मात्मा और दयालु हों, जिन्हें अपने देशके प्रति अनुराग हो, जो साहसी एवं धीर-वीरा हों। जब ऐसी वीर महिलाएँ इस संस्थासे निकलने लगेंगी तभी यह संस्था अपने उद्देश्यको पूर्णतया सफल बना सकेगी और अखिल संसारकी एक प्रतिनिधि संस्था कहला सकेगी।

पूज्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी और उनके पत्र

पूज्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णीसे जैनसमाज अच्छी तरह परिचित है आप समाजके उन धर्मनिष्ठ समाज-सेवी विद्वानोंमेंसे हैं जिन्होंने धर्म और समाजके अभ्युत्थान और शिक्षाके प्रसार एवं प्रचारमें अपना जीवन लगा दिया है। दि० जैन समाजमें जो सैकड़ों विद्वान् दृष्टिगोचर हो रहे हैं इसमें आपका बड़ा भारी हाथ है। सागर और बनारसके विद्यालयोंको जन्म देने और उनके संचालनादिका पूरा श्रेय आपको ही प्राप्त है। समाजमें बहुतसे विद्वान् हैं परन्तु उन सबमें आपका स्थान बहुत ऊँचा है। दयालुता, धर्मनिष्ठता, सत्यता, स्पष्टवादिता और परोपकारिता तो आपके जीवनके खास अंग हैं ही। साथ ही आप संसारके महान् उच्च नैतिक पुरुष भी हैं। वेदान्त और न्यायदर्शनादिके साथ जैनदर्शन एवं सिद्धांतके विशिष्ट विद्वान् होते हुए भी अध्यात्म-ग्रंथोंके विशेष मर्मज्ञ एवं रसिया हैं। आपका चारित्र बड़ा ही समुज्ज्वल है ज्ञान पूर्वक होनेसे उसमें और भी अधिक निर्मलता, विशेषता, प्रभाव एवं प्रतिष्ठा हो गई है। प्रकृतितः आप बड़े ही भद्र और सरल हृदय हैं। आजकल आप ईसरी (पार्श्वनाथ)में धर्मसाधन कर रहे हैं। आपके यहाँ रहनेसे ईसरी तीर्थ-क्षेत्रसा बन गया है। हजारों मुमुक्षु भाई आपके पास अध्यात्म ग्रंथोंकी चर्चा सुननेके लिये विभिन्न स्थानोंसे आते हैं। मुख्तार साहबके शब्दोंमें आप "ईसरीके सन्त" हैं। मुमुक्षु जीवोंको समय-समय

पर लिखे गए आपके आध्यात्मिक पत्र बड़े ही मार्मिक और वस्तुस्थितिके निदर्शक हैं उनसे जनता यथेष्ट लाभ उठा रही है। पं० चन्दाबाईजी आपसे बहुत अर्सेसे परिचित हैं, अतः आपके सत्संगसे लाभ उठाने तथा आध्यात्मिक ग्रंथोंकी गूढ़ एवं रहस्यमयी चर्चाओंके श्रवण एवं मनन करनेके लिये प्रतिवर्ष ईसरीमें जाती हैं और एक-एक दो-दो महीने ठहर कर समयसारादि अध्यात्म-ग्रंथोंका मनन किया करती हैं। बाईजीके पत्रोंके उत्तरमें वर्णीजीने सारगर्भित आध्यात्मिक पत्र लिखे हैं वे बड़े ही महत्वके हैं। इन पत्रोंमें कुछ पत्र बा० निर्मलकुमारजीकी मां श्रीमती अनूपमाला-देवीजीकी बीमारीके समय लिखे गये हैं जो उस समय आत्म-परिणामोंकी स्थिरता एवं ज्ञान वैराग्यकी वृद्धिके कारण हैं जो आत्मसंतोष के हेतु हैं। पाठकोंकी जानकारीके लिये वे नीचे दिये जाते हैं :—

१ ईसरी

श्री प्रशममूर्ति तत्वज्ञाननिधि चन्दाबाईजी योग्य इच्छाकार;

आपका स्वास्थ्य (स्वास्थ्यं यदात्यन्तिकमेष पुंसाम्) अच्छा होगा। लौकिक स्वास्थ्य तो पंचमकालमें धनिक समाजका प्रायः विशेष सुविधाजनक नहीं रहता। इस समय की न जाने कैसी हवा है जो मोक्षमार्गकी आंशिक प्राप्ति भी प्रायः जीवोंको दुर्लभ सी हो रही है। त्याग करने पर भी तात्विक शान्तिका आस्वाद नहीं आता, अतः यही अनुमान होता है कि आभ्यन्तर त्याग नहीं है। मैं अन्य प्राणियोंकी कथा नहीं लिख रहा हूँ, स्वकीय परिणामोंका

परिचय आपको करा रहा हूँ। जैनधर्म तो वह वस्तु है जिसका आंशिक भाव यदि आत्मामें विकसित हो जावे तो आत्मा अनंत संसारका उच्छेद कर जिनेश्वरके लघुनन्दन व्यपदेशका पात्र हो जावे। अतः निरन्तर यही भावना रहती है। हे प्रभो! आपके दिव्यज्ञानमें यही आया हो जो हमारी श्रद्धा आपके आगमके अनुकूल हो, यही हमें संसारसे पार करनेकी नौका है।

वही व्यक्ति मोक्षमार्गका अधिकारी है जो कि श्रद्धाके अनुकूल ज्ञान और चारित्रका धारी हो। कभी कभी चित्तमें उद्वेग आ जाता है कि अन्यत्र जाऊँ, अन्तमें यही समाधान कर लेता हूँ कि अब पारस प्रभुका शरण छोड़कर कहाँ जाऊँ। जहां जाओगे परिणामोंकी सुधारणा तो स्वयं ही करनी पड़ेगी। यह जीव आजतक निमित्त कारणोंकी प्रधानतासे ही आत्मतत्वके स्वादसे वंचित रहा। अतः स्वकीय ओर दृष्टि देकर ही श्रेयमार्गकी ओर जानेकी चेष्टा करना ही मुख्य पथ है। श्रीनिर्मलकुमारजी की माता से इच्छाकार।

२

श्री प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार,

पत्र आया, समाचार जाने। आपका स्वाध्याय सानन्द होता होगा, हम भी यथा योग्य स्वाध्याय करते हैं, परन्तु स्वाध्याय करनेका जो लाभ है उसके अभावमें कुछ शान्तिका लाभ नहीं। व्यापार करनेका प्रयोजन आय है, आयके अभावमें कुछ व्यापारका प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। बाईजी समागमको दोष देना तो अज्ञानता है। क्या करें, हमारा अंतरंग अभी उस तत्व तक नहीं

पहुंचा जहांसे शान्तिका उदय होता है। केवल पाठके अर्थमें ही बुद्धिका उपयोग रह जाता है। ज्ञानका फल विरति है, वह अभी बहुत दूर है। समयसारका स्वाध्याय तो करता हूं परन्तु अभी उसका स्वाद नहीं आता, परन्तु श्रद्धा तो है। विशेष क्या लिखूं। श्री सिद्धान्तका भी स्वाध्याय किया, विवेचन शैली बहुत ही उत्तम है, आपको क्या लिखूं क्योंकि आपकी प्रवृत्ति प्रायः अलौकिक ही है। जहां तक बने अब उसे यातायातकी हवासे रक्षित रखिये। श्री चिरंजीव निर्मल बाबूकी मां सानन्द होंगी। उनसे मेरा धर्म प्रेम कहना। अब शेष जीवनमें जो उदासीनता है उसे ही वृद्धि रूप करनेमें उपयोगकी निर्मलता करें यही कल्याणका मार्ग है, यह बाह्य समागम तो पुण्यका फल है और निर्मलता संसार बन्धनको छेदन करनेमें तीक्ष्ण असि धारा है, वह जितनी निर्मल रहेगी उतनी ही शीघ्रतासे इसका निपात करेगी। हमने आपके समक्ष सराग जातिके अर्थ भ्रमणका विचार किया था, कोईने बात न पूछी और न कोई साधन जानेका ही मिला अतः आपकी सम्मति ही सर्वोपरि मानकर यहीं रहना ही निश्चित रक्खा है। शेष यहांके सर्व त्यागी आपको इच्छाकार कहते हैं। श्री आत्मानन्दजी चले गये हैं। श्री सूरजमलजीका कार्य जैसा था वैसा ही है। "जो जो देखी वीतरागने सो सो होसी वीरा रे" इसीमें सन्तोष है। मैं तो निर्द्वन्द हूँ कुछ उसमें चेष्टा नहीं।

३

श्री प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी साहब योग्य इच्छाकार,

पर्वराज सानन्द पूर्ण हुआ, दशधा धर्म्मको यथा शक्ति सुना

सुनाया, मनन किया। क्या आनन्द आया इसका अनुभव जिसको हुआ हो सो जानें, पूर्ण आनन्द तो इसका दिगम्बर दीक्षाके स्वामी श्री मुनिराज जानें, आंशिक स्वाद तो व्रतीके आता है और इसकी जड़ अविरत अवस्थासे ही प्रारम्भ हो जाती है जो उत्तरोत्तर वृद्धि होती हुई अनन्त सुखात्मक फलका पात्र इस जीवको बना देती है। परमार्थ पथमें जिन जीवोंने यात्रा कर दी हैं उनकी दृष्टिमें ही यह तत्व आता है, क्योंकि इस पवित्र दशधा धर्मका सम्बन्ध उन्हीं पवित्र आत्माओंसे है। व्यवहाररततो उसकी गंधको तरसते हैं। आडम्बर और है, वस्तु और है नकलमें पारमार्थिक वस्तुकी आभा भी नहीं आती। हीरेकी चमक कांचमें नहीं। अतः पारमार्थिक धर्मका व्यवहारसे लाभ होना परम दुर्लभ है, इसके त्यागसे ही उसका लाभ होगा। व्यवहार करना और बात है। और व्यवहारसे धर्म मानना और बात है। व्यवहारकी उत्पत्ति मन-वचन-काय और कषायसे होती है। और धर्मकी उत्पत्तिका मूलकारण आत्म परिणति है। जहां विभाव परिणति है वहां उसमें धर्म मानना कहां तक संगत है? आपकी परिणति अति शान्त है यही कल्याणका मार्ग है। बाबू निर्मलकुमारकी माता सानन्द होंगी उनसे मेरा इच्छाकार कहना। और बाबूजीसे भी मेरी दर्शनविशुद्धि। किसी प्रकारका विकल्प न करें। "जो जो देखी वीतरागने सो सो होसी वीरा रे, अनहोनी कबहूं नहिं होसी काहे होत अधीरा रे" विशेषक्या लिखूँ।

४

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी योग्य इच्छाकार।

आपका धर्म साधन अच्छे प्रकारसे होता होगा। अंतरंगके

परिणामोंके ऊपर दृष्टिपात करनेसे आत्माकी विभाव परिणतिका पता चलता है। आत्मा परपदार्थोंकी लिप्सासे निरन्तर दुःखी रहता है आना जाना कुछ नहीं केवल कल्पनाओंके जालमें फंसा हुआ, अपनी सुधमें बेसुध हो रहा है। जाल भी अपनी ही कर्तव्यताका दोष है। एक जिनागम ही शरण है, यही आगम पंच परमेष्ठीका स्मरण कराके आत्माको विभावसे रक्षा करने वाला है। श्री चिरंजीव निर्मल बाबूसे मेरा आर्शीवाद; उनकी निराकुलता जैन जनताको कल्याण करने वाली है उनकी मां साहिबाको मेरा इच्छाकार कहना। मेरा विचार श्री राजगृहीकी बन्दनाका है और कार्तिक सुदी ३को यहांसे चलनेका था परन्तु यहां पर विहार उड़ीसा प्रान्तकी खंडेलवाल सभाका कार्तिक सुदी ६-११ तक अधिवेशन है। इससे अब अगहनमें विचार है।

५

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी योग्य इच्छाकार,

आपका पत्र आया समाचार जाना। अब शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगा। स्वामी समन्तभद्राचार्यने तो ऐसा लिखा है :—

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिकमेष पुँसां,
स्वार्थो न भोग परिभंगुरात्मा।
तृषोनुषंगान्न च तापशान्ति—
रितीदमाख्यद्भगवान् सुपार्श्वः॥

जबतक आभ्यन्तर हीनता नहीं गई तभी तक यह बाह्य निमित्तोंकी मुख्यता है और आभ्यन्तर हीनताकी न्यूनतामें आत्मा ही समर्थ बलवान् कारण है। वही परम कर्तव्य इस पर्यायसे होना

श्रेयस्कर है। लौकिक विभव तो प्रायः अनेक बार प्राप्त किये परन्तु जिस विभव द्वारा आत्मा इस चतुर्गतिके फंदसे पृथक् होकर सानन्द दशाका भोक्ता होता है वही नहीं पाया। इस पर्यायमें महती योग्यता उसकी है। अतः योग्य रीतिसे निराकुलता पूर्वक उसको प्राप्त करनेमें सावधान रहना ही तो हमें उचित है। मेरा श्री निर्मल-कुमारकी मांसे इच्छाकार कहना। और कहना कि अब समय चूकनेका नहीं। यह श्रद्धान बड़ी कठिनतासे पाया है। बुआजी आदिसे धर्म स्नेह कहना। स्थिर प्रकृतिका उदय तो उनके है, यह निरोगता भी कोई पुण्योदयसे मिली है, उन्हें बाह्य ज्ञान न हो परन्तु अन्तर निर्मलता है। मैंने अगहन सुदी १५ तक ईसरीसे ४ मीलसे बाहर न जाना यह नियम कर लिया है, क्योंकि आपके शुभागमनके बाद कुछ चंचलता बाहर जानेकी हो गई थी, चंचलता का अंतरंग कारण कषाय है, उसका बाह्य उपाय यहा समझमें आया है। श्री द्रोपदीजीको कहिये कि स्वामिकार्तिकयानुप्रेक्षाका स्वाध्याय करें।

६

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी योग्य इच्छाकार,

श्री निर्मल बाबूका माँका समाचार भगतजी द्वारा जानकर चित्तमें क्षोभ हुआ, परन्तु इस वाक्यको पढ़कर सन्ताष हुआ:—

जं जस्स जम्हि देसे जेण विहाणेण जम्हि कालम्हि,
णादं जिणेण णियदं जम्मं वा अहव मरणं वा।
तं तस्स तम्हिकाले तेण विहाणेण तम्हि कालम्हि,
का सकइ चालयिदुं इन्दो वा अह जिणिंदो वा॥

जो हो कुछ चिन्ताकी बात नहीं, इस समय उन्हें तात्विक और मार्मिक सिद्धांत श्रवण कराके स्वात्मोत्थ निराकुल आनन्दामृतका आस्वादन कराके अनन्तानुपम सिद्ध भगवान्का ही स्मरण कराने-की चेष्टा करानी ही श्रेयस्करी है। इस गोष्ठीको छोड़कर लौकिक बातोंकी चर्चाका अभाव ही अच्छा है। इस संसारमें सुख नहीं, यह तो एक सामान्य वाक्य प्रत्येककी जिह्वा पर रहता है, ठीक है परन्तु संसार पर्यायके अभाव करनेके बाद तो सुख है, सुख कहीं नहीं गया केवल विभाव परिणति हटानेकी दृढ़ आवश्यकता है। इस अवसर पर आप ही उनकी वैयावृत्तिमें मुख्य गणिनी हैं। वह स्वयं साध्वी हैं ऐसा शत्रुको पराजय करें जो फिरसे उदय न हो। यह पर्याय सामान्य नहीं और जैसा उनका विवेक है वह भी सामान्य नहीं। अतः सर्व विकल्पोंको छोड़ एक यही विकल्प मुख्य होना कल्याणकारी है अतः असातोदयके मूलकारणको निपात करनेकी चेष्टा सतत रहनी चाहिये। असातोदय रोग मिटनेका अर्थ वैद्य तथा औषधादिकी आवश्यकता है फिर भी इस उपचारमें नियमित कारणता नहीं। अंतरङ्ग निर्मलतामें वह सामर्थ्य है जो उस रोगके मूलकारणको मेट देता है। इसमें वैद्य आदिके उपचार-की आवश्यकता नहीं, केवल अपने पौरुषको सम्भालनेकी आव-श्यकता है। श्रीवादिराज महाराजने अपने परिणामोंके बलसे ही तो कुष्ठ रोगकी सत्ता निर्मूलकी। सेठ धनंजयने औषधिके बिना पुत्रका विषापहरण किया। कहाँ तक लिखें हमलोग भी यदि उस परिणामको सम्हालें तो यह बिजलीका आताप क्या वस्तु है? अनादि संसार आतापको शमन कर सकते हैं।

७

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी योग्य इच्छाकार,

पत्र आया समाचार जाने। श्रीनिर्मल बाबूकी माँकी विशुद्ध परिणति है असाताके उदयमें यही होता है और महर्षियोंको भी यह असातोदय अपना कार्य करता है परन्तु उनके मोहोदयकी कृशता है, अतः वह अघाती प्रवृत्ति कुछ कार्य करनेमें समर्थ नहीं होती। यही बात अंशतः श्रीनिर्मल बाबूकी मांमें भी है। अतः वे सप्रसन्न इस उदयको निर्जरा रूपमें परिणत कर रही हैं। उन्हें इस समय मेरी लघु सम्मतिसे तात्विक चर्चाका ही आस्वाद अधिक लाभप्रद होगा। संसार असार है कोई किसीका नहीं यह तो साधारण जीवोंके लिये उपदेश है किन्तु जिनकी बुद्धि निर्मल है और भाव ज्ञानी हैं उन्हें तो प्रवचनसारका चारित्र अधिकार श्रवण कराके "आतमके अहित विषय कषाय। इनमें मेरी परणति न जाय।" यही शरण है ऐसी चेष्टा करना ही श्रेयस्करी है। अनादिकालसे संसारमें रहनेका मूलकारण यही विषय-कषाय तो है। सम्यग्दर्शन होनेके बाद विषय कषायका स्वामित्व नहीं रहता अतः अविरत होते हुए भी अनंत संसारका पात्र सम्यक्त्वी नहीं होता। यदि उनकी आयु शेष है तब तो नियमसे निर्मल भावों द्वारा असाताकी निर्जरा कर कुछ दिन बाद हमलोगों-को भी उनके साथ तात्विक चर्चाका अवसर आवेगा। आपका प्रबल पुण्योदय है जो एक धार्मिक जीवके वैयावृत्त करनेका अनायास अवसर मिल रहा है। श्रीयुत भगतजीसे मेरा सानुनय इच्छाकार कहना, वह एक भद्र महाशय हैं उनका समागम अति



श्रीबाहुबली के पहाड़ पर—पण्डिताजी तथा श्रीमती अनूपमालादेवीजी स्तोत्र पाठ पढ़ रही हैं।

उत्तम है। श्री निर्मल बाबूकी मांको मेरी ओरसे यही स्मरण कराना—अरहंत परमात्मा ज्ञायकस्वरूप आत्मा है, व्याधिका संबंध शरीरसे है जो शरीरको अपना मानते हैं उन्हें व्याधि है, जो भेद ज्ञानी हैं उन्हें यह व्याधि नहीं।

८

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार !

आपका बाह्याभ्यंतर स्वास्थ्य अच्छा होगा, श्रीयुत निर्मल बाबू की मांका अब स्वास्थ्य अच्छा होगा। अनेक यत्न करने पर भी मनकी चंचलताका निग्रह नहीं होता। आभ्यंतर कषायका जाना कितना विषम है। बाह्यकारणोंके अभाव होने पर भी उसका अभाव होना अति दुष्कर है, करनेकी चातुरताका कुछ वश नहीं। श्रद्धाके साथ-साथ चारित्रगुणकी उद्भूति हो, शांतिका स्वाद तभी आ सकता है। मंदकषायके साथ चारित्रका होना कोई नियम नहीं। आप अपने स्वास्थ्य समाचार दें।

९

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार !

इस आत्माके अंतरङ्गमें अनेक प्रकारकी कल्पनाएँ उदय होती हैं और वे प्रायः बहुभाग तो संसारके कारण ही होती हैं वही कहा है :—

संकल्पकल्पतरुसंश्रयणात्त्वदीयं, चेतोनिमज्जति मनोरथसागरेस्मिन्।
तत्रार्थतस्तव चकास्ति न किञ्चिनापि, पक्षे परं भवसि कल्मषसंश्रयस्य ॥६

यह ठीक है परन्तु जो संसारके स्वरूपको अवगत कर आंशिक मोक्षमार्गमें प्रवेश कर चुके हैं उनके इन अनुचित भावोंका

उदय नहीं होना ही आंशिक मोक्षमार्गका अनुमापक है, अव्रतीकी अपेक्षा व्रतीके परिणामोंमें निर्मलता होना स्वभाविक है। आपकी प्रवृत्ति देखकर हम तो प्रायः शांतिका ही अनुभव करते हैं। साधु समागम भी तो बाह्य निमित्त मोक्षमार्गमें है। मैं तो साधु आत्मा उसीको मानता हूँ जिसके अभिप्रायमें शुभाशुभ प्रवृत्तिमें श्रद्धासे समता आगई है। प्रवृत्तिमें सम्यग्ज्ञानीके शुभकी ओर ही अधिक चेष्टा रहती है; परन्तु लक्ष्यमें शुद्धोपयोग है। चि० निर्मल बाबूकी मां साहबको अब एकत्व-भावनाकी ओर ही दृष्टि रखनी श्रेयस्करी है। वह अन्तरंगसे विवेकशीला हैं कदापि स्वानुभूतिसे रिक्त न होती होंगी। सम्यग्ज्ञानीकी दृष्टि बाह्य पदार्थमें जाती है परन्तु रत नहीं होती। औदयिक भावोंका होना दुर्निवार है परन्तु जब उनके होते अन्तरंगकी स्निग्धताकी सहायता न मिली तब तक यह निर्विष सर्पके समान स्वकार्यमें क्षम नहीं हो सकते, धन्य है उन जीवोंको जिन्हें अपनी आत्मशक्ति पर विश्वास हो गया है। यह विश्वास ही तो मोक्षमहलकी नींव है, इसीके आधार पर यह महल बनता है। इन्हीं पवित्र आत्माओंके औदयिक भाव अकिञ्चित्कर हो जाते हैं। तब जिनके देशव्रत हो गया उनके भित्ति बनना कार्य आरम्भ हो गया इसके पास इतनी सामग्री नहीं जो महल बना सके। इससे निरंतर इसी भावनामें रहता है कब अवसर सर्वत्यागका आवे जो निजशक्तिका पूर्ण विकास कर महलकी पूर्ति करूँ।

१०

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार !

आजकल यहां पर सरदी बहुत पड़ती है। शारीरिक शक्ति

अब इतनी दुर्बल हो गई है जो प्रायः अल्पबाधाओंको सहनेमें असमर्थ है। इसका मूलकारण अन्तरंग बलकी निर्बलता है। अन्तरंगकी बलवत्ताके समक्ष यह बाह्य विरुद्ध कारण आत्माके अहितमें अकिञ्चित्कर हैं; परन्तु हम ऐसे मोही हो गए हैं जो उस ओर दृष्टिपात नहीं करते, शीत निवारणके अर्थ उष्ण पदार्थका सेवन करते हैं परन्तु जिस शरीरके साथ शीत और उष्ण पदार्थका सम्पर्क होता है उसे यदि पर समझ उससे ममत्व हटालें, तब मेरी बुद्धिमें यह आता है वह जीव वर्फके समुद्रमें भी अवगाहन करके शीतस्पर्शजन्य वेदनाका अनुभव नहीं कर सकता। यह असङ्गत नहीं घोर उपसर्गमें आत्मलाभ प्राप्तिवाले सहस्र पुरुषोंके आख्यान हैं। श्री निर्मल बाबूकी माँजीका स्वास्थ्य अच्छा होगा—क्योंकि बाह्य निमित्त अच्छे हैं, यह अन्तरंग सामग्रीके अनुमापक हैं। यद्यपि ज्ञानी जीव, इनमें कुछ भी उत्कर्ष नहीं मानता; क्योंकि उसकी दृष्टि निरन्तर केवल पर पदार्थ पर ही जाती है, केवल पदार्थके साथ जहां परकी संमिश्रणताकी प्रबलता है वहीं तो नाना यातनाएँ हैं। अतः आप उन्हें निरन्तर आत्म केवलकी ओर ही ले जानेका प्रयास करें। जिस जीवने यह किया वही तो समाधि-का पात्र है। पात्र क्या तन्मय है? समाधिमें और होता ही क्या है? शरीरसे आत्माको भिन्न भावनेकी ही एक अन्तिम क्रिया है। जिन्होंने शरीर सम्बन्ध कालमें वियोग होनेके पहले ही इस भावनाको दृढ़तम बना लिया है उनकी तो अहर्निश समाधि है। अन्तरंग मोहकी वासना यदि पृथक् हो गई तब बाह्यसे यदि क्रियामें असातोदय निमित्त जन्य विकृति हो जावे तब फलमें बाधा

नहीं और असातोदयमें अनुकूल भी क्रिया हो जावे और मोह वासना न गई हो तब फलमें बाधा ही है। अबकी वर्षा वाद मेरा स्वास्थ्य भी कुछ विशेष सुविधा जनक नहीं फिर भी अच्छा ही है इसीमें सन्तोष है, सन्तोष करना ही चरम उपाय है वह पहले नहीं होता। किसीके हाथ उत्तम पुरुष ऐसे खड्डेमें गिरा जो मिलना कठिन हो गया, तब क्या करना है "कृष्णाहेतु" यही बात पहले हो, तब क्या कहना है। अस्तु, अपने और श्री चि० निर्मल बाबूकी मांका स्वास्थ्य विषयक पत्र देना। मैं पोष्टेज आदि नहीं खरीदता, अतः पत्र भेजें तब उसमें उत्तरको टिकट रख देवें।

११

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी साहब, योग्य इच्छाकार!

आप सानंदसे होंगी। बहुत समयसे आपके स्वास्थ्यका पत्र नहीं आया सो देना। तथा संसारकी दशा अति भयंकर है यह यूरोपीय युद्धसे प्रत्यक्ष हो गई। फिर भी मोहकी बलवत्ता, जो प्राणी आत्महितमें नहीं लगता। श्री निर्मल बाबूजी सानंद होंगे तथा श्री मांजी भी सानंद होंगी। वही जीव सुखी है जो संसारसे उदासीन है; क्योंकि इसमें सिवाय विपत्ति कुछ सार नहीं।

१२

श्री प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार!

आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा। श्री अनूपमालादेवीजीको इस समय आपसे भद्र जीव ही शांति कर सकती हैं। इस वर्ष यहां अत्यन्त गर्मी पड़ रही है। मैं पैदल चलनेके कारण नहीं जा सका। मेरी समझमें तो विकल्पोंका कोई प्रायश्चित नहीं, असंख्यातलोक

प्रमाण कषाय है अतः जहाँ तक बने अभिप्रायसे उनका पश्चात्ताप करना ही प्रायश्चित है। रस छोड़ना, अन्न छोड़ना तो दुर्बला-वस्थामें स्वास्थ्यका बाधक होनेमें प्रत्युत विकल्पोंकी वृद्धि ही का साधक होगा। विकल्पोंका अभाव तो कषायोंके अभावमें होता है। कषायोंके अभावके प्रति तत्त्वज्ञान कारण है, तत्त्वज्ञानका साधक शास्त्र व साधु समागम है वस्तुतः आप ही आप सब कुछ समर्थ है, किन्तु हमारी ही शक्तिको हमारी ही आभ्यन्तर दुर्बलताने अकर्मण्य बना रक्खा है। मनकी दुर्बलता ज्ञानकी उत्पत्तिमें बाधक है, किन्तु कषाय व विकल्पोंका साधक नहीं, अतः मनकी कमजोरीसे आत्माका घात नहीं, अतः उन्हें कहिये इस श्रद्धानको छोड़ो, जो हमारा दिल कमजोर है इससे विकल्प होते हैं अन्तरंगसे यही भावना भावो जो हम अचिन्त्य वैभवके पुञ्ज हैं सोऽहम (सो हम ?) इन शत्रुओंका निपात करेंगे। कायरतामे शत्रुका बल वृद्धिगत होता है और अपनी शक्तिका ह्रास होता है। अतः जहाँ तक बने कायरता छोड़ो और अपने स्वरूपको ज्ञाता दृष्टा ही अनुभव करो, वहां बलवान् और निर्बल सबको शरण है। समवशरणकी विभूति-वाले ही परम धाम जाते हैं और व्याघ्री द्वारा विदीर्ण हुए भी परम धामके पात्र होते हैं। सिंहसे भी बलवान् सुधरते हैं और नकुल बंदर भी उसीके पात्र होते हैं। सातामें ही कल्याण होता है और असातामें भी कल्याण होता है। देवोंके भी सम्यग्दर्शन होता है और नारकियोंके भी सम्यग्दर्शन होता है। अतः दुर्बलता-सबलताके विकल्पको त्याग कर केवल स्वरूपकी ओर दृष्टि देनेका कार्य ही अपना ध्येय होना चाहिये। बंधका कारण कषाय बासना है

विकल्प नहीं। एक पत्र हेमराजके भाईके हाथ भेजा था पहुंचा होगा। यहाँ अभी आनेका समय नहीं, बाह्य साधनोंकी त्रुटि है। हम पोतके पक्षीकी तरह अनन्य शरण हैं।

१३

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार !

आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा। यद्यपि आभ्यन्तर स्वास्थ्य अच्छा है तब यह भी अच्छा ही है; परन्तु निमित्त नैमित्तिक सम्बन्धसे यह स्वास्थ्य भी कथञ्चित् उसमें उपयोगी है, आपके धर्मसाधनमें जो उपयोगी ज्ञान है वही मुख्य है। विशेष चि० निर्मल बाबूकी मांसे इच्छाकार कहना। और कहना कि पर्यायकी सफलता इसीमें है जो अब भविष्यमें इस पर्यायका बंध न हो और वह अपने हाथकी बात है, पुरुषार्थसे मुक्ति लाभ होता है। यह तो कोई दुष्कर कार्य नहीं। मुझे ५ दिनसे ज्वर हो जाता है अब कुछ अच्छा है। असाताके उदयमें यही होता है; परन्तु जिन चरणाम्बुजकी श्रद्धासे कुछ दुःख नहीं।

१४

श्री प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार।

आप सानन्द वहाँ पर होगी। आपके निमित्तसे यहाँ पर शान्तिका वैभव उचित रूपसे था। आप जहाँतक स्वास्थ्य लाभ न हो शारीरिक परिश्रम न करें, मानसिक व्यापारकी प्रगतिका रोकना तो प्रायः कठिन है। फिर भी उसके सदुपयोग करनेका प्रयास करना महान् आत्माओंका कार्य्य है। मनकी चंचलतामें मुख्य कारण कषायोंकी तीव्रता और स्थिरतामें कारण कषायोंकी कृशता

है। कषायोंके कृश करनेका निमित्त चरणानुयोग द्वारा निर्दिष्ट यथार्थ आचरणका पालन करना है। चरणानुयोग ही आत्माको अनेक प्रकारके उपद्रवोंसे रक्षा करनेमें रामबाणका कार्य करता है। द्रव्यानुयोग द्वाराकी गई निर्मलताकी स्थिरता भी इस अनुयोगके बिना होना असम्भव है, तथा यही अनुयोग करणानुयोग द्वारा निर्दिष्ट करणोंका भी परम्परा क्या साक्षात् जनक है? अतः जिनकी चरणानुयोग द्वारा निर्मल प्रवृत्ति है, वही आत्माएँ स्व-पर कल्याण कर सकती हैं। चि० निर्मल बाबूकी जननी भी सानन्द होगी। उनसे मेरी इच्छाकार कहना तथा बुआजी व उनकी सुपुत्री द्रौपदीजीसे भी यथा योग्य कहना।

१५

श्री प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार!

पत्र आया, समाचार जाना। श्रीयुत चि० निर्मलकुमार बाबूजीकी माँ का स्वास्थ्य अब अच्छा होगा। असातोदयमें प्राणियोंको नाना प्रकारके अनिष्ट सन्बन्ध होते हैं और मोहोदयकी बलवत्तासे वे भोगने पड़ते हैं; किन्तु जो ज्ञानी जीव हैं, वे मोहके क्षयोपशमसे उन्हें जानते हैं, भोगते नहीं। अतएव वही बाह्य-सामग्री उन्हें कर्मबन्धमें निमित्त नहीं पड़ती, प्रत्युत मूर्च्छाके अभावसे निर्जरा होती है। यह ज्ञान वैराग्यकी प्रभुता है। जैसे श्रीरामचन्द्रजी महाराजके जब मोहकी मन्दता न थी, तब एक सीताके कारण रावणके वंशके विध्वंसमें कारण हुए और मोहकी कृशतामें सीतेन्द्र द्वारा अभूतपूर्व उपसर्गको सहन कर केवलज्ञानके पात्र हुए। अतः चि० निर्मल बाबूजीकी मांके मोहकी मंदता

होनेसे यह व्याधिरूप उपाधि प्रायः शांतिका ही निमित्त होगी। मेरी तो उनके प्रति ऐसी धारणा है। अतः मेरी ओरसे उन्हें यह कह देना—यह यावत् पर्याय संबंधी चेतन-अचेतन आपके परिकर हैं उसे कर्मकृत उपाधि जान स्वात्मरत रहना, यही अनंत सुखका कारण होगा; क्योंकि वस्तुतः कौन किसका है और हम किसके हैं। यह सर्व स्वाप्निक ठाठ है, केवल कल्पना हीका नाम संसार है। क्योंकि इस कल्पनाका इतना विशाल क्षेत्र है जो अद्वैतवाद-की तरह संसारको ब्रह्म मान रक्खा है और इसी प्रभावसे नैयायिकों-की तरह स्वात्ममें तादात्मसे संबंधित जो ज्ञान उनको भी भिन्न समझ रक्खे हैं। इस नाना प्रकारके कल्पना जालसे कभी तो हम पर पदार्थके संबंधसे सुखी और कभी दुःखी होते हैं और इसीके कारण किसी पदार्थका संग्रह और किसीका वियोग करते करते आयुकी पूर्णता कर देते हैं, स्वात्म कल्याणका अवसर ही नहीं आता। जब कुछ मोह मंद होता है तब अपनेको परसे भिन्न जाननेकी चेष्टा करते हैं और उन महात्माओंके स्मरणमें स्वसमय-को निरतर लगानेका प्रयत्न करते हैं और ऐसा करते-करते एक दिन हमलोग भी वे ही महात्मा हो जाते हैं; क्योंकि लोकमें देखा जाता है कि दीपकसे दीपक जोया जाता है। बड़े महर्षियोंकी उक्ति है कि पहले तो यह जीव मोहके मंद उदयमें 'दासोहं' रूपसे उपासना करता, पश्चात् जब कुछ अभ्यासकी प्रबलतामें मोह कृश हो जाता है, तब सोहं सोहं रूपसे उपासना करने लग जाता है। अंतमें जब उपा-सना करते करते शुद्ध ध्यानकी ओर लक्ष्य देता है, तब यह सर्व उपद्रवोंसे पार हो स्वयं परमात्मा हो जाता है, अतः जिन्हें आत्म-

कल्याण करनेकी अभिलाषा होवे, वे पहले शुद्धात्माकी उपासना कर अपनेको पात्र बनावें। पात्रताके लाभमें मोक्षमार्ग प्राप्ति दुर्लभ नहीं। श्रेणी चढ़नेके पहले इतनी निर्मलता नहीं जो शुभोपयोग-की गौणता हो जावे, जो मनुष्य नीचली अवस्थामें शुभोपयोगको गौण कर देते हैं, वे शुद्धोपयोगके पात्र नहीं। शुभोपयोगके त्यागसे शुद्धोपयोग नहीं होता। वह तो अप्रमत्तादि गुणस्थानोंमें परिणामोंकी निर्मलतासे स्वयमेव हो जाता है। प्रयास तो कथन-मात्र है, सम्यग्ज्ञानी जीव शुभोपयोग होने पर भी शुद्धोपयोगकी वासनासे अहर्निश पूरितांतःकरण रहता है। शुभोपयोगकी कथा छोड़ो उसकी अशुभोपयोगके निमित्तोंके होने पर भी शुद्धोपयोगकी वासना है; क्योंकि शुभाशुभ कार्य करनेका भाव न होने पर भी चारित्र मोहके उदयमें उनका होना दुर्निवार है, अतः उसकी निरंतर उन दोनों भावोंके त्यागमें ही चेष्टा रहती है किन्तु शुद्धो-पयोगका उदय न होनेसे उसके शुभोपयोग होता है, करता नहीं। हां, अशुभोपयोगकी अपेक्षा उसकी प्रायः शुभोपयोगमें अधिकांश प्रवृत्ति रहती है। इसमें भी कुछ तत्त्व है अशुभोपयोगमें कषायों-की तीव्रता है और शुभोपयोगमें मंदता है अतः शुभोपयोगमें अशुभोपयोगसे आकुलता मंद है और आकुलताकी कृशता ही तो सुखके भोगनेमें आंशिक सहायक है। आगममें शुभोपयोगके साथ शुद्धोपयोगकी समानाधिकारता श्री १०८ कुंदकुंद स्वामीने दिखाई है। अतः सम्यग्दृष्टिके इसीसे सिद्ध होता है जो अशुभोपयोगकी प्रचुरता नहीं, बाह्यक्रियासे अंतरंगकी अनुमति प्रायः सर्वत्र नहीं मिलती, अतः सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंकी क्रियाकी समा-

नता देख अंतरंग परिणामोंकी तुल्यता समान नहीं। श्रीयुत महाशय भगतजीसे हमारा इच्छाकार कहना। नन्हें अभी ज्वरसे पीड़ित था, अब अच्छा है आपने लिखा सो वह आनेको तैयार है।

१६

श्रीयुत प्रशममूर्त्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार।

पत्र आया समाचार जाने। जैन बाला-विश्राम खुल गया, यह सुखद समाचार जानकर परम हर्ष हुआ। श्री अनूपादेवीको मेरी समझमें मूर्छाका कारण शारीरिक कृशता है, मानसिक कृशता नहीं—जो आत्मा मानसिक निर्मलताकी सावधानी रखनेमें प्रयत्न-शील रहेगा वही इस अनादि संसारके अन्तको जावेगा। उस मानसिक बलमें इतनी शक्ति है जो अनन्त जन्मार्जित कलंकोंकी कालिमाको पृथक कर देता है। इस संसारमें मानव-जन्मकी महर्षियोंने बहुत ही महिमा गायी है परन्तु उस महिमाका धनी वही है जो अपनी परिणतिसे कलुषताको पृथक् कर दे—वह कलुषता ही आत्माको अज्ञान चेतनाका पात्र बनाती है। कलुषताका मूल कारण यह जीव स्वयं बनता है, हम अज्ञानसे परको मान उसके दूर करनेका प्रयत्न करते हैं और ऐसा करनेसे कभी भी उसके जालसे मुक्त होनेका अवसर नहीं आता। वही श्री अमृतचन्द्र सूरिने लिखा है:—

रागजन्मनि निमित्ततां परद्रव्यमेव कलयन्ति ये तु ते।
उत्तरन्ति नहि मोहवाहिनीं शुद्धबोधविधुरांधबुद्धयः॥

यद्यपि अध्यवसान भावोंकी उत्पत्तिमें पर वस्तु भी निमित्त है। पर वस्तु ही निमित्त है इसका निरास स्वामीने किया है, फिर भी

बन्धका कारण अध्यवसान भाव ही है और वह जीवका उस अवस्थामें अनन्य परिणाम है।

रागो दोसो मोहो जीवस्येव अणण्या परिणामा।
एदेण कारणेण दु सद्दादिषु णत्थि रागादि॥

अतः बन्धका मूल कारण आपही हैं जब ऐसी वस्तु गति है तब इन निमित्तोंमें हर्ष विषाद करना ज्ञानी जीवोंके सर्वथा नहीं, इसका यह भाव है जो श्रद्धा तो ऐसी ही है परन्तु चारित्रमोहसे जो रागादिक होते हैं उनका स्वामित्व नहीं। अतः उसकी कला वही जाने। स्वास्थ्य अच्छा है परन्तु जिसको स्वास्थ्य कहते हैं उसका अभी श्रीगणेश भी नहीं।

श्री अनूपादेवीसे कहना पर्यायकी कलासे घबराना नहीं, मानुष विचारेकी कहा बात, दिनकरकी तीन दशा होती दिनमें, पर्यायकी तो यही गति है अतः अपनी परिणति पर ही परामर्शका अजरामर पदकी अभिलाषा ही इस समय लाभ प्रदा है। कुटुम्बादि सर्व पर हैं उनसे न राग और न द्वेष यही भावना श्रेयोमार्गकी गली है।

१७

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार।

यहां पर इस वर्ष कुछ गर्मीका प्रकोप है, मेरा विचार हजारी-बाग जानेका है। श्रीयुत चिरजीवी निर्मल बाबूकी मांजीका स्वास्थ्य अच्छा होगा। इस समय उनके परिणामोंकी स्थिरताका मूलकारण आप हैं; क्योंकि आपके उपदेशका उनकी आत्मा पर प्रभाव पड़ता है। संसारमें वे ही मनुष्य जन्मको सफल बनानेकी योग्यताके पात्र

हैं, जो इसकी असारतामें सार वस्तुको पृथक् करनेमें प्रयत्न शील रहते हैं। श्रीनेमिचन्द्र स्वामीका कहना है:—

मा मुज्झइ मा रज्जइ मा दूसइ इट्ठणिट्ठ अत्थेसु।
थिर मिच्छइ जइ चित्तं विचित्तज्झाणप्पसिद्धीए॥
मा चिट्ठइ मा जंपइ मा चिंतइ किंपि जेण होइ थिरो।
अथा अप्पम्मिरओ इणमेव परंहवे झाणं॥

इन दो गाथाओंमें सम्पूर्ण कल्याणका बीज है जो आत्मा इसके अर्थ पर दृष्टि देकर चर्य्यामें लावेगा वह नियमसे संसार समुद्रसे पार होगा। क्योंकि संसारका मूलकारण राग-द्वेष ही तो हैं इसपर जिसने विजय प्राप्त करली, उसके लिये शेष क्या रह गया? अतः श्री मांजीसे कहना निरन्तर इसी पर दृष्टि हो और यही चिन्तन करो, यही श्री १००८ भगवान् वीर प्रभुका अन्तिम उपदेश है। समाधिके अर्थ इसके अतिरिक्त सामग्री नहीं। इस समय इन आत्मभिन्न पर पदार्थोंमें न तो रागकी आवश्यकता है और न द्वेषकी, मध्यस्थ भावना हीकी चेष्टा उपयोगिनी है। यावान कुटुम्ब वर्ग है उसकी तत्त्वज्ञानामृत द्वारा संसारातापसे रक्षा करना आपके सौम्य परिणामका फल होना चाहिये। धन्य है उन ज्ञानियोंको जिनके द्वारा स्वपर हित होता है। जिसने यह अपूर्व मानुष कल्पवृक्ष द्वारा स्वपर शान्तिका लाभ न लिया उसका जन्म अर्कतूलके सदृश किस कामका?

१८

श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार।

आपके विचार प्रायः बहुत ही उत्तम हैं। बाला-विश्रामके विषय-

में अभी थोड़े दिन और ठहर जाइये और यदि अशान्तिकी विशेष सम्भावना हो तब श्रावण तक छुट्टी कर दीजिये श्रीपार्श्व प्रभुके प्रसादसे प्रायः आप लोग इन सर्व आपत्तियोंसे मुक्त रहेंगे यह मेरी दृढ़ श्रद्धा है। यद्यपि परिग्रह दुःखकर है, परन्तु गृहस्थावस्थामें उसके बिना निर्वाह भी तो नहीं, श्री निर्मल बाबूजीकी मांका स्वास्थ्य मेरी समझमें शारीरिक बलकी त्रुटिसे यथार्थ मनके कार्योंमें साधक नहीं होता। आपतो विशेष अनुभवशीला हैं, वर्तमानमें बहुतसे जीव ऊपरी व्रतों पर मुख्यता देते हैं और उनके अर्थ अभ्यन्तर शुद्धिका ध्यान नहीं रखते, फल यह होता है जो परिणामोंमें सहन-शक्ति नहीं रहती। अतः जहाँतक बने उनकों कुछ ऐसे पदार्थोंका सेवन कराया जावे जो मनोबलके साधक हों, अभ्यन्तर तो 'अरहंत परमात्मा ज्ञायकस्वरूप आत्मा' इसका उपचार किया जावे और बाह्यमें जो अनुकूल और उन्हें रुचिकर हों। संसारमें शान्तिका एक रूपसे अभाव ही है ऐसा नहीं, संसारमें भी शान्ति है किन्तु उसके बाधक कारणोंको हेय समझकर उन्हें त्यागना चाहिये। केवल कथासे कुछ नहीं।

जह णाम कोवि पुरिसो बंधणयम्मि चिरकालपडिबद्धो।
जइ णवि कुणइच्छेदं ण सो णरो पावइ विमोक्खं॥

बंधनकी कथासे बंधनका ज्ञान होगा, बंधनमुक्ति सर्वथा असंभव है। भोजनकी कथासे क्या क्षुधानिवृत्ति हो सकती है ? अतः सर्वप्रकारसे प्रयत्नकी उपयोगिता इन रागादिक शत्रुओंके साथ जो अनादिका संबंध है उनके छोड़नेमें ही सफल है। इस जीवके अनादिकालसे शरीरका संबंध है और अतीन्द्रियज्ञानके अभावमें

ज्ञानका साधक यह शरीर ही बन रहा है। अतः हम निरन्तर उसीकी सुश्रूषामें अपना सर्वस्व लगा देते हैं और अंतमें वही शरीर हमारे अकल्याणका कारण बन जाता है। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है शरीर और मनोबल कम होने पर भी यदि वासनाका बल विकृत नहीं हुआ है तब कुछ भी आत्माको हानि नहीं है। देखिये विग्रहगतिमें मनोबलका अभाव रहने पर भी सम्यग्दर्शनके प्रभावसे ४१ पाप प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता। अतः हमें मुख्यतः अंतरङ्ग वासनाकी तरफ ही विशेषरूपसे सतर्क रहना अच्छा है। जहाँतक बने श्री चि० निर्मल बाबूकी माँ अधिक न बोलें और सरलसे सरल पुराणको स्वाध्यायमें लावें। पार्श्वपुराण और पद्मपुराण तथा श्री रत्नकरण्डमें जो दशधा धर्मका स्वरूप है उसे ही मनन करें। मेरी बुद्धि में उनका अंतरङ्ग क्षयोपशम तो ठीक है किन्तु द्रव्येन्द्रियकी दुर्बलतासे वह उपयोगरूप नहीं होता। स्वप्नके भयसे जागना यह विकल्पोंका साधक ही है; क्योंकि जागनेसे स्वास्थ्यकी हानि ही होती है और स्वास्थ्यके ठीक न होनेसे अनेक प्रकारकी नई-नई कल्पनाएँ होने लगती हैं। आप तो स्वयं सर्वविषयक बोधशालिनी हैं, उनको समझा सकती हैं। विशेष क्या लिखूं, जागनेसे कषायकी शांति नहीं होगी। इस वर्ष यहां पर गर्मीका प्रकोप कम है, आप किञ्चिन्मात्र भी चिंता न कीजिये। मुझे विश्वास है जिनके धर्मकी श्रद्धा है उनके सर्व उपद्रव अनायास शांत हो जावेंगे। प्रथम तो अभी उपद्रवकी संभावना नहीं और हो भी तब भी आपके पुण्यसे आपके आश्रम-की रक्षा ही होगी। भावि विघ्नहरणके अर्थ बाहुबली स्वामीकी

पूजन नियमसे होनी चाहिये। श्रीयुत चिरञ्जीवी निर्मल बाबू व चक्रेश्वरकुमारको श्रीशांतिनाथ स्वामीका पूजन नियमसे करना चाहिये, अनायास सर्व विघ्न शांत होंगे। श्री अनूपादेवीका भी स्वास्थ्य इसीसे शांत होगा वे भी एक पाठ विषापहारका नियमसे किया करें। यदि आश्रमकी छात्रा रही भी आवें तब उनके द्वारा निरन्तर सहस्रनामका पाठ कमसे कम ३ बार तो अवश्य कराइये, और प्रतिदिन महामंत्रकी तीन माला ३ बारमें फेरें तथा निरंतर अरहंतका ही स्मरण करें कुछ भी आपत्ति न आवेगी।

१९

श्रीशांतिनाथाय नमः

न शीतलाश्चन्दनचन्द्ररश्मयो न गांगमम्भो न च हारयष्टयः।
यथा मुनेस्तेऽनघवाक्यरश्मयः शमाम्बुगर्भाः शिशिरा विपश्चितां॥

श्रीशांतिमूर्ति अनूपादेवी, योग्य इच्छाकार !
श्रीयुत प्रशममूर्ति चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार !

पत्र आया समाचार जाने। आपके दिल और दिमाग कमजोर हैं सो इससे आपकी जो चरम अभिलाषा है उसमें तो यह योग बाधक नहीं; क्योंकि ज्ञानकी पूर्णताका विकास तो अब मन के अभावमें ही होता है और परम यथाख्यात चारित्रकी प्राप्ति काययोगके ही अभावमें होती है, मन जितना बलिष्ठ होगा उतना ही चंचल होगा, तथा इन्द्रियोंमें जितनी प्रबलता होगी उतनी ही विषयोन्मुख होनेमें साधक होंगी। अतः यदि इनकी निर्बलता हो गई, हो जाने दो। अब रही बात भावोंकी शुद्धताकी सो भावोंकी अशुद्धताका कारण मिथ्यात्व और कषाय है। उस पर

विचार कीजिये। मिथ्यात्व तो आपकी सत्ता में है ही नहीं। अब केवल कषाय ही बाधक कारण रह गया, अस्तु, कषायके होनेमें बाह्य नोकर्म विषयादिक हैं सो उनके साधक कारण इन्द्रियादिक हैं वह आपके पुण्योदयसे कृश ही हो गए हैं अब तो केवल 'सिद्धेभ्योनमः' की ही भावना कल्याणकारिणी है। कल्याणके अर्थ ही इन साधनोंकी आवश्यकता है। आत्मा यदि देखा जावे तब स्वभावसे अशांत नहीं, कर्म कलंकके समागमसे अशांत सदृश हो रहा है। कर्मकलंकके अभावमें स्वयमेव शांत हो जाता है जैसे श्रीपुरुषोत्तम रामचन्द्रजी श्रीशीतलमूर्ति सीताजीके विरहमें कितने व्याकुल हो रहे जो वृक्षोंसे पूछते हैं तुमने सीता देखी है? वही पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी श्रीलक्ष्मणके मृत शरीरको ६ मास लेकर सामान्य मनुष्योंकी तरह भ्रमण करते रहे और जब कर्म-कलंक (का) उपशम हुआ, सर्व उपद्रवोंसे सुरक्षित हो स्वाभाविक आत्मोत्थ अनुपम चिदानंदमय होकर मुक्तिरमाके वल्लभ हुए—यही बात ज्ञानसूर्योदय नाटकमें आई है :—

कलत्रचिन्ताकुलमानसो यो जघान लङ्केशमवाप्तयुद्धः।
स किं पुनः स्वास्थ्यमवाप्य लोके समग्रधीर्नो विरराम रामः॥

अतः सम्पूर्ण विकल्पोंको छोड़ निर्बलावस्थामें एक यही विकल्प करना अच्छा है 'अरहंत परमात्मा ज्ञायकस्वरूप आत्मा' अथवा यह भावना श्रेयस्करी है आपका मन निर्बल है और मन ही आत्माको नाना प्रकारकी चंचलतामें कारण है शत्रु निर्बलका जीतना कोई कठिन नहीं, अतः ज्ञानासिका ऐसा निपात करिये जो फिर सिर न उठा सके, इसके वश होते ही और शेष शत्रु सहज

हीमें पलायमान हो जावेंगे। यही परमात्मप्रकाशमें योगीन्द्रदेवने कहा है—

पंचहं णायकु वसि करहु जेण होंति वसि अण्ण।
मूल विणट्ठइ तरुवरह अवसइं सुक्कहिं पण्ण॥

आपकी इस समय जो चंचलता है वह इस विषयकी है कि हमारा अन्तिम समय अच्छा रहे, सो निष्कारण है; क्योंकि आपने उस मार्ग में प्रयाण कर दिया अब उतावली करनेसे क्या लाभ ? अत. अनंजयके इस श्लोकको विचारिये तो कैसा गम्भीर भाव है—

इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद् वरं न याचे त्वमुपेक्षकोसि।
छाया तरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्कश्छायया याचित यात्मलाभः॥

अतः स्वकीय कल्याणका मार्ग अपनेमें ज्ञान मानंद काल यापन करिये और यह पाठ निरंतर चिन्तन करिये :—

"सहजशुद्धज्ञानानन्दैकस्वभावोहं निर्विकल्पोहं उदासीनोहं निजनिरञ्जनशुद्धात्मासम्यक्श्रद्धानज्ञानानुष्ठानरूपनिश्चयरत्नत्रयात्मकनिर्विकल्पसमाधिसंजातवीतरागसहजानन्दसुखानुभूतिमात्रलक्षणेन स्वसंवेदनज्ञानेन स्वसंवेद्यो गम्यः प्राप्यो भरितावस्थोहं। रागद्वेषमोहक्रोधमानमायालोभपंचेन्द्रियविषयव्यापारमनोवचनकायव्यापारभावकर्म द्रव्यकर्म नोकर्म ख्याति-पूजा-लाभदृष्टश्रुतानुभूत-भोगाकांक्षारूपनिदानमायामिथ्यानिदानशल्यत्रयादिसर्वविभावपरिणामरहितशून्योहं जगत्त्रये कालत्रयेऽपि मनोवचनकायैः कृतकारितानुमतैश्च शुद्धनिश्चयनयेन तथा सर्वेऽपि जीवा इति निरन्तरं भावना कर्तव्या।"

२०

श्रीयुत प्रशममूर्ति साहित्यसूरि चन्दाबाईजी, योग्य इच्छाकार !

आपका धर्मध्यान सानन्द होता होगा; क्योंकि आपको इन दिनों १ निर्मल भव्यमूर्ति श्री निर्मल बाबूकी माताकी सुश्रूषा करनेसे वैयावृत्तका अनायास निमित्त मिल गया है॰ धर्मात्मा जीव वही हैं जो कष्ट कालमें धीरतासे विचलित नहीं होते, यों तो वस्त्राभावे ब्रह्मचारी बहुतसे मिलेंगे परन्तु आपत्तिकालमें शांतिसे समयका निर्वाह करने वाले विरले ही होते हैं। वही जीव जगतकी वायुसे अपनी रक्षा कर सकते हैं जिन्हें सत्य आत्मज्ञानका परिचय है, वास्तव बात तो यही है। अधिक परपदार्थोंकी संगतिसे किसीने सुख नहीं पाया, इसको त्यागनेसे ही सुखके पात्र बने। अब उनका शारीरिक रोग शांत होगा, मेरा तो दृढ़ विश्वास है पहले भी शांत था; क्योंकि जिसे अन्तरंग शान्ति है उसे बाह्य वेदना कष्ट करी नहीं होती, मेरा उनसे धर्म स्नेह पूर्वक इच्छाकार कहना और कहना जितनी शांति है उसकी रक्षा पूर्वक बुद्धि ही इस वेदनाका मुख्य प्रतिकार है। सर्व त्यागी मण्डल आपकी शांति वृद्धिका इच्छुक है।

महिला-परिषद्के प्रधान पदसे दिये गये भाषण

महिला-परिषद्का १० वाँ अधिवेशन सन् १९२१ में कानपुरमें हुआ था उस अधिवेशनमें प्रधान पदकी हैसियतसे आपने जो महत्वका भाषण पढ़ा था और जो बादको जनतामें तकसीम भी किया गया था, जिसमें प्रायः सभी उपयोगी एवं आवश्यक विषयोंका संक्षिप्त परिचय कराया गया है। और स्त्री-समाजमें फैली हुई अशिक्षाको दूर कर उन्हें साक्षर या शिक्षिता बनाने तथा कन्या महाविद्यालय जैसी ठोस संस्थाओंके स्थापित करनेकी ओर संकेत किया गया है। पाठकोंकी जानकारीके लिये उस प्रबन्धको ज्योंका त्यों नीचे दिया जाता है।

मोक्षमार्गस्य नेत्तारं मेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्वानां बन्दे तद्गुणलब्धये ॥१॥

प्रिय समागत भगनी गणों—

मुझमें ऐसी कोई योग्यता प्रतीत नहीं होती जिससे मैं आप लोगों जैसी धर्मज्ञ, देशहितैषिणी बहिनोंकी इस महती परिषद्की सभाध्यक्षा हो सकूं, तथापि इतना अवश्य है कि मैं आप लोगोंकी एक सेविका हूँ। और यथा शक्ति सेवा करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं करूँगी।

इस परिषद्के दशवें अधिवेशनके निर्विघ्न कार्य समाप्त होनेके लिये जो आप लोगोंने मुझे सभापतिका आसन प्रदान किया है इसके लिये मैं कोटिः धन्यवाद देती हूँ।

यद्यपि इस अपार भारके योग्य मेरी वयस, मेरी बुद्धि एवं मेरा ज्ञान पर्याप्त नहीं है, तो भी आप पूज्यनीया बहिनोंकी आज्ञा शिरोधार्य करना कर्तव्य समझ कर सेवामें उपस्थित होती हूँ।

इस महत् कार्यके आद्योपान्त निर्वाह करनेमें आप लोगोंकी पूर्ण कृपाका ही भरोसा है।

आजसे दश वर्ष पहले जबकि यह परिषद् श्रीसम्मेद शिखरकी परम पवित्र भूमि पर स्थापित हुई थी उस समय स्त्री-समाजमें बड़ा गाढ़ा आज्ञानान्धकार छा रहा था उस समय ऐसी आशा नहीं थी कि परिषद् अपना जीवन चिरस्थायी रख सकेगी अथवा अपने नियमानुकूल स्त्री-समाजका संगठन कर सकेगी परन्तु परमात्माकी कृपासे यह भय मिथ्या निकला इसके भिन्न २ अधिवेशन भिन्न स्थानोंमें श्री गजपन्थशिखर, दाहोद, अम्बाला, उदयपुर आदिमें हुए है और यथा साध्य कानपुरमें भी इस जन समूहके बीचमें कार्य चालू है।

कानपुर निवासिनी बहनोंके इस अपूर्व उत्साह और संगठनको देखकर बड़ा हर्ष होता है, इस युक्त प्रान्तमें भी स्त्री-समाजके नवीन सुधार की आशाका संचार होता है।

अधिवेशनोंकी बात तो यों रही परन्तु अब दूसरी बातका विचार करना भी आवश्यक है। वह यह है कि परिषदूसे स्त्री-समाजको कौन २ से लाभ हुए? इसके नियमोंका प्रतिपालन और संचालन कहां तक समाजने किया? इसका उत्तर हमको सन्तोष जनक नहीं मिलता, इस विषयमें यही कहना पड़ता है कि अभी तक हमारा वास्तविक सुधार कुछ भी नहीं हुआ है।

हमलोग अधिवेशनोंमें एकत्रित हुईं प्रस्तावोंसे सहमत हुईं

परन्तु अपने अपने घर जाकर इसके नियमानुकूल नहीं चलीं। इसीका यह प्रतिफल है कि अविद्या, बालविवाह, वृद्धविवाह, व्यर्थव्यय, दरिद्रता आदि दुष्ट शत्रुओंके पंजेसे अभी तक नहीं निकली हैं। यहाँ पर यह प्रश्न उपस्थित होता है कि ऐसा क्यों हुआ? आजतक महिलामंडलने अमली कारवाई क्यों नहीं की? इसका उत्तर केवल इतना ही है कि हमारी समाज व्यक्तिगत सुधार नहीं जानती। इस समय प्रत्येक व्यक्ति यही कहता है कि अकेले हमारे करने से क्या होगा? क्या एक मनुष्यके कुरीति छोड़नेसे देशका सुधार हो जायगा? बस इसी विचारने भावी उन्नतिमें कुठाराघात कर रक्खा है। और जब तक प्रत्येक मनुष्य अपना अपना उत्तरदायित्व स्वयं न लेगा, यह दुरावस्था कदापि परिवर्तित नहीं होगी।

सारी समाज हमारा अंग है। हमारे एक एकके मिलनेसे ही जाति व देशका संगठन है। यदि हम अपना अपना सुधार कर लें तो सहजमें जाति और देशका सुधार हो जायगा। हमारी प्रत्येक बहिनको दृढ़ होना चाहिये। कोई कुछ करे चाहे कुटुम्बी कुरीति सेवन करें या पड़ोसी अपव्यय करें परन्तु मैं कदापि नियम विरुद्ध कार्य नहीं करूँगी। किसी प्रकारकी कठिन समस्या उपस्थित होने पर भी व्रत भंग नहीं करूँगी। इस प्रकारकी प्रतिज्ञा जिसदिन भगिनीगण और बंधु अपने-अपने मनमें कर लेंगे उसी दिन समस्त जनताका सुधार हो जायगा।

जिस जातिका प्रत्येक व्यक्ति ज्ञान सम्पन्न है वही जाति उज्ज्वल एवं उन्नतिशील समझी जाती है, जिस देशके मनुष्य

धनशाली हैं वही देश धनी कहलाता है। जिस धर्ममें धर्मात्मा अधिक हैं वही धर्म चमकता हुआ नजर आता है। तात्पर्य यह है कि एकके अन्तर ही अनेक हैं। अतएव हमको अपने स्वयं एकका सुधार सबसे प्रथम करना चाहिये फिर अपनी संतान और समस्त कुटुम्बको ज्ञानी, ध्यानी, परोपकारी बनाना चाहिये। तत्पश्चात् समाज और देशका हित करना उचित है।

इसके विरुद्ध जो मनुष्य स्वयं अपने सुधार पर ध्यान नहीं देता वह दूसरेके लिये कदापि कुछ नहीं कर सकता। यही कारण है कि जैनसमाजके विद्वान् और धनवान् लोगोंके सहस्र प्रयत्न करने पर भी जातिका उत्थान नहीं होता। वर्तमानमें जैन जातिकी जो दुरवस्था हो रही है उसका वर्णन किसी प्रकार नहीं हो सकता। जिस प्रकार अधःपतन हो रहा है वह अकथनीय विषय है तथा प्रत्येक जैनके हृदयसे स्वयं अनुभवित होने योग्य है तथापि स्त्री-समाजमें किन-किन भयंकर कुरीतियोंने अड्डा जमा रक्खा है उनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है :—

१—अविद्या

इस राक्षसीने हमारी बहिनोंको मनुष्यत्वसे वंचित-सा कर रक्खा है। जो बहनें समझती हैं कि पढ़ना-लिखना स्त्रियोंका कार्य नहीं है वरन् केवल पुरुषोंको ही विद्यालाभ करना चाहिये। वे देवियाँ इस वर्तमान युगमें अपनी जातिके साथ बड़ा अनर्थ कर रही हैं। न स्वयं ज्ञानवती होती हैं न भावी संतानको ही ज्ञानी होने देती हैं।

हमारी भोली बहनोंको यह नहीं मालूम है कि इस समय हमारी जाति, हमारा देश व हमारी संतति जितने घोर संकट उठा रही है इन सबोंका मूल कारण एक अविद्या ही है।

यदि हम शिक्षिता और विद्यावती हों तो क्यों अपने गृह-प्रबंधमें कसर रक्खें, क्यों अपने बच्चोंको बुरा आचरण करने दें, तथा किसलिये अपने पतिकी गाढ़ी कमाईके धनको वस्त्राभूषणोंमें, नुकता न्योतोंमें लुटाकर नाश करें ? और साथ ही साथ हम क्यों धार्मिक ज्ञानसे विहीन होकर नरक निगोदके पात्र बनें। ये सब अवस्थाएँ अज्ञानने ही कर रक्खी हैं।

निर्मलभूमि दीख जाने पर कौन मनुष्य कण्टक पर शयन करेगा। यदि जैन देवियाँ शिक्षिता होतीं तो इन अनर्थोंको कदापि न होने देतीं।

२—अधर्म

जबतक भारतवर्षमें धार्मिक चर्चा सांगोपांग बनी रही तबतक लोगोंने विधर्मियोंके करोड़ों अत्याचार करने पर भी अपने-अपने धर्मकी रक्षा की, परन्तु अब वह युग नहीं है। इस समय देशने भी योरुप आदि देशोंके समान धार्मिक बंधन नितान्त ढीले कर दिये हैं और इसी चक्रमें जिनवाणीसे अनभिज्ञ हमारी भगनियोंने भी यह शिथिलता स्वीकार कर ली है न किसी बहिनको भोजनकी शुद्धता ज्ञात है न किसीको अन्यान्य गृहस्थ क्रियाओंका ज्ञान है, और न सन्तान शिक्षण ही मालूम है।

इस विषयमें केवल स्त्रियोंका ही अपराध नहीं है वरन् अधिक पाप पुरुषोंके ऊपर है। हमारे भाइयोंको आन्तरिक भय है कि

स्त्रियां पढ़कर और शिक्षिता धर्मात्मा बनकर अपनी आत्मोन्नतिमें तल्लीन हो जायँगी तथा पति पुत्रोंकी सेवा छोड़ बैठेंगी। परन्तु यह भय अयोग्य तथा निर्मूल है प्रत्युत सभी शिक्षिता स्त्रियां कुटुम्ब सेवामें त्रुटि नहीं करतीं बल्कि बड़ी योग्यतासे समस्त कार्य सम्पादन करती हैं इसके अतिरिक्त यदि किसी अंशमें थोड़े समयके लिये कार्यमें कुछ बाधा भी हो तो भी भाइयोंको इसकी परवाह नहीं करनी चाहिये अपने थोड़ेसे स्वार्थके लिये कन्याओंको और पत्नियोंको पशुवत् अज्ञानावस्थामें नहीं रख छोड़ना चाहिये।

३—बालविवाह

इस अन्यायने समस्त भारतवर्षको निर्जीव बना रक्खा है। अपक्व अवस्थामें बच्चोंका विवाह करनेसे उनका शरीर, उनकी बुद्धि, उनका तेज, सब नष्ट हो जाते हैं। एक एक मनुष्यके बलहीन स्वल्पजीवी कई कई बच्चे पैदा हो जाते हैं, उनके भरण पोषण और असमय मरणमें अल्पवय वाले माता पिताओंको जो महाकष्ट होता है उसका वर्णन बृहस्पति भी नहीं कर सकते, इसी प्रथा ने देशको अशक्त निर्धन बना दिया है। इसी प्रकार वृद्ध-विवाहने भी छोटी २ बालिकाओंका सर्वनाश कर रक्खा है। इन्हीं महात्माओंकी कृपासे कन्या विक्रय होता है इन्हींकी दयासे नाई, ब्राह्मण, पंच-प्रपंच सब के मुँह मीठे होते हैं और अनेक तरुणी स्त्रियां गली २ मारी मारी फिरती हैं इन दो कुप्रथाओंने अपनी वैश्य जातिमें विवाह सम्बन्धको भ्रष्ट कर दिया है। सब लोग यह समझते हैं कि ११ या १२ वर्षकी कन्या समर्थ हो चुकी और ५० वर्षका पुरुष भी बुड्ढा नहीं है परन्तु इस चालबाजीसे

विधवाओंकी संख्या नहीं घटती और न संतान ही शक्ति सम्पन्न हो सकती है। वरन् स्वार्थ और लोक लज्जाको छोड़कर कन्याका परिणय १६ वर्षकी अवस्था और पुत्रका २० वर्षकी अवस्थामें करना चाहिये।

यहां पर यह एक बड़ा भारी प्रश्न खड़ा हो जाता है कि समाजमें शिथिलता विशेष है, बच्चे जल्दी संसारी होते हैं और नाना प्रकारके दुर्व्यसनोंमें आसक्त हो जाते हैं। मैं भी कहती हूं कि यह बात बिलकुल ठीक है, क्वारे लड़के लड़कियोंको सुशील धर्मात्मा रखना बड़ा टेढ़ा काम है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपनी जिम्मेदारीके डरसे और रक्षा करनेमें कष्ट उठानेके भयसे उन्हें बालविवाहकी अग्निमें हवन कर दें।

नन्हें २ बच्चोंके विवाहमें नाचने गानेकी अपेक्षा उनकी रक्षामें ही समय देना माताका प्रधान कर्तव्य है। इस समय हमारी सन्तान प्रक्रिया बिगड़ गई है हमारी लड़कियां शीघ्र ही यौवनवती दीखती हैं। जैसे पोला जेवर बाहरसे मोटा और भारी दीखता है, परन्तु वास्तवमें सारहीन है। इस समय उनकी रखवालीमें हमको अवश्य समय लगाना होगा, परन्तु बीस वर्ष बाद फिर पूर्व अवस्था दीखने लगेगी। जैसे १०० वर्ष पहले १६ वर्षमें कन्याओंके यौवन चिन्ह दीखते थे, उसी प्रकार दीखेंगे। हमलोग झटपट विवाह कर कन्याओंको सुसराल भेजकर निश्चिन्त हो जाती हैं बस यही प्रमाद हमारी जातिको अभी छठे कालका तमाशा दिखलाने लगा है।

४—अपव्यय

इसने भी समाजको कम हानि नहीं पहुँचाई है, भारत

ऐसे कृषि प्रधान देशमें विशेष खर्च करने वाला मनुष्य अवश्यमेव पापी है। लखपति हो या करोड़पति जो मनुष्य अधिक व्यय करता है एक दिन अवश्य कष्ट भोगता है। यह खर्चीला अभ्यास हमको विलासिता सिखाकर लालची बना देता है। परिग्रहका निषेध हमारे आचार्योंने मुनिसे लेकर गृहस्थ तकको यथावस्था भले प्रकार बताया है। 'घटती जान घटाइये' यह वाक्य बहुत ही कल्याणकारी है। जो मनुष्य साधुतासे जीवन व्यतीत करता है वह बड़ा सुखी है। उसको कभी दरिद्रता दुःख नहीं दे सकती। न किसीकी सेवा करनी पड़ती है, यदि हमारी बहनें परिग्रहकी तृष्णा कम कर लें तो उनको बिदेशी वस्तुएँ कदापि न खरीदनी पड़ें। अपने देशके गाढ़े सादे कपड़ोंसे और अल्प मूल्यके आभूषणोंसे ही सन्तोष हो जाय।

इसी प्रकार यदि हम अपव्यय करना छोड़ दें तो विवाहके समय बागबाड़ी, फुलबाड़ी, वेश्या नृत्य, सब उठ जायँ। यहां तक कि यदि वेश्याओंकी धनपूजा कम हो जाय तो उनका यह महा घृणित रोजगार ही कम हो जाय।

इन सब कुकृत्योंसे धनको बचाकर परमार्थमें, दानमें, धर्ममें लगाना ही हमारा कर्त्तव्य है। यदि हम धन फेंकना बन्द नहीं करेंगी तो हमारे पास कभी शुभ कार्यके लिये लक्ष्मी नहीं रहेगी।

हमने कितने ही बार देखा है कि सुवर्ण और मोतियोंसे लदी हुई बहिनेंको भी सभा सोसायटीमें २) रु० से अधिक चन्दा देना बुरा लगता है और भागनेके लिये तत्पर हो जाती हैं। इसमें बहनोंका अपराध नहीं है यह उनकी फिजूल खर्चीका फल है।

५—दुराचरण

इसने जैन समाजको बहुत ही गिरा दिया है। पुरुषोंके आचरण तो भ्रष्ट हो ही रहे हैं परन्तु अब दिनोंदिन स्त्रियां उनसे भी बिगड़ी जाती हैं।

आजकल प्रत्येक युवती यह समझती है कि मेरे पतिने अंग्रेजो पढ़ी है, विदेश घूमने वाला है जिस जगह यह जाय वहाँ जाना, और जो भक्ष्याभक्ष्य यह खाय वह खाना मेरा कर्त्तव्य है इसीमें प्रेम है यही पतिव्रत धर्म है। ऐसे २ विचारोंसे बहुत सी बहिनें जो कि बड़े २ धर्मात्मा घरानोंकी पुत्रियां हैं जिनके माता पिताओंने अनेक धर्म कार्य किये हैं वे भी रात्रि भोजन आदि करती हुई दृष्टिगोचर हो रही हैं। परन्तु देवियो! यह आपका विचार हितकारी नहीं है। स्त्री पतिकी अर्द्धांगिनी है, उसकी सहायिका है और कुमार्गसे बचाने वाली गृह-देवी है।

यदि किसी मनुष्यका एक हाथ लकवाकी बीमारीसे शून्य हो जाय और बिलकुल कार्यका न रहे तो क्या दूसरे हाथको भी यह उचित है कि वह चुपचाप बैठ जाय? कदापि नहीं, वरन् वह और भी तेजीसे काम करने लगता है।

इसी प्रकार पतिरूपी आधा अंग पाप करने लग जाय तो हमको पाप कदापि नहीं करना चाहिये, वरन् अपनी बुद्धिमत्तासे पति, पुत्र या जो कोई सम्बन्धी हो उसको सुमार्ग पर ले आना चाहिये जो वस्तुएँ सम्मुख दीखती हैं वे सब यहाँ ही रह जायँगी परन्तु धर्म तुम्हारा साथी परभव तक साथ चलेगा धर्म तुम्हारे किसी कार्यमें बाधक नहीं है यह विचार भ्रम मात्र है।

देखिये महात्मा गांधी भी रात्रिमें भोजन नहीं करते, कभी मौनसे रहते हैं क्या वह काम करनेवाले नहीं हैं ? क्या कोई उनसे विशेष पर्यटन करनेवाला है ? कदापि नहीं, मनुष्यको किसी कार्यको करनेके पहले अपने हानि लाभका विचार कर लेना चाहिये ।

जिस संगतिमें रहनेसे अपना स्वभाव शिथिलता पकड़े, जिस वस्तुके खानेसे धर्माघात हो, जिस स्थान पर जानेसे मर्यादा भंग हो ऐसे स्थलोंको दूरसे छोड़ना ही श्रेष्ठ है ।

बहुत-सी स्त्रियां तीर्थ वन्दनाके बहानेसे कौड़ी कौड़ी जोड़कर घरसे निकलती हैं, परन्तु मार्गमें बाजारकी वस्तुएँ खाकर, परस्पर कलह बिसम्वाद करके उल्टा पापबंध कर लेती हैं । तात्पर्य यह है कि मनुष्यको कहीं भी किसी अवस्थामें क्यों न हो उसे अपना आत्मबल नहीं छोड़ना चाहिये ।

जैन बहनोंको सदैव शुद्ध और अपने हाथोंका बना हुआ भोजन करना चाहिये, कहार-कुर्मियों द्वारा बना भोजन करना, मांस भक्षियोंके साथ बैठकर खाना परिणामोंको मलीन बनाता है ।

इसी प्रकार झूठ बोलना, दया रहित परिणाम रखना, अत्यन्त लालच करना ये सब कुकृत्य छोड़कर अपना और अपनी संतानका हित करना उचित है ।

कुरीतियोंका वर्णन कहां तक किया जाय इस समय जिधर देखिये उधर अज्ञानता ही दीखती है । जिस ब्रह्मचर्य व्रतके कारण भारत सतियां जगत प्रसिद्ध थीं, उसमें भी त्रुटि होने लगी है ।

यह किस्सा तो वर्तमान समाजका रहा। अब यह विचार भी परमावश्यक है कि पुरातन सतियां कैसी होती थीं।

प्राचीन देवियोंके जीवन चरित्र पुराणोंमें लिखे मिलते हैं उनके सादे जीवन इतने पवित्र थे कि जिनका शतांश भी आज हमलोगोंके जीवनमें नहीं है और इसी कारण नाना प्रकारकी यमयातना सहनी पड़ती हैं।

सीताजीने महा योधा राजमुकुटधारी रावणको कितनी बार किस योग्यतासे समझाया था और कितना फटकारा था, जिससे वह उस वीरांगनाका सामना अन्त तक न कर सका।

सीताको अपने पतिका बड़ा भरोसा था, रावणकी परिचारिका विद्याधरियोंने विद्याबलसे कई बार रामचन्द्रको मृतक दिखाया, उनका कटा हुआ सिर सामने पड़ा दिखाया परन्तु वह अपने धैर्यसे च्युत नहीं हुई। इसी प्रकार यदि हमारी बहनें अपने धैर्य और मर्यादाको स्थिर रक्खें तो कदापि समाजका बाल भी बांका नहीं हो सकता।

श्रीपालकी रानी मैनासुन्दरीने किस प्रकार पतिकी सेवा की थी, श्रीजिनेन्द्रदेवकी प्रगाढ़ श्रद्धाभक्तिके द्वारा कैसा असीम पुण्य लाभ करके पतिका कुष्ठ रोग नष्ट किया था यह जगत प्रसिद्ध बात है, पितासे शास्त्रार्थ करनेमें भी यह सती बड़ी विद्यावती सिद्ध हुई थी।

मतलब यह है कि स्त्रियोंके पूर्व चरितोंसे यही निष्कर्ष निकलता है कि वे वीरा, सदाचारिणी, पढ़ी-लिखी और विद्यावती थीं।

उस समय पुत्रियोंको मनुष्य उच्च दृष्टिसे देखते थे उनके

लालन-पालन, विद्याभ्यास, संगीताभ्यास और शीलाभ्यासकी संपूर्ण व्यवस्थाओंमें अपनी शक्ति लगाते थे।

स्वयं आदीश्वर स्वामीने ही अपनी पुत्री ब्राह्मी और सुन्दरीको निज हाथसे विद्यारम्भ कराया था। इन दोनों देवियोंने अपना जीवन किस उत्तमतासे व्यतीत किया है, यह बात प्रत्येक पुराण सुननेवाली बहिनको ज्ञात ही होगी।

स्त्रियोंके पढ़ने लिखनेका निषेध और परदा करना, बाल-विवाह करना ये सब कुरीतियां मुगल बादशाहोंके समयसे चल पड़ी हैं। पुराने इतिहास पढ़नेसे यह बात भली भाँति ज्ञात हो जाती है कि ये रीतियां हिन्दू महाराजाओंके समय में कभी नहीं थीं। इस समय भी दक्षिण प्रांतमें जहां मुगल बादशाह नहीं पहुँच सके थे परदेकी प्रथा नहीं है, बालविवाह भी इधर कम है।

भारतवर्ष एक बड़ा देश है इसमें कई भाषायें बोली जातीं हैं अनेक प्रकारके वेष हैं और नाना प्रकारके आभूषण पहने जाते हैं।

भिन्न २ प्रकारकी रीति-रिवाज दीखते हैं ये सब भेद विशालताके कारणसे भी हैं और अधिकतर विदेशी राजाओंके आक्रमणसे उत्पन्न हुए हैं। मुसलमानी राज्योंके समय समस्त देशमें अरबी, फारसी, उर्दूकी भरमार थी, अब इंगलिशकी पढ़ाई जोर पकड़ रही है। कहनेका तात्पर्य यह है कि दूसरोंके आधीन रहनेसे इस देशका निजतत्व प्रायः लुप्त सा होता जाता है, परन्तु इस समय कालने बड़े जोरोंका पलटा खाया है और समस्त जातियाँ अपने प्राचीन गौरवको पुनः प्राप्त करनेका प्रयत्न बड़े उद्योगसे कर रही हैं।

अपनी प्राचीनता कायम करनेके लिये वे चिराभ्यस्त विला-सिताको छोड़ रही हैं सब लोग देशका मोटा कपड़ा पहन कर संतोष करने लगे हैं। बड़े २ बिदेशी भारतीयोंकी अत्यधिक स्वदेश-प्रियतासे विवश होकर रोजगार छोड़ बैठे हैं।

सम्पूर्ण देशमें अपना स्वत्व प्राप्त करनेके लिये घोर आन्दोलन हो रहा है। कृषकसे लेकर सिंहासनाधीस तक अपने अपने योग्य प्रयत्नमें लगे हैं।

चमार, चुहार आदि छोटी २ अछूत जातियोंने भी पंचायतोंके नियम बना-बनाकर मदिरापानादि सब कुप्रथाओंका त्याग करना प्रारम्भ कर दिया है।

बहिनो! इस युगमें हमारी जैन-जातिका भी यही कर्तव्य है, कि यह अपने धर्मकी, अपनी मान मर्यादाकी, अपनी सन्तति सुधारकी वृद्धि करे। सारी कुरीतियोंको हटा दें और उन्नति मार्ग पर आरूढ़ हो जांय। यह उन्नतिका मार्ग क्या है? और इस पर चलनेके कौन २ से साधन हैं? इस बातका विवेचन पंडितों और परोपकारी महात्माओंके द्वारा कितनी ही बार आपने सुना होगा। तथा इस विषयके कितने ही लेख समाचारपत्रोंमें पढ़े होंगे।

पच्चीसों वर्षोंसे 'भा० दि० जैन महासभा', प्रांतिक सभा आदि कितनी ही सभा प्रति वर्ष उन्नति करने वाले प्रस्ताव पास कर रहीं हैं।

इसी प्रकार १० बर्षोंसे इस परिषद्‌ने भी कितने ही प्रस्ताव पास किये हैं। अतएव उन्नतिका विषय आप लोगोंके सम्मुख प्रथमसे ही वर्णित है। केवल यहाँ पर मैं उन्हीं बातोंको कहना चाहती हूँ जो विशेषतः स्त्री-समाज पर निर्भर हैं और जिनके

परित्याग या जिनके ग्रहण किये बिना हमारी उन्नति किसी प्रकार भी नहीं हो सकती।

पुरुष कितना ही प्रयत्न क्यों न करें जब तक स्त्रियां अपना विचार, अपना व्यवहार नहीं सुधारेंगी तब तक समाज सुधार कदापि नहीं हो सकता।

बहनो ! आप लोग केवल संतानकी ही जनयित्री नहीं हैं, वरन् सम्पूर्ण कल्याणोंको पैदा करने वाली माताएँ हैं। धन आपके ही हाथोंमें जीवित रह सकता है। धर्म भी आप ही के सहारे ठहर सकता है। विद्या भी आप ही के द्वारा विस्तृत हो सकती है। आपका अंग ही देशका अर्ध भाग है। आपके अशिक्षिता रहनेसे सारी समाज अंगहीन है।

मैंने जिन २ कुरीतियोंका वर्णन किया है उन सबोंको जड़से खोदकर हटा दें तभी आपका और आपकी संतानका कल्याण हो सकता है।

६—सभा

इन कुरीतियोंके रोकनेके लिये एक २ प्रांतमें एक २ स्त्री-सभा स्थापित होनी चाहिये और उसकी वार्षिक रिपोर्ट महिला-परिषद्में आनी चाहिये, यदि इन सभाओंके प्रबन्धमें कुछ धन व्यय हो और उसको स्थानीय बहिनें न सह सकें तो महिला-परिषद्से लेना चाहिये।

जब तक प्रांत २ में सभा स्थापित न होंगी तब तक महिला-परिषद्के प्रस्तावोंका प्रचार सर्वत्र नहीं हो सकता।

इन सभाओंमें सम्भवतः निम्नलिखित प्रस्ताव होने चाहिये।

(१) बालविवाह और कन्या विक्रय न होने पावे।

(२) धार्मिक विद्याके प्रचारार्थ ग्राम २ में यथा सम्भव कन्या पाठशाला स्थापितकी जांय। और उनकी परीक्षा आदिका प्रबन्ध इसी सभाके द्वारा किया जाय।

(३) बेढब और बहुमूल्य आभूषण तथा वस्त्रोंके रोकनेका प्रयत्न किया जाय।

हमने ग्वालियरकी रियासतके आसपासकी बहनोंको देखा है कि सिरपर चूड़ामणिके स्थान पर एक नोकीला ४-६ अंगुल ऊंचा आभूषण पहिनतीं हैं. जिससे उनकी ओढ़नी भी कटती है, सिरपर भार रहता है देखनेमें असभ्यता दीखती है यदि दैवयोगसे गिर पड़े तो मस्तक छिदना भी सम्भव है। इसी प्रकार दक्षिण देश वाली दोनों ओर नाक छिदाकर अंगोंको विकृत बनाये रहती हैं, उत्तर देश वाली भी नथ आदि कितने ही आभूषण इतने बड़े लम्बे चौड़े पहिनती हैं जिससे शरीरको बहुत हानी पहुँचती हैं। बालकोंको भी इतने बन्धनोंमें बांध डालती हैं, जिससे उनके हाथ पैरोंका बढ़ना रुकता है। यह तो दिग्दर्शन मात्र है, सब देशोंमें आभूषणोंकी गति विचित्र है। इनके सुधारका उपदेश सभाओं द्वारा होना चाहिये।

आभूषणोंके कम करनेमें अनेक गुण हैं, प्रथम तो परिग्रहकी लालसा घटती है इसलिये पुण्य संचय होता है। दूसरे द्रव्य कम खर्च होता है, रक्षाकी चिन्ता भी नहीं होती।

विधवा बहिनोंके आभूषण नियमोंसे भी बहुत ही कमकर दिये जांय, विधवाओंको इनके लिये बड़े कष्ट उठाने पड़ते हैं, न तो बनवाने वाला मिलता है, न धन ही पर्याप्त मिलता है, बड़ी कठिनाईसे

बनवाकर पहिनती हैं। समस्त कुटुम्बकी शत्रु बन जाती हैं और अपने शीलमें भी चमक दमकके द्वारा दूषण लगा बैठती हैं।

विधवा बहिनोंको आभूषण सीधे सादे, ठोस दो एक इसलिये पहनने काफी हैं कि जिससे दुष्कालमें कुछ द्रव्यकी सहायता मिल जाय इसके अतिरिक्त शरीरको अलंकृत करना उचित नहीं है। सधवा बहिनोंको भी शरीरको सुन्दर दिखाने वाले थोड़े गहने ही पहनने उचित हैं विशेष व्यय ठीक नहीं है।

७—उपदेशिका

इन सभाओंकी ओरसे दो चार उपदेशिका वैतनिक व आनरेरी रक्खी जांय, जो घर २ में जाकर स्त्रियोंको स्वाध्यायके योग्य विद्या पढ़ा दें, जिस प्रकार मिशनरी घूम २ कर पढ़ाती हैं।

प्रमाद और कृपणताके कारण हमारी जो बहनें अध्यापिका खोजने और पाठशाला या आश्रम आदिमें जानेसे मुख मोड़ती हैं उनको ज्ञान सम्पन्ना बनानेके लिये, यही एक मार्ग उत्तम है।

मिशनरीकी पादरिन जब किसीके घर पर जाकर बैठती है तब कोई बहिन मनसे पढ़ती हैं कोई भाई बहिनके समान भी बैठ जाती हैं परन्तु पढ़नेका सिलसिला चलते रहनेसे कुछ न कुछ आ ही जाता है। इसी प्रकार उपदेशिका बहनोंका उपदेश भी अवश्यमेव जैन धर्मके ज्ञानको स्त्रियोंमें फैला देगा।

८—स्वाध्याय

जब तक हमारी बहिनोंको स्वाध्याय करना नहीं आयगा तब तक उनकी क्रिया स्वपर हितकारिणी नहीं हो सकती, शास्त्रोंके पठन पाठनसे ही यह ज्ञान होता है कि पूर्वकालमें स्त्रियां कैसी हुई थीं।

इस समय हमलोग कौन २ से अन्याय अभक्ष्यका सेवन कर रही हैं इनके त्याग करनेसे क्या लाभ है ?

किन २ परिणामोंसे बन्ध होता है ? कौन २ से सत्कृत्य स्वर्ग मोक्षमें सहायक हैं ? जिन देवका क्या स्वरूप है ? किस प्रकार भक्ति और श्रद्धा करनी चाहिये । मिथ्यात्व सेवनसे कितना पाप बन्ध होता है ? कषाय और मिथ्यात्व यानि कुदेवादिकोंको मानना, पूजना और अपने आत्म स्वरूपको न समझना; इन बातोंने हमारी आत्माको कितना भव भ्रमण कराया है । नरक निगोद तक अनन्त वार पहुँचाया है इत्यादि बातोंका सम्पूर्ण ज्ञान शास्त्र स्वाध्यायसे ही भले प्रकार हो सकता है ।

दान धर्ममें भी प्रवृति धर्म ज्ञानसे ही हो सकती है । अमुक दानका यह फल है, विद्या दानसे ज्ञानकी प्राप्ति होती है, औषधि दानसे निरोग शरीर मिलता है, आहार दानसे भोग भूमिके सुख मिलते हैं, अभय दानसे भयका नाश होकर निर्भय स्थान मिलता है इत्यादि बातोंकी समझ और श्रद्धा जिन वाणीसे ही हो सकती है ।

अब यहाँ पर यह कठिन प्रश्न उठता है कि इन सभाओंका संचालन कौन करेगा ? इसके लिये अधिक दूर जानेकी आवश्य-कता नहीं है । बाह्य देख भाल परिषद्‌की रहेगी और अंतरंग सर्व प्रकारका प्रबन्ध स्थानीय परोपकारिणी बहिनोंको लेना चाहिये । परोपकारियोंके लिये कोई बात कठिन नहीं है ।

किसी बहिनको यह न समझना चाहिये कि हम कम पढ़ी लिखी हैं हमसे कुछ न हो सकेगा, देखिये अन्य जातियोंमें एक

एक सामान्य पढ़ी लिखी बहिनें बड़े २ विद्यालयोंको चला रही हैं। परोपकारके भाव रखनेसे ही सर्व कार्योंकी सिद्धि हो जाती है। अपना स्वभाव सज्जन होगा तो उत्तम वैतनिक सेवक-सेविका भी मिल जायगी, द्रव्य भी मिल जायगा, अनुभव भी बढ़ जायगा सज्जनताके सामने समस्त कार्य स्वयं सफलीभूत हो जाते हैं।

कविका मत है—सूर्यश्चन्द्रो घनोवृत्तो नदीधेनुश्च सज्जनः।

एते परोपकाराय विधात्रैव विनिर्मिताः॥

भावार्थ—सूर्य्य, चन्द्रमा, सघनपेड़, नदी, गौ, और सज्जन मनुष्य ये सब परोपकारके लिये ही उत्पन्न हुए हैं।

परोपकारकी महिमाका वर्णन अनेक ग्रन्थोंमें वर्णित है, वर्तमानमें भी परोपकारीके गौरवको, उसकी प्रशंसाको कदापि कोई नहीं पा सकता। अतएव हमारी बहनोंको दूसरोंकी भलाईमें सदैव दत्त-चित्त रहना चाहिये।

मौका न फिर मिलेगा, गो सर पटक मरोगे।

यह वक्त कामका है, तुम काम कब करोगे॥ (महर)

इस समय हमको विद्या वृद्धिके नवीन २ उपाय निकालने चाहिये, जिस प्रणालीसे अबतक समाज संगठित हुआ है या हो रहा है वह पर्याप्त नहीं है।

जो लोग शहरोंके बढ़िया २ मकानोंमें बैठे २ दिन पूरे करते हैं उनको जाति व देशका पता नहीं है अथवा जो धनी महाशय नौकर चाकरोंको आज्ञा प्रदान करते ही भोग सामग्रीको प्राप्त कर लेते हैं उनको भी सर्वसाधारणकी दुःखमयी अवस्थाका ज्ञान नहीं होता है।

हमलोगोंकी ऐसी दृष्टि भौचक हो गई है कि उसमें स्वार्थरहित किसी वस्तुका प्रतिभास ही नहीं होता। इसीसे यह सोच बैठे हैं कि विद्या प्राप्त करना, अथवा बहुमूल्य वस्त्राभरण करना और धर्मसाधन करना ये सब कार्य इनेगिने हम धनी-मानी लोगोंके ही कर्तव्य हैं; इनपर हमारा ही पूर्ण अधिकार है। परंतु यह हमारा भ्रममात्र है इसी भ्रमात्मक दृष्टिने हमारी संख्या घटा दी, जैनजातिको एक छोटा-सा फिरका बना दिया, संसारसे अहिंसा धर्मको विदा कर दिया।

बहनो! हमको अपने विचार उदार बनाने चाहिये। समस्त-संसारमें परम पवित्र अहिंसा धर्मका प्रचार करना चाहिये परन्तु यह तभी हो सकता है जब कि हमारी विद्या उन्नतावस्थामें हो, हमारा समाज दूसरोंसे घृणा न करके वरन् उनको उपदेश देना सीखे; हमारे यहां ऐसे-ऐसे विद्यालय, ऐसे-ऐसे विधवाश्रम होने चाहिये जहां उपयोगी उच्च जातिकी शिक्षा हो। सबको आत्महित समझाया जाय, अहिंसा धर्मका रहस्य बताया जाय। एक एक प्रांतमें कमसेकम एक एक विद्यालय और एक एक विधवाश्रम जरूर होना चाहिये।

महिला परिषद्‌के प्रस्तावानुकूल बम्बई, देहली आदि स्थानोंमें दो एक आश्रम खुले हैं, परन्तु इतनी बड़ी जनताके लिये ऐसी-ऐसी कितनी ही संस्थाओंकी आवश्यकता है तथा उन संस्थाओंमें उदार प्रबन्ध और उत्तम नियमोंकी आवश्यकता है। जिस संस्थाके नियम ठीक नहीं हैं उससे उचित लाभ नहीं हो सकता अथवा जिस स्थान पर द्रव्यकी कमी है वहाँ भी उत्तम कार्य नहीं हो सकता।

वर्तमान समय एक ऐसा दुर्घट है जिसमें भारतवर्षकी देवियाँ बिना सहायताके कोई विशेष लाभप्रद कार्य नहीं कर सकतीं। इस समय विद्वान् और धनवान् पुरुषोंकी निःस्वार्थ भावसे पूर्ण सहानुभूति हो तभी स्त्रियोंकी संस्थाएँ यथेष्ट काम कर सकती हैं, इतनी बड़ी समाजमेंसे कमसेकम दस-पाँच भाइयोंको भी स्त्रियोंके उद्धारार्थ अपना जीवन लगा देना चाहिये तभी कुछ हो सकता है। जिस समय निष्पक्ष सेवी मनुष्य चन्दा एकत्रित करने लगेंगे तो सरलतामे १०-२० लाखका चंदा इकट्ठा हो जायगा। और इस पूंजीसे कई संस्थाएँ भले प्रकार कार्य कर सकेंगी। अपनी समाजके विद्यालय ऐसे होने चाहिये जिनकी व्यवस्था छात्राश्रम प्रथा पर संचालित हो, प्रत्येक विद्यालयके साथ छात्राश्रम होना चाहिये जिनमें विधवा बहनोंके लिये रहनेका पृथक् प्रबन्ध हो और सधवा तथा कुमारियोंके लिये भिन्न स्थान हो।

इन विद्यालयोंमें उच्च कोटिके धार्मिक ग्रंथोंका अध्ययन रक्खा जाय और गणित आदिका भी उचित प्रबंध रहे, क्योंकि यदि भाग्यवशात् कुटुम्बियों पर किसी प्रकारकी आपत्ति आ जाय और स्त्रियोंको अकेले रहना हो तो उस समय हिसाब किताबके ज्ञान बिना सब सम्पत्ति नष्ट हो जाती है।

६—समाचार-पत्र

अनुभव बढ़ानेके लिये हमारी बहनोंको समाचार-पत्र अवश्य पढ़ने चाहियें, भाषाका सौन्दर्य्य, उसकी उन्नति-अवनतिका ज्ञान उत्तम पत्रोंके पढ़नेसे ही होता है।

तथा सर्वत्रके समाचारोंका बोध एवं साहित्यकी उत्तम समा-

लोचना भी इन्हींसे मालूम होती है। इसके लिये महिला-परिषद्को एक पत्र निकालना चाहिये जिसकी सम्पादिका स्त्री हो और उसमें निबंध भी प्रायः महिलाओं द्वारा ही लिखे हुए हों।

१०—देश सेवा

बहिनोंको भी देशके कार्यमें भाग लेना चाहिये। वर्तमानमें अन्यान्य समाजकी भारतीय बहिनें काम करने लगी हैं। जिस प्रकार सौ० अवन्तिकाबाई गोखले, नान्हींबाई गज्जर, सरोजनी-देवी नायडू, ये देवियां बहुत धीरे २ प्रारम्भ करके इस समय बड़े २ उपयोगी कार्य कर रही हैं। उसी प्रकार अपने देशके सुख दुःखको समझना, अपनी कुरीतियोंको हटाना, स्वदेशी वस्तुओंके व्यवहारको बढ़ाना इन कार्योंमें समय लगाना चाहिये।

११—शिल्प शिक्षा

बहनोंको अपना समय प्रमादमें खोना उचित नहीं है। गृहके कार्योंसे बचा बचाया समय हाथकी चीजोंके बनानेमें लगाना चाहिये। पूर्वके अनुसार चर्खेका काम फिर जीवित करना चाहिये।

विधवा बहिनोंके धनकी रक्षा—

विधवा स्त्रियोंको अपनी सम्पत्ति किस ढंगसे काममें लानी चाहिये इस विषयमें अपना देश अत्यन्त विपरीत मार्गका आश्रय ग्रहण कर रहा है बहिनें केवल पुत्र गोद लेना ही अपना कर्तव्य समझती हैं। परन्तु यह प्रथा ठीक नहीं है। इससे कभी २ नाम-वरीके स्थानमें उल्टा दुर्नाम होता है। अब इस नामके प्रश्नको छोड़ देना चाहिये। निस्सन्तान बहिनोंको अपनी सम्पत्ति दानमें लगानी चाहिये।

एक २ धार्मिक संस्था कन्याशाला, कन्याविद्यालय स्वयं एक मनुष्य या कई बहिनोंको मिलकर खोल देने चाहिये। यह आपकी अजर अमर संतति चिरकाल तक प्रसिद्ध करती रहेगी। अमेरिका आदि देशोंमें विधवा महिलाओंकी संस्थापित अनेक संस्थाएँ हैं। यही दृष्टान्त हम लोगोंको भी कर दिखाना उचित है। जो बहिनें प्रौढ़ अवस्था वाली हैं और जिनके कषाय मन्द हो गये हैं उनको उदासीन होकर स्त्रियोंमें त्याग-मार्गको संचारित करना चाहिये।

उत्तर देशमें एक भी त्याग धर्म वाली स्त्री नहीं दिखती। यदि ब्रह्मचारिणीके व्रतोंको धारण कर गुर्वी देवियां उपदेश देने लगें तो जैन स्त्रीसमाजका भाग्योदय फिर होना सम्भव है। अन्तमें मैं समस्त भगिनीगणों एवं बन्धुओंसे क्षमा चाहती हूँ। इस व्याख्यानमें जो कुछ अनुचित प्रलाप हुआ हो उसके लिये मुझे आशा है आप लोग अवश्य क्षमा कर देंगी। और अपने गुण ग्राही स्वभावसे अच्छी बातोंको चुन लेंगी।

डायरी के कुछ पन्ने (पत्र)

पं० चन्दाबाईजी अपनी डायरी लिखती हैं—जब जब आरासे कहीं अन्यत्र यात्रार्थ या समाज-सेवाके कार्योंके लिये जाती हैं तब-तब आपने अपनी डायरीमें जो जो कार्य किये, जहाँ जहाँ उतरीं, ठहरीं व व्याख्यानादि दिये, जिन जिन स्थानोंको आपने देखा, जिन जिन तीर्थ क्षेत्रोंकी वन्दनाएँ की, जैन शिक्षा-संस्थाओंका निरीक्षण किया और जिन विद्वानोंके भाषण सुननेको मिले, प्रायः उन सबका उल्लेख डायरीमें किया गया है। विद्वानोंके भाषण सुनते समय जो महत्वकी बात मालूम हुई उसे भी आपने नोट कर दिया है। इस डायरीके यात्रा-सम्बन्धी उल्लेखोंमें कितने ही ऐतिहासिक एवं महत्वपूर्ण स्थानोंका उल्लेख भी पाया जाता है, मेरे पास जो डायरी है उसमें सन् १९३४ से विवरण पाया जाता है। यद्यपि इससे पहले भी उनका डायरी लिखना पाया जाता है; क्योंकि इस डायरीके साथमें कुछ पेज सन् १९३३ की डायरीके भी नत्थी हैं, जिससे यह स्पष्ट है कि बाईजी सन् १९३४ से पहले भी अपनी डायरी लिखती थीं। अस्तु, पाठकोंकी जानकारीके लिये डायरीके कुछ पेज नीचे दिये जाते हैं :—

ता० २७-५-३३ को आरासे चलकर इलाहाबाद पहुँचे, वहाँ ३ घंटे रहकर सुशीलादेवीके यहाँ दर्शनादिसे निपटकर ट्रेन पर ८ बजे सवार हुए। ९ बजे छिउकी आए। जिस डब्बेमें हम सवार थे वह काटकर मेलमें जोड़ दिया गया, वहांसे सीधे भुसावल पर रातको १ बजे उतरे; १५ मिनट बाद वहांसे ट्रेन चली, ५ बजे

मूर्तिजापुर बदलकर सवेरे कारंजा पहुँच गए। मार्गमें राजूबाई व सांगलीकी श्रीमती कोकिलेबाई भी मिल गईं। उस समय कारंजामें उत्सव हो रहा था, आते ही बैठ गए। १० बजे पूर्ण होने पर स्नानादि किया। मध्यान्हके समय स्त्री पुरुषोंकी एक महती सभा हुई। सिंघई पन्नालालजी अमरावती वालोंने आश्रमका उद्घाटन किया। 'श्री कंकुबाई श्राविकाश्रम' नाम रक्खा गया। १७०००) सत्तरह हजारका ध्रौव्यफण्ड हुआ, जिनमें १००००) रु० कंकुबाईके पिता व पुत्रने दिये, शेष चन्देसे प्राप्त हुए।

कारंजामें वीरसेन भट्टारकजीसे मिले, आप केवल शुद्ध निश्चयनयसे आत्मतत्त्वको समझाते हैं दृष्टान्त अच्छे अच्छे देते हैं, नाटक समयसार कलशा और वेदान्त वाक्य पढ़ते हैं। आपने पूछा दिवाली पर मकान पुतवाती हो? मैंने कहा हां, तब आपने कहा आकाश भी पुत जाता होगा? मैंने कहा नहीं, आपने पूछा क्यों नहीं? वह सब जगह है दीवारके साथ उसपर भी चूना चढ़ता होगा? मैंने कहा वह अमूर्तिक है। तब आपने कहा, बस आत्मा भी तो अमूर्तिक है वह भी कर्म आदिसे नहीं लिपता है, इत्यादि कई दृष्टान्त सुनाए।

ता० २७-५-३३ की रात्रिमें छात्रोंकी एक सभा हुई, जिसमें मैंने भी 'शिक्षा और उससे लाभ' विषय पर वक्तव्य दिया जो सबको रुचिकर रहा।

ता० ३१-५-३३ को एक लारी द्वारा हमलोग मुक्तागिरि गए। रात्रिमें ६ बजे चले, २ बजे खरपी गाँवके जैनमंदिरमें ठहरे, २ घंटे सो कर फिर वहाँसे चले और सवेरे सात बजे

श्रीमुक्तागिरि पहुंच गए, खरपीसे रास्ता कच्चा व खराब है। पर लारी चली गई, १४ सीटकी लारी २८) रु० में हुई।

श्रीमुक्तागिरि छोटा-सा पर्वत है। ४८ मंदिर हैं। पहले मंदिरजीमें पूजन की, मूर्ति सब अति मनोज्ञ हैं, प्राचीन मूर्तियों पर संवत् नहीं है। संवत् ६०० तककी प्रतिमाएँ हैं। चंदन वर्षता है, इसके छींटे सब जगह पड़े थे, लोग कहते हैं कि मधु-मक्खीका होगा; परन्तु हमने खूब ध्यानसे देखा, चन्दन वास्तविक था। पुजारी कहते थे कि वर्षाकालमें भौंरे, मक्खी कुछ नहीं रहते, तो भी चन्दन वर्षता ही है। अष्टमी चौदशको वर्षता है, मैं भी अष्टमीको पर्वत पर चढ़ी थी १२ बजे पर्वतसे उतरी, नीचे जिनालयमें सामायिक की और ४ बजे वहाँसे चलकर ११ बजे लारीसे कारंजा वापिस आ गए। मार्गमें परतवाड़ा (एलिचपुर) के मंदिरके दर्शन किये, नया रंग बहुत अच्छा हुआ है, दर्शनीय है; अमरावतीमें दर्शन व सामायिक की।

ता० ३-६-३३ को कारंजा नगरमें एक बृहत् सभा हुई, सभापति सिंघई पन्नालालजी अमरावती थे। मुझे मानपत्र दिया गया; एक घंटा भाषण हुआ। दो जैनेतर व कई जैन महानुभाव बोले—उन्होंने मेरे विषयमें प्रशंसात्मक शब्द कहे। शामको मोतीसा चवरेके यहाँ पानी पिया।

कारंजा ब्रह्मचर्याश्रमके लड़कोंकी परीक्षा ली, उत्तर ठीक रहा, रात्रि पाठशालामें ८० कन्याएँ हैं। स्वयं धनवती बहिनें पढ़ाती हैं, उत्तर अच्छा रहा।

महावीर ब्रह्मचर्याश्रम कारंजामें डेढ़ लाखका ध्रौव्यकोष है।

५७ रजिष्टर हैं। ७ कक्षाओंमेंसे ४ नगरमें हैं। मैट्रिक तक अंग्रेजीमें, और धर्ममें गोम्मटसार, सर्वार्थसिद्धि तक पढ़ाई होती है। ३ बुकडिपो हैं—१ धार्मिक पुस्तकालय, २ पाठ्यपुस्तकें, ३ पुरानी पुस्तकें। आश्रमके छात्रावासमें ४८ मनीटर हैं। व्यवस्था अच्छी है।

अमरावती ता० ५ को ११ बजेकी मोटरसे पहुंचे। कारंजासे लारी दो घण्टेमें अमरावती आती है। अमरावतीमें सिंघई पन्नालालजीके यहाँ ठहरे। आपने बड़ी खातिर की। एक दिनमें दो सभाएँ कीं। मध्याह्न समय स्त्रियोंकी और सायंकालमें पुरुषोंकी। यहाँसे १ बजे रातको चलकर सबेरे ८ बजे नागपुर पहुँचे। परवार भूषण सेठ फतहचंदजीकी धर्मशालामें ठहरे। वहाँ बड़ा विशाल मंदिर पासमें ही है। ३ सभाएँ हुईं। उनमें दो बहुत बड़ी थीं। महिला समाजसे मानपत्र मिला, पुरुष संख्यामें ५०० और स्त्रियाँ इससे अधिक होंगी। पं० शांतिराजजी शास्त्रीने बड़ा परिश्रम किया। यहाँसे सेठ गेंदालालजीकी मोटरसे रामटेकके दर्शन किये, बड़ा आनन्द हुआ। प्रतिमाएँ व क्षेत्र बहुत मनोज्ञ हैं। धर्मशाला साधारण है। सामने एक दालान अधबनी पड़ी है, मंदिरोंकी व्यवस्था अच्छी है। मूलनायकके मंदिरके किवाड़ कलकत्तेवाले सेठने चांदीके बनवाए हैं।

नागपुरसे मोटर द्वारा सिवनी आए। यहाँसे सुन्दरबाई लेने गई थीं। सिवनीमें स्त्रियोंकी सभा हुई, मानपत्र मिला। रात्रिमें शास्त्र बाँचा। यहांसे सेठ विरधीचन्दजीकी मोटर द्वारा जबलपुर आए, ट्रेनिंग कॉलेजका बोर्डिंग देखा, छुट्टी थी। इस प्रान्तमें

कई ट्रेनिंग कॉलेज खुल गये हैं। जबलपुर शहरमें नहीं गए, सीधे स्टेशन आये और प्रातःकाल आरा पहुँच गए।

ता० १५ अक्तूबर सन् १९३५ मिति कार्तिक कृष्णा ११को आरासे सवेरे ८ बजे चलकर मध्याह्नमें दो बजे राजगिरि पहुँचे। बंगलेमें ठहरे। साथमें चि० जशेन्दुप्रसाद, ब्रजबाला, प्रभा, कुन्दनलाल व दाई हैं। कुण्ड देखे और नहाये। बड़े मंदिरजीमें तीन पूजन कीं और यात्रा कर सानंद घर वापिस आ गए।

१० अप्रैल सन् १९३४ को विनोदकुमारका देहान्त बांकीपुर (पटना) में हुआ। टाईफाईड बिहटामें हुआ था, १० दिन होमियोपैथिक डाक्टर सरकार, इलाहाबादका इलाज रहा, १३ दिन एलोपैथिक डा० टी. एन. बनर्जी, बली अहमद, डा० विराट-मित्रा आदिका इलाज रहा। अंतमें प्रधानचन्द्र रायका इलाज रहा। परन्तु किसीकी भी दवा कारगर नहीं हुई।

ता० १८ अप्रेलको हम बोगी ट्रेन द्वारा देहरादून आए, इनवरनील कोठीमें १२ दिन ठहरे, १००) महीना भाड़ा लगा।

ता० १ मईको मंसूरी आए। मैनरहाऊस कोठीमें ठहरे जो कि लायब्रेरीके पास है १७००) रु० किराया चि० निर्मलकुमारने ठीक किया। यहाँसे चमरखण्डका झरना पास है, मंदिर दूर है। चैत्यालय साथमें है। देहरादूनमें प्रातःकाल शास्त्र-सभा की, स्त्रियां बैठती थीं। शीलव्रत आदिकी प्रतिज्ञाएँ दी गईं। पाठशाला देखी ५) रु० इनाम बाँटा। मंसूरीमें अष्टमी चतुर्दशीके दिन लैंठोरमें मध्याह्नके समय शास्त्र-सभा होती है। ता० २९ को ५॥ के गेटसे देहरादून आए। ता० ३० मईको मध्याह्न समय स्त्री-सभा मंदिर

जीमें हुई। गृहस्थके षट्कर्मोंपर उपदेश दिया। ५० के लगभग स्त्रियाँ थीं। २-४ ने स्वाध्याय करनेका नियम लिया। ता० २-७-३४ तक मंसूरीमें रहे। तीन-चार बार शास्त्र-सभा हुई। स्त्रियोंको सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई।

ता० ३ को चलकर देहरादून ४ घण्टे ठहरे, रात्रिमें ६॥ बजेकी ट्रेनसे सवार होकर लखनऊ उतरे। चि० शीलादिसे मिले। मुन्नालाल कागजीकी धर्मशालामें ठहरे, मंदिरजीमें शास्त्र बांचा। ता० ६ को अयोध्या उतरे, दर्शन किये, चित्त प्रसन्न हुआ। धर्मशाला आधी बनी है। श्वेताम्बरी मंदिर बहुत विशाल कीमती बन रहा है। ता० ६-७-३४ को ही रात्रिमें १ बजे आरा पहुँच गए। मार्गमें मंसूरीसे बहुत लोग लौटते मिले थे।

उदयपुर मेवाड़में आपड़ ग्राममें मिति कार्तिक सुदी पूर्णिमाको प्रातःकाल ८ बजे आचार्य श्री १०८ शान्तिसागरजी (दक्षिण) से सातमी प्रतिमाके योग्य जघन्यरीत्या स्वशक्ति प्रमाण व्रत धारण किये। पहलेसे निश्चित विचार न था, परन्तु उदयपुर आकर साक्षात् वैराग्य मूर्तियोंके दर्शन करके इस कार्यमें बिलम्ब करना उचित न समझा, इस वर्ष ग्रह भी कड़े हैं यदि पर्याय छूट गई तो फिर अवसर मिलना कठिन था। अस्तु, उस समय ६ मुनिराज, ४ क्षुल्लक, १ ऐलक, कई ब्रह्मचारी तथा ब्रह्मचारिणी गण उपस्थित थे।

दो सभाएँ आपड़में हुईं, १ दिन शास्त्र सभामें उपदेश किया, उदयपुर आकर ४ मुनिराजोंके आहार हुए। सभा हुई, श्रीपार्श्वनाथ विद्यालय देखा, ५३ छात्र हैं, सर्वार्थसिद्धि, यशस्तिलकचम्पू



कौटुम्बिक ग्रूप-चित्र—दाहिनी ओर छोटी पुत्र वधू, पण्डिताजी, बीचमें पण्डिताजीकी पू० सासजी, श्रीमती अनूपमालादेवीजी और बड़ी पुत्रवधू है। पीछेकी ओर खड़े हुए श्रीमान् बा० निर्मलकुमार-जी, चक्रेश्वरकुमारजी दोनों बन्धु हैं। नीचेकी पंक्तिमें पण्डिताजीके पाँच पौत्र तथा बीचमें श्रीमती पुत्री सुशीलादेवी हैं।

तक पढ़ाई है। यहीं पर स्थानकवासी जैनियोंकी भी संस्थाएँ हैं, उसमें १ विद्यालय ६ कक्षा तक व १ कन्याशाला है। दोनों देखे और १०) रु० इनाम दिये।

ता० २७-११-३४ को पं० खूबचंद्रजी शास्त्रीका व्याख्यान मंडप उदयपुरमें सुना उन्होंने दो बातें स्मरण योग्य कहीं—

(१) जिस संख्याके कुल भंग निकालने हों, उतनी ही जगह दो रखकर परस्पर गुणन करके उस संख्यामेंसे एक निकाल दो, बस भंगोंका प्रमाण हो जायगा। जैसे—१ मिरच, १ नमक, १ खट्टा तीन चीजें हैं उनको २ × २ × २ इस प्रकार गुणा करनेसे ८ हुए, एक कम करनेसे इन तीनों चीजोंके ७ भंग हो सकते हैं। ३ शुद्ध, ३ द्विसंयोगी १ त्रिसंयोगी।

(२) कुल वर्णमाला ६४ अक्षर प्रमाण है उसको दो-दो जगह रखकर गुणन करनेसे व एक घटानेसे एक ही प्रमाण वर्णोंके भंग होते हैं।

ता० २७ दिसम्बरको लारी मोटर द्वारा ऋषभदेव पहुँचे २॥~) फी सवारी एक ओरका भाड़ा है, ३ घंटेके लगभग पहुँचती है, ४० मील उदयपुरसे ऋषभदेव है। मंदिरजी व प्रतिमाजी बहुत प्राचीन व उत्तम हैं, मंदिरमें राज्यका प्रबन्ध है। दो बार अभिषेक होता है, मूलनायक प्रतिमा पर केशरका लेप व फूलकी मालादि दिनमें रहती हैं, रात्रिमें सोने-चाँदी जवाहिरातकी आँगी चढ़ती है, और किसी प्रतिमा पर कुछ नहीं चढ़ता है। दिगम्बरी आम्नायके माफिक रहती हैं। यहाँ १ विद्यालय, १ कन्याशाला है। कन्याशालाकी परीक्षा ली, पुस्तकें इनाममें दीं। यहाँ पर

राधाबाई अध्यापिका इन्दौर आश्रमकी पढ़ी हैं। ३० या ३५ कन्याएँ हैं, कपड़ादि बनानेकी जरूरत है।

३ दिन ऋषभदेवमें रहे यहां पर श्रीपद्मसागर मुनिका केश-लौंच हुआ, कुछ व्याख्यान हमने भी दिये।

ता० २-१२-३४ को लौट कर उदयपुर आये और सायंकाल ६ बजेकी ट्रेनसे लौटे। मार्गमें १ दिन अजमेर उतरे, स्टेशनके पास ही सेठ भागचन्द्रजीकी धर्मशालामें दो दिन ठहरे, जयपुरमें सेठ वनजी ठोलियाकी धर्मशालामें उतरे, बहुत आराम रहा।

इन्द्रलालजी शास्त्रीकी मार्फत प्रतिबिम्ब व वेदीका आर्डर दिया गया। १ दिन मथुरा उतरे व ता: ८-१२-३४ को प्रातःकाल ५॥ बजे आरा पहुंच गये।

यहां डेढ़ महीने रहकर ता: २३-१-३५ को श्रीशिखरजीको ७॥ बजे रातकी ट्रेनसे रवाना हुए। मधुपुर बदलकर गिरीडीसे ४) रु०में टैक्सी करके प्रातःकाल ८ बजे मधुबन पहुंच गये, ऊपरली कोठीमें ठहरे, पूजन की; यात्री ५०-६० होंगे बड़ी शान्ति है।

शास्त्रमें ब्र० प्रभुदयालजीने कहा—कलिकालके प्रारम्भमें मनुष्यायु १२० वर्षकी थी, १०० वर्षमें ६ महीना घटती है इस हिसाबसे अब १०८ वर्षकी उत्कृष्ट आयु होनी चाहिये। यह जीव दो हजार और छियानबे कोटि पूर्व तक निगोद से निकलकर मुक्त न हो तो पुनः निगोदको प्राप्त होगा। १००० सागर विकेलन्द्रियमें, ५०० सागर नरकमें, ५०० सागर स्वर्गमें, ४८ कोटि पूर्व तिर्यञ्चमें, ४८ कोटि पूर्व मनुष्य, स्त्री व नपुंसकमें व्यतीत करेगा। संसारमें घूमनेका यह क्रम है।

ता० ३०-१-३५ को २०० के लगभग दक्षिण कर्नाटक देशके यात्री आये साथमें १ मुनि तथा भट्टारक चारुकीर्तिजी श्रवणबेलगोल भी थे।

नित्य सायंकाल भट्टारकजी अध्यात्म विषय पर न्यायशैलीसे अच्छा विवेचन करते थे।

ता० ३१-१-३५ को हम श्री पर्वतराज सम्मेदशिखरजीकी वन्दनाको पैदल २॥ बजे गये। ३ घंटेमें कुन्थुनाथ स्वामीके टोक पर पहुँचे १ घण्टे वहीं सामायिक की, फिर सब टोकोंकी वन्दना करते करते ११ बजे श्रीपार्श्वनाथ टोक पर पहुँचे वहां पूजा करके १ घण्टा सामायिक की तथा १२॥ बजे चलकर ३ बजे धर्मशालाके मंदिरजीमें आ गये।

ता० ५-२-३५ को स्त्री-सभा हुई हमारे हिन्दी भाषणका अनुवाद धर्मराज नामके लड़केने कर्नाटक भाषामें करके दक्षिणी महिलाओंको सुनाया, रात्रिमें सामायिकके पश्चात् हमने शास्त्र बांचा। एक योग्य दक्षिणी पण्डितने अनुवाद करके सुनाया। फलटन, शोलापुर और भावनगरके यात्री ठहरे हैं। २ दिन रथोत्सव भी हुआ था, १ दिन छतरीके चौतरे परसे पर्वतके टोकोंकी पूजा की, चि० चक्रेश्वरकुमार, जिठानीजी, बड़की बीबीजी भी आ गये। सबने वन्दना की। ६ दिन ठहरे, हम २२ दिन ठहरीं। ता० १४-२-३५ को शिखरजीसे चलकर ३ बजे रात्रिमें आरा पहुँच गये। २० दिन आरा ठहरकर ता० ६-३-३५ को पावापुर आये। यहां पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव है। पं० झम्मनलालजी, पं० नन्हेलालजी राजवैद्य प्रतिष्ठाकारक हैं। पं० माणिकचन्द्रजी सहारनपुर

तथा पं० मक्खनलालजी प्रचारक दिल्लीके अच्छे अच्छे व्याख्यान हुए। ३ क्षुल्लिकाबाई आई हैं, ८ ब्रह्मचारी, २ क्षुल्लक हैं, १ मुनि हैं दो हजारके लगभग जनता जुटी है, अनाथालय दिल्लीकी भजन मण्डली आई है। व्याख्यानमें कहा (१) तरण, (२) तारण, (३) तरणतारण होते हैं। सौधर्मेन्द्रका खजाना असंख्यात योजन लम्बा-चौड़ा ३ कोष गहरा होता है, पंचकल्याणको उसीमेंसे रत्नादि आते हैं।

ता० १०-३-३५ को पंडालमें १ बड़ी स्त्री-सभा हुई। ४ सौ के लगभग स्त्रियां होंगी, पुरुष भी थे। हमने व ब्रजवाला बीबीने व्याख्यान दिये, स्वाध्याय व शीलव्रतकी प्रतिज्ञाएं ली, प्रतिष्ठित लोग एकत्रित हुए हैं उत्सव अच्छा रहा।

१ वर्मीसे बौद्ध साधु देखने आया, उससे संस्कृतमें कुछ बातें हुईं, प्राकृत पाली जानता है, श्वेताम्बर लोग भी मेलेमें आये थे, पं० झम्मनलालजी, नन्हेंलालजीने प्रतिष्ठा कराई, पन्द्रह हजार रुपया खर्च हुआ होगा।

ता० ११-३-३५ को रथ यात्रा हुई सारथीका स्थान जगमग बीबीने लिया। इसी दिन मोटरसे ८ बजे रातको चलकर ६॥ बजे हमलोग राजगिरि पहुँचे। सप्तमी थी, ता० १२-३-३५ को पंच पहाड़ीकी वन्दना डोलीसेकी। ३ बजे धर्मशाला आये। सबेरे ६ बजे सामायिक करके गये थे, मध्यान्हकी सामायिक चौथे पहाड़पर की। बड़ी शान्ति रही। ता० १३ को आराके लिये रवाना हुए, चमेली-देवी व उनकी माँ यहाँ राजगिर ठहरी थी।

ता० १३-३-३५ को १२॥ बजे कोठी आ गये। यहां ३

क्षुल्लिका ३ ब्रह्मचारिणी ठहरी हैं—शांतिमती, अनंतमती, कुन्थुमती, ब्र० वतो, ब्र० सरवत। दूसरे दिनसे द्वारा प्रेक्षण किया।

आज ता० १७-३-३५ को हमें जरासा भोजन लेकर ही अन्तराय हो गया, ता० २८ मार्च सन् १९३५ को सबेरे ८ बजे तुले, वजन १ मन साढ़े सोलह सेर था।

ता० ३०-३-३५ को १७ दिन आरा रहकर शोलापुर रवाना हुए। ता० ३०-३-३५ को ५॥ बजे इलाहाबाद पहुँचे, रात भर रहकर ता० ३१-३-३५ को सबेरे आठ बजकर पैंतीस मिनट पर ट्रेन पर सवार हुए। छिउकीसे मेल ट्रेन पर बैठे।

इलाहाबादमें महाराज चारुकीर्तिका उपदेश बोर्डिंग व धर्मशालामें हुआ। ता० १-४-३४ को बम्बई ६॥ बजे पहुँचे २ दिन आश्रममें ठहरे। ता० ३-४-३५ को सबेरे ७ बजे शोलापुर पहुँचे। स्टेशन पर स्वागत हुआ। सेठ रावजी सखाराम व उनके घरकी स्त्रियां तथा ब्र० राजूबाई और आश्रमकी छात्राएँ सब लगभग ५० मनुष्य स्टेशन पर आये, स्वागतमें गायन बाजा आदि थे। जीवराज गौत्तमचन्द्रजीके यहां प्रतिष्ठा मण्डप बहुत अच्छा बना था, लगभग ४ हजार मनुष्योंके बैठनेकी जगह थी। महावीर स्वामीका पंचकल्याणक महोत्सव बड़े विधि-विधान पूर्वक लोकनाथ शास्त्री मूड़बिद्रीने कराया, लगभग पांच हजार जनता इकट्ठी हुई थी, सबको रावजी सखाराम दोशीकी ओरसे भोजन दिया जाता था, ४ रसोईया थे, हजारों मनुष्योंकी पंगत बैठती थी। सेठ गुलाबचन्द्र, रतनचन्द्र, लालचन्द्र तीनों पुत्र सेठ हीराचन्द्रजीके परिश्रमसे प्रबंध करते थे, बड़े पुत्र बालचन्द्रजी बम्बई वाले १

दिनको आये थे। ६ क्षुल्लक १ ऐलक ४ क्षुल्लिकाएँ, आठ-दश ब्रह्मचारिणी आईं थीं।

लगभग चालीस हजार रुपया खर्च हुआ होगा। आलंद वाले सेठने मानस्थंभ बनवाया है, उसकी प्रतिष्ठा भी साथ २ हुई। मानस्थंभ ३१ फुट लम्बा है। १० या १२ फुट नीची कंक्रेट सीमेन्टसे नीव भरी है। जयपुरके कारीगर राजकुमारने बनाया है कुल चार हजार रुपया लगा है। ४ कारीगर आते हैं वे ही जोड़ते हैं। आठ सौ रुपया रेल किराया, अठारह सौ रु० शिलवट कारीगरको दिया है। २५ रु० इनाम दिये हैं, स्थंभ अच्छा बना है, ५ फुट तक तीन कटनी हैं। बीचमें खंभ व ऊपर सुन्दर छत्रीमें चार प्रतिमाएं विराजमान हैं।

इस उत्सवमें महासभा और शास्त्री परिषद्का अधिवेशन श्रीचारुकीर्ति भट्टारकजीकी अध्यक्षतामें हुआ और महिला-परिषद्का २० वाँ अधिवेशन हमारे सभापतित्वमें हुआ। १३ प्रस्ताव पास हुए, स्त्रियोंकी संख्या सभामें दो हजारसे अधिक ही होगी। श्राविका-श्रमकी व आलंदकी लड़कियोंने बड़ा अच्छा गायन गाया व त्रिशला माताका ड्रामा किया।

पांच सौ के लभभग परिषद्को चंदा मिला, १०१) हमने भी दिये, परिषद्में ब्र० राजूबाईजी शोलापुरको व सेठ चम्पालालजीकी धर्मपत्नी व्यावरको महिला भूषणका पद प्रदान किया। और ब्र० कंकूबाईजीको व ब्र० राजूबाईजीको तथा सेठ रावजी सखाराम दोशीको चाँदीकी डिबियामें रखकर मानपत्र दिये गये। स्त्री-समाज सोलापुरकी ओरसे हमको भी मानपत्र मिला। इस परिषद्में दो

प्रस्ताव अमलके लायक हुए। (१) महिला उदासीन-आश्रम बनाने का व (२) मराठी मासिक पत्र निकालनेका। उत्सव सब प्रकारसे अच्छा रहा। १ सभा जिनमंदिरमें भी हुई उसमें हमको १० मिनट बोलना पड़ा।

लोग प्रसन्न थे। सोलापुरमें ५ बड़े २ विशाल मंदिर हैं। चैत्यालय तो प्रत्येक जैन घरमें है। लोगोंकी स्थिति अच्छी है, व्यापारिक नगर है ५ बड़ी २ कपड़ेकी मिलें हैं। और भी कितनी ही मिलें हैं।

सेठ हीराचंद नेमचंदका घराना करोड़पति है। अभी सब भाई व चचेरे भाई भी साथ ही हैं। यहाँ ७ दिन ठहर कर ता० १०-४-३५ को श्रवणबेलगोलको रवाना हुए। आरसीखेरी के टिकट लिये। २५) रु० का सैकिन्ड क्लासका टिकिट व ६॥) रु० का थर्ड क्लासका टिकट मिला। शोलापुरमें दो स्टेशन हैं। असबाब बड़े स्टेशन पर गल्तीसे चला गया फिर वापिस मंगाया। साढ़े दश बजे रातको चलकर सबेरे पौने ग्यारह बजे हुब्बली उतरे। हुब्बलीमें ५ मंदिरोंके दर्शन किये। स्टेशन पर जैन बन्धु आये थे।

दूसरे दिन ता० १२-४-३५ को चलकर ता० १३ को रातमें २॥ बजे आरसीखेरी पहुँच कर उसी समय ट्रेन बदलकर ५॥ बजे हासन आये। यहाँसे ७ बजे लारी पर चले, २७ मील चलकर लारी बदल गई। चन्द्रपट्टन पर कुछ ठहरे एक जैनके यहाँ स्नान कर उन्हींकी मोटर कारसे श्रवणबेलगोल ११ बजे पहुँचे।

ता० १४-४-३५ को यहां भांडार बस्ती मंदिरमें पंच कल्याणक

प्रतिष्ठा बड़े विधि विधान पूर्वक हुई, बाहर गांवोंकी जनता भी आई हुई है। ३ कल्याणकोंमें महाराज चारुकीर्तिजीका उपदेश हुआ, नित्य सवारी (पालकी) निकलती है उपाध्याय लोग बड़ा परिश्रम करते हैं। जन्म कल्याणकके दिन बाललीलोत्सव मनाया गया, प्रतिष्ठा पूर्ण होने पर रथ निकाला गया, बीचमें जैन पाठशालाके छात्रोंने व्याख्यान और आसन दिखाये। ता० २१ को पुष्करणीमें बड़ा उत्सव हुआ, भगवानको जल विहार कराया गया।

ता० २२ को बैलोंकी प्रदर्शिनी हुई। और भट्टारकजीके पास बाजे बजाते हुए अच्छे २ बैल लाए गए, उनके हाथसे इनाम लेकर वापिस गये। ता० २० को ही सरस्वती पूजन व उनकी सवारी बड़ी धूमसे निकाली गई थी।

यहाँके दोनों पहाड़ बड़े मनोज्ञ हैं। श्री बाहुबलिस्वामीकी प्रतिमा ५६ फुट ऊँची अति सुन्दर है। सम्बत् ७३५ पड़ा है।

तेरह सौ बर्ष होने आये हैं, चामुण्डरायने अपनी माताके दर्शनार्थ यह बिम्ब स्थापित किया था व प्रतिष्ठा करायी थी, पहले यह पाषाणमें उकेरा गया था।

१२ मन्दिर ऊपर हैं, छोटे पहाड़ पर १४ स्थान पर दर्शन हैं। शान्तिनाथ व पार्श्वनाथके बिम्ब अत्यन्त मनोज्ञ प्राचीन हैं। १ दिन अभिषेक हेमराजने किया, हमलोगोंने पूजन की। श्रवणबेलगोलमें एक जैन-वेद-पाठशाला है, ५० छात्र निवास करते हैं। संस्कृत, धर्म पढ़ाया जाता है। विद्या छात्रोंकी अच्छी है। भट्टारक विद्या प्रेमी हैं, श्रौव्यफण्ड कम है। यहाँकी धर्मशाला छोटी है, बड़ी बननी चाहिये। हमने छात्रोंको मिठाई बांटी।

६ मन्दिर नीचे गांवमें हैं। मठमें २ हैं। नित्य शास्त्रसभा होती है। उत्सव श्रीजीके बहुत मनाये जाते हैं, १५ दिनसे नित्य उत्सव होते हैं।

ता० २७-४-३५ को १०॥ बजे बस द्वारा चलकर ३ बजे शामको मैसूर पहुँचे। १।) फी टिकिट है। श्री बर्धमानय्याजीके जैन बोर्डिंगमें ठहरे, श्री जिनमन्दिर बहुत सुन्दर है। बोर्डिंगका कम्पाऊंड व इमारत भी अच्छी है। २५ छात्र रहते हैं, पर इस समय छुट्टी है।

१ प्रेस भी यहां पर है। पार्श्वनाथ पुरोहितका लड़का बज्र-नाभि व प्रेसका मैनेजर शान्तिराजय्या दोनोंने परिश्रमसे सब व्यवस्थाकी, मैसूर नगर बड़ा साफ और सुन्दर है। सवा लाखके अनुमान मनुष्य रहते हैं। नगरमें बिजलीकी लाइट बहुत है, रात्रिमें दिवाली सी रहती है। यहाँसे १२ मील पर कृष्णनगर है ८) रु०में एक टैक्सी द्वारा ७ बजे तक सामायिक करके गये।

कृष्णसागरमें पानीके फुहारे व फौल (चद्दर) रंगीन रोशनी द्वारा बड़ी विचित्रता दिखाता है। ६ करोड़ रु० लगाकर बना है। अमेरिकाके बाद दूसरा यही है। निजाम हैदराबाद भी ऐसा बना रहे हैं।

प्रति रविवारको सब फुहारे खोले जाते हैं, देखने योग्य हैं। मैसूरमें एक छोटा सा पहाड़ है, इस पर चामुण्डेश्वरीका बड़ा विशाल मन्दिर है। मार्गमें बहुत बिजली बत्ती लगी हैं। चौथे दिन महाराज आते हैं। पहले यह राजघराना जैन था, अब भी बहुतसे कुटुम्बी जैन हैं। परन्तु शंकराचार्यके फेरमें पड़कर अब

इनके यहां शैव मत माना जाता है। पहले महलमें जिन चैत्यालय था, उसको ब्राह्मणोंकी सम्मतिसे हटाकर बाहर बना दिया गया है, वहां हमने दर्शन किये, सुना है कि जिन मन्दिरको बिल्कुल उठा देनेका प्रस्ताव हो चुका था कि यकायक महलमें भयंकर अग्नि लग गई तब बाहर बना दिया गया है। राजाकी १ बहिन व भानजी जैन हैं। मन्दिरके सामने ही पैलेस महल है, एक ओर स्टोर है। इस नगरमें स्वच्छता व लाईट बहुत है, वायु ठंढी रहती है। वर्धमानय्याजीकी मृत्युसे जैनोंकी बड़ी क्षति हुई है। रात्रिभर ठहर कर प्रातः ७ बजे बस पर सवार होकर सायंकाल ६ बजे मैंगलोर आये। फुत्तौरमें पानी पिया। यहां भी एक जैन मन्दिर है। बस १५-२० मिनट ठहरती है।

मैंगलोरमें श्री नेमिराजजी पड़िवालने अपनी मोटर बस स्टेन्ड पर भेज दी थी, उससे नागराज वकीलके यहां ठहरे और यहीं पर मूड़बिद्री निवासी पं० के० भुजबलीजी शास्त्री, अध्यक्ष जैन सिद्धान्त-भवन आरासे भी भेंट हुई।

नेमिराज पड़िवालका बंगला बहुत अच्छी जगहमें है अपने ही कम्पाउण्डमें एक चैत्यालय और बोर्डिंग हाउस बना रक्खा है। आपके ९ सन्तानें हैं, धर्म प्रेम बड़ा है, नित्य पूजन करते हैं। आप साथ लेकर नगरके दूसरे जैन-मन्दिरके दर्शन कराने गये इसका जीर्णोद्धार दो वर्ष पहले हुआ है। यहींके एक सेठ रघुचन्द (वल्लाल)ने ४०००) लगाकर कराया है, प्रतिष्ठामें बड़ी प्रभावना-की थी।

पासमें धर्मशाला भी है, कुँआ है। मैंगलोर नगर अच्छा है

लगभग ७५००० हजार मनुष्योंकी बस्ती है, स्वच्छता है। कॉलेज पुरुष और स्त्रियोंके भी हैं। रोमन कैथोलिक क्रिश्चियनोंके लगभग १५-२० गिरजे हैं। इन लोगोंका यहाँ बड़ा जोर है, ये लोग काफीका व्यापार करते हैं। यहाँ मैसूरसे ज्यादा गर्मी है। बीस घर जैनियोंके होंगे। समुद्र पास होने पर भी पर्वत श्रेणीसे उधर पड़ गया है। कोई हारवर नहीं है।

गर्मी काफी है, मैंगलोरमें एक दिन ठहरे, जैनेतर महिला-समाजमें 'स्त्रियोंकी शिक्षा प्राचीन पद्धतिसे होनी चाहिये' इस विषय पर व्याख्यान हुआ। मन्त्रिणी आनन्दीबाईने कन्नड़में उल्था किया, सब स्त्रियाँ बी.ए. तक पढ़ी मालूम होती थीं। इनका एक क्लब है। सौ मेम्बर हैं। महिला-समाजका एक आश्रम और एक अस्पताल है, दोनों देखे। सायंकालकी सामायिकके बाद मूड़बिद्रीके भट्टारकजीने मोटर भेजी। उसीमें ता० १ मईको रात्रिमें ११ बजे मूड़बिद्री पहुँचे। मंगलोरसे मूड़बिद्री २२ मील है। ।=) किराया लारीका है, टैक्सी ।=) मीलका चार्ज करती है।

हमलोग टैक्सीसे मूड़बिद्री आये। यहाँ १८ प्राचीन जैन-मंदिर लगभग एक हजार संम्वत् के मिलते हैं। सिद्धांत बस्तीमें पार्श्वनाथकी प्रतिमा मनोज्ञ एक हजार वर्षकी है। इसी मंदिरमें रत्नोंकी प्रतिमाएँ हैं। जिनके दर्शन भट्टारक व पंच कराते हैं। २५) रुपया जमा कर दर्शन किये। एक ऐलक, दो क्षुल्लक थे उन्हें भी दर्शन हो गये। सब प्रतिमाओंमें दो पन्नेकी प्रतिमाएँ अत्युत्तम रत्न की हैं। अपरिमित मूल्यवान हैं। सुवर्णकी दो नई

प्रतिमाएँ भी रखी गई हैं। कई माणिक्यकी व नीलमकी बहुमूल्यवान होंगी। दर्शन कर आनन्द हुआ। तीन ऐलक क्षुल्लक महाराजोंका आहार हुआ।

ता० ३-५-३५ को मूड़बिद्रीके चन्द्रप्रभुके मन्दिरमें व्याख हुआ। कनड़ीमें पंडित के० भुजबलीजी शास्त्रीने उलथा कर सुन भाषणसे सब प्रभावित हुए। इसी समय धर्मस्थलसे श्रीमड़ हेग्गड़ेजीके भाई पुट्टू स्वामी व हेग्गड़ेजीकी धर्मपत्नी श्रीमती हमको बुलाने आईं। अतएव ४-५-३५ को इन्हीं लोगोंके मोटरसे धर्मस्थल आये, मार्गमें वैणूरके दर्शन हुए, प्रतिमा विशाल बाहुबलिस्वामीकी ३६ फुट की है। परन्तु काई गई है, कुछ जाले भी लगे हैं, जिनकी स्वच्छताके लिये पुज कहा गया। यहाँ एक धर्मशाला व दो मन्दिर हैं।

धर्मस्थल मूड़बिद्रीसे २८ मील है। यहाँ पर एक मन्दि व हेग्गड़ेजीके घरमें दो मनोज्ञ चैत्यालय हैं, ये बड़े भक्त विद्याप्रेमी व परोपकारी वृत्तिवाले मनुष्य हैं। यहाँके राजाके र हैं। सुन्दर बाग, मकान, स्कूल, म्युनिसिपलिटी सब इन्हींके हाथी आदि भी हैं, एक शिव मन्दिर बड़ा प्रसिद्ध है, जिसमे दूर के यात्री नित्य आते रहते हैं। मानता मनाते हैं, उसका प्रबन्ध हेग्गड़ेजीको करना पड़ता है नित्य दस बजे वहाँ जान होता है। धर्मस्थलकी कुल उत्पत्ति इस मन्दिरकी समझी है। हेग्गड़ेजीको भी ये वैष्णव ईश्वर समान ही मानते हैं, सब होने पर भी हेग्गड़ेजीको जैनधर्ममें अति श्रद्धा है।

पं० के. भुजबलीजी शास्त्रीने कनड़में अनुवाद करके जनताको समझाया। प्रातःकाल लौटते समय पुनः वैणूरके दर्शनकर मूड़बिद्री आये, यहाँका बड़ा मंदिर चन्द्रप्रभुका अत्यन्त दर्शनीय है, ऐतिहासिक दृष्टिसे बड़े महत्त्वका है, इसमें एक हजार स्तम्भ हैं और सब पर पृथक्-पृथक् नक्काशीका काम बना है। इसके हजार चित्र एक जैनी भाईने कापी पर उतारे हैं, बहुत सुन्दर लगते हैं, छपने चाहिये। मन्दिरके बाहिरी भागमें परिंदोंके चित्र बने हैं उनमें ऐसे हैं जो कि भारतमें नहीं होते थे इससे ज्ञात होता है कि प्राचीन जैनलोग बाहर विदेशोंसे संबंध रखते थे। मूड़बिद्रीसे कारकल वरांग भी गये, कारकलमें २३ मन्दिर हैं, पहाड़ पर ४२ फुटकी बाहुबलिस्वामीकी मूर्ति अति सुन्दर है, काई लगी है, छत्री बननी चाहिये।

ता: ७-५-३५ को टैक्सीसे मूड़बिद्रीसे चलकर पुत्तौर उतरे रातभर वहीं रहे, एक मन्दिर है, दस-बारह जैन घर हैं। भक्ति भाव कम है, वकील पद्मराज उत्साही मनुष्य हैं, परोपकारी वृत्तिवाले हैं। एक महिलाश्रम खोलना चाहते हैं आध घण्टे बातें हुईं। करीब तीन हजारकी जायदादका ट्रष्ट स्वर्गीय सेठ पुण्ड हेग्गड़ेसे इन लोगोंने कराया है।

१ जैन बोर्डिंग हाऊस भी पुत्तौरमें है, धार्मिक शिक्षण नियमसे नहीं होता इसकी प्रेरणाकी गई। पुत्तौरसे आठ बजे बससे चलकर ५॥ बजे शामको मैसूर पहुँचे। मार्गमें मर्करामें बस बदलती है। १ घंटा ठहरती भी है। वहां मध्याह्न सामायिक बस पर ही की।

मैसूरमें श्री वर्द्धमानय्याजीकी धर्मपत्नी व लड़की मिलने आई। बोर्डिंगमें ठहरे। सायंकालमें १ सभा हुई आत्मोन्नति पर हमारा व्याख्यान हुआ। ५०-६० के लगभग जैनी थे, यहाँ बोर्डिंगमें विश्व-बन्धु प्रेसका मैनेजर (मालिक भी है) शांतिराजजी उत्साही हैं। स्टेशन पहुँचाने कई आदमी आये। यहाँ श्रीपालय्याजी दृढ़ श्रद्धानी व परोपकारी व्यक्ति हैं उनसे श्रवण-बेलगोल सम्बन्धी आवश्यक बातें हुई। ता० ६-५-३५ को मैसूरसे चलकर १०-५-३५ को सबेरे ६ बजे बैंगलोर आये, वैद्यराज एलप्पाजी स्टेशन पर मिले, नये बंगलेमें आकर ठहरे, बंगला छोटा है दूसरा देखना होगा। दो दिन टैक्सी पर घूमकर एक बंगला अच्छा मिला बेंगलोरमें एक दिगम्बर एक श्वेताम्बर जैन मंदिर हैं साढ़े तीन लाख मनुष्योंकी आबादी है। यहाँसे ता० २६-५-३५ को रात्रिमें ६ बजे मेल ट्रेनसे मद्रास गये, वहाँ प्रातःकाल पहुँचे। दि० जैन धर्मशालामें ठहरे।

यहाँ ऊपर मंदिर अच्छा बन गया है कुल बाईस हजार रुपये लगे हैं। दश हजार बैजनाथजी श्रावगी कलकत्ताने लगाये हैं व बारह हजारका चंदा बाहर वालोंका है श्री आदिनयनार धर्मात्मा हैं इन्होंने यह कार्य करवाया है। मल्लिनाथ भी उत्साही हैं। २० घर जैनियोंके हैं। एक सभा हुई गृहस्थके षट्कर्मों पर व्याख्यान हुआ, तीन दिन ठहरे, २ सभा स्थानकमें हुई, यहां श्वेताम्बर जैनोंके पाँच सौ घर हैं। तीन हजार मनुष्य हैं। व्यापार अच्छा चलता है। दिगम्बरोंमें कम स्थितिकी जनता है। बैजनाथजी जोखीराम मूंगराज कलकत्तावाले टाटा आयरन कम्पनीके कमीशन मर्चैन्ट हैं।

मद्राससे ।1) मील पर टैक्सी करके पौन्नूर हिल (कुन्दकुन्द स्वामीकी समाधि) और अकलंक बस्ती व कांजीवरम गये।

८८ मील जाना व ६० मील आना हुआ। ४८) रु० मोटरके दिये। ये तीनों स्थान अति प्राचीन हैं कांजीवरमका मंदिर सात सौ बरसका है। प्रतिमा मनोज्ञ हैं व मंदिरकी छतोंमें ऋषभदेवका चरित्र चित्रित हो रहा है। एक वृक्ष प्राचीन है व उसीके थांवलेमें गुणभद्राचार्य्यकी मूर्ति उत्कीर्ण है, दर्शन कर हृदय रोमांचित हो गया। मरम्मत कराने योग्य सब स्थान हो गये हैं। कांजीवरम नगरके जैन मंदिर ब्राह्मणोंने लेकर शिवलिंग बैठा दिये हैं ये जैन मंदिर एक मील पर त्रिविक्रमपुरममें थे।

अकलंक बस्तीमें २ मंदिर, एक चरण चिन्ह हैं हजारों वर्ष पुराने मंदिर हैं, जीर्णोद्धारकी यहाँ बड़ी जरूरत है। ८० घर जैन हैं। पर सब साधारण किसान लोग हैं। धनिकोंको इस प्रान्तमें रुपये लगाने चाहिये। इसी दिन ७ बजे शामको मद्रास लौट आये, दिगम्बर जैन मंदिरजीमें सभा हुई गृहस्थके षट्कर्मों पर व जो २ त्रुटि यहाँ देखी उन पर कहा गया। सभा समाप्त होते ही स्टेशन आये और ट्रेन पर सवार होकर प्रातःकाल ता० ३०-५-३५ को बेंगलोर पहुँच गये। यहाँ चार दिन रहकर ता० ३-६-३५ को मोटरकारसे पुनः श्रवणबेलगोल आ गये। ३॥ घंटेमें कार आई मार्गमें वेल्लूरमें एक जैन मंदिरके दर्शन किये, इस ग्राममें भी १०० घर जैनोंके हैं। एक ब्रह्मचारीजी शास्त्र बांच रहे थे। श्रवणबेलगोल पहुँच कर पहाड़ पर गये बाहुबलिस्वामीकी वन्दना की। फिर दूसरे दिन दोनों पहाड़ोंके मंदिरोंकी बन्दना वा पूजन की,

तीसरे दिन चि० छोटे व सब बाल बच्चों सहित पहाड़ पर गये। गोम्मटेश्वरकी प्रतिमा ऐसी दिखती है, मानों आकाशमें खिली है।

ता० ६-६-३५ को चि. प्रबोध, सुबोध, सन्तोष, सरोजकुमारका यज्ञोपवीत हुआ, महाराज नेमिसागरजी ने उपदेश देकर अहिंसा व्रतका नियम बच्चोंसे कराया। १२ बजे सब विधानपूर्ण हुआ, मध्याह्न सामायिकके बाद भोजन हुआ, आज ही सबेरे चि० प्रेम व सौमके कान छेदे गये, उत्सव अच्छा रहा। बाबू छोटेलालजी कलकत्ता मय धर्मपत्नीके आये हैं। छोटेलालजी एक दिन रह कर सोनेकी खान देखने गये।

रात्रिको मठमें जनता इकट्ठी हुई महाराजने हमसे कुछ उपदेश कराया। फिर ९ बजेसे शिवमूर्ति शास्त्रीका (शैव) सुभद्रा हरण पर कीर्तन हुआ। स्वर ताल सब मधुर थे बहुत जल्दी २ व स्पष्ट कविता कहते थे। अन्तमें जैनधर्मकी प्रशंसाकी और कहा कि शंकराचार्यजीने भी कहा है कि जो धर्म अहिंसामय है वह हमारे सिर पर रहे इत्यादि २। तीन दिन तक यज्ञोपवीतकी विधि हुई सब गांववालोंका एक दिन भोजन हुआ, उपाध्यायोंको एक एक धोती व दक्षिणा दी गई विद्यार्थियोंको धोती दी गई। महाराजको २ गिन्नी दी गई।

पांच हजार रुपया धर्मशाला बनानेके लिये श्रवणबेलगोलमें चि० निर्मलकुमारने मंजूर किया और भंडार आदि देकर सब मैसूर गये। वहाँ तीन दिन ठहरे, ता० १२-६-३५ को महाराज मैसूरका जन्म दिन था, बड़े उत्सवसे मनाया गया। महलोंमें व बाजारोंमें बहुत रोशनी हुई। ६ लाइन बिजलीके बल्वोंकी चन्दन-

वारोंके समान टाँगी गई थीं, महलमें चार २ अंगुल पर बल्व लगे थे।

· ऐसी रोशनी बम्बई कलकत्ता कहीं देखनेमें नहीं आई। ता० १३-६-३५ को मैसूरसे ३ मोटर १ लौरी पर चलकर मैंगलोर आये, मैसूरसे १० बजे चले, बीचमें मध्याह्न सामायिककी और ६ बजे रातको पहुँचे, बर्षा बहुत हुई। रात भर ठहरकर सबेरे पूजन, भोजन, मध्याह्न सामायिक करके १ बजे चलकर घण्टे भरमें मूड़-बिद्री पहुँचे।

वहाँ ता० १४-६-३५ से ५ दिन ठहरे सब मन्दिर १८ हैं, दर्शन किये।

दो प्रतिमाएँ नीलमकी खण्डित हुईं मठमें भट्टारकजीके पास रक्खी हैं उन्हें भी देखा, भट्टारकजीका आहार व पाद पूजा हुई सब पंच इकट्ठे हुए यहाँ भी धोती दक्षिणा उपाध्यायोंको बाँटी गई। २५) के चावल गरीबोंको बाँटे गये, व एकावन २ रुपया तीन जगह चि० बब्बूने भंडार दिया। ता० १६-६-३५ को मूड़बिद्रीमें भट्टारक महाराजने हमारे हाथसे कन्या पाठशालाका उद्घाटन कराया धर्मवती अध्यापिकाको पढ़ानेके लिये रख दिया।

ता० १७-६-३५ को १० बजे चलकर मार्गमें वैणूरके बाहु-बलिस्वामीके व आठ मन्दिरोंके दर्शन किये। यहीं मध्याह्न सामायिककी, फिर गुरूबन केरीमें ५ मन्दिरोंके दर्शन किये आठ सौ वर्ष पुराने हैं, जीर्णोद्धारकी आवश्यकता है।

फिर हलेविड़ आये, यहां तीन श्री जिन मन्दिर हैं। जिनमें बहुत ही बढ़िया नक्कासीका काम बना है व लगभग १३-१४ फुट

ऊँची अत्यन्त मनोज्ञ पार्श्वनाथ व शान्तिनाथकी प्रतिमाएँ हैं। दर्शन कर व सायंकालकी सामायिक कर अति आनन्द हुआ, मन्दिर प्राचीन हैं। एक घर उपाध्यायका है। व्यवस्था ठीक नहीं है। मन्दिरोंमें दीपक नहीं जलते हैं।

फिर चलकर रात्रिमें १० बजे हासन पहुँचे। डाक बंगलेमें सब ठहरे, धर्मशालामें इतनी जगह नहीं थी; दो मन्दिर हैं दर्शन किये, भोजन व सामायिक करके १२। बजे चलकर ५ बजे बेंगलोर लौट आये। ता० १९-६-३५ इसी दिन ९॥ बजेकी ट्रेनसे बड़की बीबी आरा गईं। ता० १-७-३५ को रात्रि ९॥ चलकर गुन्टकल बदलकर ता० २ को रायचूर पहुँचे। हरदर धरनय्या श्रीपालराज- (निजाम स्टेट) के घर ठहरे। आपके भाईके पुत्र हरदर जयकुमार अच्छे उत्साही युवक हैं।

आपसे बहुत देर तक सामाजिक बातें हुईं। आपका कहना है कि 'जिनेश्वर गीता प्रकाश' मूड़बिद्रीमें ताड़ पत्र पर लिखा लोक-नाथ शास्त्रीजीके पास है, उसका प्रकाशन होना चाहिये। रायचूरमें १ चैत्यालय १ मन्दिर है।

रायचूरसे शामको चलकर मद्रास एक्सप्रेससे ता० ३ को बम्बई पहुँचे। श्राविकाश्रममें ठहरे, संस्था उन्नत, है ५० छात्राएँ हैं, ६ नये कमरे बने हैं। कक्षाएँ देखीं। काम ठीक है। १ ऐलकजी आये थे, आहार दिया। चि० सुबोध, सन्तोषको लेकर टैक्सीसे समुद्र किनारे गये।

दूसरे दिन रात्रिमें सवार होकर सबेरे इटारसी उतरे। बम्बईमें चौपाटीवालोंसे मिले व सर सेठ हुकमचन्दजीकी पुत्री रतनबाई

और उनकी बहू तेजकुमारी मिलने आईं। तेजकुमारी संस्कृत प्रथमा परीक्षा देगी।

इटारसीमें स्टेशनके पास धर्मशालामें ठहरे। मन्दिरके दर्शन कर सामको वहाँसे चलकर ता० ६-७-३५ को मथुरा पहुँचे। चि० जमनाप्रसादकी तबियत बहुत खराब है। हौलका दौरा होता है। कलेजेमें जलन व दर्द है, खाना हजम नहीं होता, भूक नहीं लगती, ३ दिन यहाँ रहे। चौरासी व वृन्दावनके मन्दिरके दर्शन किये। ता० ९ जुलाईको चलकर ता० १०-७-३५ को आरा पहुँच गये।

विश्राममें आये, सब मंगल है। परन्तु ता० २८-६-३५ को कौसल लड़की बिजली गिरनेसे मर गई; इसलिये सब खिन्न हैं।

ता० ३० सितम्बर सन् १९३५ को पेट देखकर लेडी डाक्टरने कहा कि पेटमें ट्यूमर हो गया है, गिरीके गोलेके बराबर बड़ा है। बांकीपुरमें स्टीलवैल मेमने व विमलराय डाक्टरने भी यही कहा, सबकी राय ओपरेशन करानेकी है।

रेडिओसे शायद अच्छा हो जाय, ऐसा बी० के० राय कहते हैं। छपरा वाले वैद्य महादेवप्रसाद कहते हैं कि दवासे अच्छा हो जायगा। ४ तरहका खार बनवा कर खानेको दिया है। ता० ४-१०-३५ से दवा शुरू की है।

ता० १७ अक्तूबर, १९३५ को ८ बजे सबेरे तुले, वजन १ मन साढ़े सोलह सेर था।

ता० २३ अक्तूबर, १९३५ को अन्तराय हो गया। दवा व दो चार ग्रास खाकर वसन्ता बीबी मिलीं। इकन्नीसे लेकर

दुअन्नी भरी तक तौल कर दवा खाती थीं। १० माह दवा खाई। दो माहके बाद लाभ प्रतीत हुआ।

ता० २६-१०-३५ को मोटरसे पावापुर आये, निर्वाण महोत्सव सानन्द समाप्त हुआ व दो दिन रह कर राजगिरी आये, मंदिरजीमें पुनः काम प्रारम्भ हुआ। वेदी आनेमें टूट गई है, मंदिर अच्छा बना है, बड़ी प्रतिमाजी विराजमान करने लायक है।

ता० १ नवम्बरको राजगिरिसे मोटर द्वारा आरा आ गये। मार्गमें सेठ सुदर्शनके दर्शन किये।

ता० ६ नवम्बर, १९३५ को श्रीमती कंकूबाईजीका पत्र मिला आपने लिखा है कि कार्तिक शुक्ला ३ बुधवार ता० ३०-९-३५ को क्षुल्लिकाके व्रत ले लिये हैं। सब क्रिया श्रीमुनि नेमिसागरजीने करायी है। ६० वर्षकी उम्रमें यह शुभ अवसर मिला है। कार्ड बांच कर परमानंद हुआ, मस्तक पर लगाया, ऐसा अवसर मिलना चाहिये यही भावना हुई।

मिति कार्तिक वदी ३० वीर सं० २४६२ वर्ष २९वें का पहिला और दूसरा दिगम्बर जैनका कहानी अंक अच्छा निकला। जैन भूगोल विषयक चर्चा अच्छी दी है, श्वेताम्बर मुनि दर्शनविजयजी द्वारा लिखा हुआ 'विश्वरचना प्रबन्ध' ग्रंथ गुजराती भाषामें मेसर्स ए. एम. एण्ड कम्पनी पालीतानाके प्रकट किया है, मूल्य १॥) रु० है इसीके उदाहरण इस अंकमें निकले हैं। ग्रंथ बहुत अच्छा मालूम होता है, हिन्दी भाषामें उल्था करानेका यत्न करेंगी।

ता० २५-१२-३५ को मेलसे चलकर चि० छोटेके साथ कलकत्ता पहुँचे।

बाबू छोटेलालजीके यहाँ ठहरे। गाऊ साहब व लेडी डाक्टरको दिखाया। ट्यूमर पेटमें बताती हैं। ऑपरेशन करानेके लिये जोर दिया। रेडियमको मना किया।

एक्सेके इलाजमें भी ओवरी जलनेसे मस्तक शक्तिहीन हो जायगा। ऐसा कहा, परन्तु फिर सबकी सम्मति यही रही है।

ता० ३१-१२-३५ को १ सीट दाहिनी ओर पेटमें एक्सेकी ३७ मिनट लिटाकर दी। ३२) रु० फी सीट चार्ज किया।

दूसरे दिन ता० १-१-३६ को दूसरी ओर एक्से लगवाया।

ता० २-१-३६ को तीसरी सीट लगवायी, कुछ जी मचलाता रहा। कलकत्तेमें एक दिन नये मंदिरमें व एकदिन बेलगछियाके मंदिरजीमें शास्त्र बांचा। स्त्रियोंकी संख्या ७० होगी। प्रतिष्ठाका सामान लगभग पाँच सौके लिया।

चि० बब्बू, चि० छोटेके साथ ता० ४-१-३६ को आरा पहुँचे।

ता० २-२-३६ को फिर कलकत्ता गये, तीन दिन तक एक्से लिया। अभीतक ट्यूमरमें कोई लाभ नहीं हुआ है।

ता० ६-२-३६ को चलकर ता० ७ को राजगिरी पहुँचे। ब्रजबाला बीबी चि० रवि, सौमको लेकर सीधी आरा गईं।

राजगिरीमें जाकर १० दिन तक धीमा धीमा बुखार आया, बड़ी कमजोरी रही। पेटमें दर्द हुआ। महीना हुआ, इसके बाद कुछ तबीयत सावधान हुई।

फाल्गुन बदी पंचमीको ध्वजारोहण मुहूर्त्त चि० छोटेने किया प्रतिष्ठा प्रारम्भ हुई। प्रतिपदासे सुदी पञ्चमी तक पाँचो कल्याणक सानन्द समाप्त हुए। १००० मनुष्य एकत्रित हुए थे। रत्नगिरि पहाड़ पर व नीचे न्यादरमलजीके मंदिरमें दोनों स्थानोंमें पंच-कल्याणक हुए। पण्डित नन्हेलाल, भोपाल, पं० के० भुजबलीजी शास्त्री आरा, पं० श्रीनिवासजी कलकत्ता, इन लोगोंने प्रतिष्ठा करायी। चि० छोटेने भी सब विधि स्वयं पढ़-पढ़ कर ही की। प्रभाव जनता पर अच्छा पड़ा। पं० माणिकचन्दजी सहारनपुर व भगत प्यारेलालजी कलकत्ता वालोंने शास्त्र पढ़ा, बालाविश्रामकी छात्रा-गणोंने वार्षिकोत्सव ललिताबाईजीके सभापतित्वमें मनाया। ललिता-बाईजी और मैंने व्याख्यान दिया। छात्राओंने मैनासुन्दरी नाटक खेला जो अत्यंत रुचिकर हुआ। सबको इनाम दिया गया। बाबू नन्दलालजी कलकत्तेवालोंने प्रतिष्ठामें बहुत परिश्रम किया। घर वाले सबोंने प्रेमसे काम निबटाया। चि० बब्बूने सबको बिदा बाँटी। लगभग नौ हजार रुपया प्रतिष्ठामें व इतना ही मंदिरजी बनवानेमें खर्च हुआ होगा। पाँच हजार मंदिरके भंडारमें देनेका वचन दिया। डेढ़ सौ अन्य दानोंमें, तीन नियम किये। १ केला हरा न खायेंगी, २ उपवास करेंगी, ३ एक महीना एकांतमें अल्पारम्भ परिग्रहसे रहकर धर्मध्यान करेंगी। इन नियमोंका पालन वर्ष भरमें कभी भी किया जा सकेगा।

ता० १४-३-३६ को आरासे कलकत्ते जाकर ता० १५-१६-१७ तीन दिन एक्स रे लिया। डाक्टर शौर्टेनका कहना है कि ट्यूमर छोटा हो गया है।

ता० १८-३-३६ को गर्मीके दौरे आने लगे, बीस-पचीस मिनट बाद एक बार जोरकी गर्मी लगती है, मालूम होता है कि आगकी भभक उठ रही है और पसीना आ जाता है, फिर दो तीन मिनटमें शांत हो जाता है। इस बार एक्स्रे से तबीयत बिगड़ गई।

ता० १८ मार्चको कलकत्तेसे चलकर सम्मेदशिखर आये। ५) रु० में सात सीट वाली मोटर द्वारा ऊपर ली कोठीमें पहुँचे। पूजन-भोजन हुआ, दौरे आते रहे। भोजनके बाद ज्यादे आते हैं। खाली पेट कम।

ता० २० मार्चको डोली द्वारा केवल श्रीपार्श्वनाथ स्वामीके टोंककी बंदनाकी, चक्करके भयसे पूरी बंदना न हो सकी; डोली पर भी दौरे तीन चार-बार आये। २ बजे रातको चलकर ५ बजे टोंक पर पहुँचे। सामायिक की, पूजन की, निर्वाण भक्ति पढ़ी। बड़ा आनन्द आया, दो घंटे वहां रहकर लौटे १० बजे धर्मशाला आ गये, मध्याह्न सामायिक की। औषधालयमें वैद्यकी शिकायत सुनी, काम ठीक नहीं करता है। बाहर २ घूमता है रोगियोंको कम देखता है। तेरहपंथी कोठीके औषधालयका प्रबंध ठीक है। ४ दिन शिखरजी रहकर ता० २४ की रातको ३ बजे आरा पहुँच गये।

यहाँ आज ब्रह्मचारीजी आये हैं। विश्राममें सभा हुई। शिवकुमारीने भाषण अच्छा दिया।

ता० २५ से गर्मीका दौरा कम होने लगा, कमजोरी बहुत है।

ता० १८-४-३६ को ऐक्से लिये एक महीना हो गया, अब

गर्मीके दौरे बंद हो गये हैं; कुछ गर्मी ज्यादा अब भी लगती है।

इस बीचमें नवीन अंक महिलादर्शके लिये १२८ पृष्ठ मैटर लेट-लेट कर लिखकर भेजा है।

ता० २६ अप्रैलको हम, बड़की बीबी और डाक्टर अवनी आरासे चलकर २७-४-३६ को कलकत्ते पहुँचे, वेलगछियामें ठहरे। बाबू छोटेलालजी बीमार हैं। बाबू दीनानाथ स्टेशन आये। इस बार ६ बार करके ऐक्स्रे लिया। पटने वाले डाक्टरकी सम्मतिसे फी सीट १५ मिनिट ली गई। सबका चार्ज ३२) रु० हुआ। ता० ३ मईको ऐक्स्रे पूरा हुआ। डाक्टर शौर्टेनका कहना है कि १ महीने बाद लेडी डाक्टरनिसे दिखाकर रिपोर्ट भेजना, यदि जरूरत होगी तो जूनके अन्तमें १ सीट और देंगे।

ठंडी जगह जानेको कहा, आराम लेनेको कहा। बेलगछियामें ४ दिन शास्त्र पढ़ा, स्त्रियां इकट्ठी होती थीं। दर्शन करनेका, अष्टमूल धारणके नियम स्त्रियोंने लिये। नित्य मध्याह्नमें चमेली-बाईसे चर्चा होती रही। माणिकचन्दकी स्त्री महिलादर्शकी संरक्षिका बनी, ३ ग्राहक हुए। ता० ५ मईको कलकत्तेसे चले ता० ६ मईको आरा आकर चतुर्दशीके दिन कोठी पर रहे व मंदिरकी शास्त्र सभामें गये।

ता० ८ मई सन् १९३६ को धर्मशीला लाल वैरिष्टर पटना जायसवालकी लड़की विश्राम देखने आई, देखकर प्रसन्न हुईं।

ता० २३ मईको रात्रिके ९ बजे कोशली लड़की नागपूरका देहान्त हो गया। ११ दिन बुखार आया, दाँत व गालमें दर्द हुआ। और फूलनथीं, डाक्टर रामप्रसाद, एसिस्टैन्ट सर्जन अवनीकी

दवा हुई। दांतवाले डाक्टरने भी देखा परन्तु कुछ भी डरकी बात न बताई। तीन दिन ६-६॥ डिगरी बुखार १ घंटेको हो जाता था, फिर उतर जाता था। १०१ बुखारमें यकायक हार्टफेल हो गया। णमोकार मंत्र सुनाया गया, परन्तु बहुत जल्दी दम निकल गया।

ता० १७ जून १९३६ मिती आषाढ़ कृष्ण त्रयोदशी विक्रम सं० १९९३ को श्रीबाहुबलिस्वामीकी मूर्ति स्टेशन पर आ गई है। एक सौ पैंसठ मन मूर्तिका वजन है। गाड़ी पैकिंग सहित दो सौ एक मन वजन है। आठ बैल और तीस मजदूर लोग खींचकर बालाविश्राममें लाये हैं। तीन दिन में यहाँ तक पहुँची है। १ दिन उतार कर स्टेशन पर रही। एक दिन मठियाके पास रही। एक दिन जंगीलाल मुख्तारके दफ्तरके पास रही। बड़ी कठिनाईसे यहाँ तक आई है। प्रतिमा बहुत मनोज्ञ बनी है। दो कारीगर साथ आये हैं। रामचन्द मूलचन्द नाटा जयपुरकी बनी हैं। आठ सौ रु० किराया लगा है कुल तीन हजार रुपया शिलावटको देनेका करार है। मूर्ति जिस २ मार्गसे आती थी सैकड़ों मनुष्य देखने आते थे, मेला लगा रहता था।

घरोंकी बल्लरेजों पर स्त्रियाँ बैठी थीं कई स्थानों पर पुष्प वृष्टिकी गई थी। बड़ी बीबीजीके यहाँ व बालाविश्राममें सामने आते ही अर्घ्य चढ़ाया गया था। पुष्प वृष्टि हुई थी, बाला-विश्राम-में आकर भी ४ दिनमें मूर्ति टोंक पर विराजमान हो सकी। ता० २२-६-३६ मिती आषाढ़ सुदी तीजके दिन छात्राओंने हमारा जन्म दिन मनाया। इसी दिन मूर्ति भी गाड़ी पर से उतार कर

खड़ी कर दी गई व चौथको २३-६-३६ को १२ बजे ठीक स्थान पर उत्तर मुख खड़ी हो गई। जयन्तीके दिन सैकड़ों स्त्रियाँ मूर्ति देखने आई। पुरुष भी आये, उत्सव बड़ी भीड़का हुआ; सब लोग श्रीबाहुबलीके दर्शन कर आनन्दसे गद्‌गद् हो जाते हैं और धन्य २ कहते हैं।

अभी छावनी नहीं हुई है। शुक्रास्त होनेसे प्रतिमाजी भी नहीं जमाई गई हैं। चि० छोटे, चि० मदनमोहन व इंजीनियर बिहटा वाले बराबर खड़े रहे लोहेकी सांकलोंसे व क्रेनसे मूर्ति चढ़ाई गई बड़ा परिश्रम सबको हुआ। २५) रु० मजदूरोंको इनाम दिया गया। मिष्टान्न तीन बार बांटा।

ता० १७ जूनको बड़ी बीबी घी पड़ जानेसे जल गई। तो भी आकर दो दिन यहाँ रहीं व मूर्तिको विराजमान करके निश्चिन्त हुई। आनन्द मनाया।

धन्य दिवस, धन रूप है, सुमरत अनुभव कूप।
दर्शन पर्शन ते भये, ज्ञानी जन चिद्रूप॥

ता० २८-६-३६ को आरासे चलकर ता० २६ को कलकत्ते पहुँचे। बाबू छोटेलालजीके यहां ठहरे। ३ सीट एकस्रेकी लीं। १ जुलाईको ऐकस्रे खत्म हुआ। शौर्टेन डाक्टरका कहना है कि अब शायद न लेना होगा, सीट लेते ही सारे शरीरमें खुजलीके दाने निकल आये हैं। गर्मी व बीच २ में चक्कर भी आते हैं। ता० ३० जूनको बुटेनीकल गार्डनमें गये। वहाँके कार्यकर्त्ता विश्वासने बनस्पति शास्त्रकी कुछ बातें दिखाई।

माइक्रोस्कोप यन्त्रसे एक बूँद पानीमें हजारों चलते फिरते जीव

दिखाये। कोई बूँदके समान, कोई त्रिकोण, कोई लम्बा, कोई बड़ा, कोई छोटा जीव था। नलके पानीमें कुएसे ज्यादा जीव हैं। छने पानीमें बहुत कम दिखते हैं। गर्म किये पानीमें बिलकुल नहीं। गंगाके पानीमें भी जीव नहीं मिलते हैं या बहुत कम मिलते हैं। गंगाका पानी रखनेसे भी नहीं बिगड़ता है व हैजा रोगमें लाभकारी है। इस बागके हेड मालीको ७००) बेतन मिलता है। २०० माली और हैं। अनेक प्रकारकी बनस्पतिओंका संग्रह है। कपूर, सेव, आदिके पेड़ हैं। मक्खीको पकड़ने वाला पेड़ है। पच्चीस लाख तरहकी वनस्पतियोंके नमूने रजिष्टरोंमें फाईल करके रक्खे हैं। एक पुराने साहिब वनस्पति वेत्ताके हाथके चित्र बनाए वृक्षोंके रक्खे हैं। मालूम होते हैं कि अभी ताजे बनें हैं। डेढ़ सौ वर्षके हैं। एक बहुत कीमती यन्त्र है जिससे बीस हजारवाँ हिस्सा बनस्पतिका कटता है।

ता० २-७-३६ को नये मन्दिरमें शास्त्र बांचा। इसी दिन चलकर ३ जुलाई आषाढ़ सुदी चतुर्दशीको प्रातःकाल आरा पहुँचे। रेलमें सामायिककी, पुनः कोठीमें आकर चैत्यालयमें सामायिक की। पुनः मध्याह्न सामायिक करके चातुर्मास सम्बन्धी नियम लिये व प्रतिक्रमण आदि क्रियाएँ कीं।

ता० ६ अगस्त सन् १९३६ आज १० पत्र बाहर लिखाये। विधवा विवाह समर्थक बिल जो ग्वालियर राज्यमें पेश है, उसका विरोध करनेके लिये उन पत्रोंमें जोर दिया गया है। स्त्री-सभाकरके तार दें। कलकत्ता, बम्बई परिषद्, प्रयाग, कोडरवां, सागर आदि स्थानोंमें इसी बातकी सूचना दी गई है। विश्राममें सभा करके कई

दिन पहले तारदे दिया गया है।

ता० २० अगस्तसे ता० २० सितम्बर तक एक माह धनुपुराके बड़े मन्दिरमें जिठानीजीके साथ रहे।

एकान्तवास रहा, केवल एक बार बुलाने पर भोजन करने 'बाला-विश्राम' में जाते रहे। धार्मिक कार्य—पूजन, स्वाध्याय, चर्चा आदिके सिवाय और कोई भी अन्य गृह कार्य नहीं किया। एक बार पानी भी भोजनके साथ ही पिया, बादमें नहीं। हरी नहीं खाई। परिमित वस्त्रादिसे रहकर बड़ी शान्तिसे समय गया।

पश्चात् शहरमें आकर १० दिन सिद्धान्त-भवनमें दशलाक्षिणी पर्वका शास्त्र सुना व समझाया। लगभग २० स्त्रियोंने मिथ्यात्व छोड़ा, १० के करीबने स्वाध्यायका नियम लिया, एकने विधिवत् पानी छाननेका नियम किया। २०४) रु० गोलकमें पड़े, सब जैन संस्थाओंको पाँच-पाँच रुपये भेजेंगीं।

ता० १३ अक्टूबरको लेडी डाक्टरने पेट देखा, आपने कहा कि ट्यूमरमें तीन महीनोंमें कोई कमी नहीं हुई है। प्रारम्भसे अब तक रुपयेमें १०आने कम बताया है। अब ऐक्से लेनेको मना करती है।

समाचार पत्रोंमें सचित्ताचित्तके विषयमें समाचार निकलते हैं। श्री मुनि चन्द्रसागरजीका कहना है कि पानी छानने मात्रसे प्रासुक हो जाता है, व फल, फूल, पत्र जो कि प्रत्येक हैं वे सब वृक्षसे पृथक् होते ही जीव रहित हो जाते हैं।

इसकी पुष्टिमें जैन गजट श्रावण-भादोंके अंकमें ब्र० पं० महेन्द्रका व श्रीलाल पाटनीके लेख निकले हैं। तथा खंडेलवाल हितेच्छुमें इन्द्रलालजी शास्त्रीके लेख निकले हैं। ये कहते हैं कि

जलकायिक जीव घनांगुलके असंख्यातवें भाग हैं। इतनी छोटी अवगाहनाके जीव छन्नेमें टकराकर चप जाते हैं। याने जो कार्य गर्म करने व लवंगादि डालनेसे होता है वह छानने मात्रसे ही हो जाता है। राजकुमार शास्त्री इन्दौरने इसका खण्डन जैन-मित्रके ४८वें अंकमें किया है, पूर्व अंकमें भी किया था। इनका कहना है कि छानने मात्रसे त्रस जीव निकल जाते हैं। जलकायिक बहुत छोटे होते हैं। ये छन्नेमेंसे कुछ चप जाने पर भी कुछ निकल जाते हैं।

प्रत्येक बनस्पतिमें भी पुलवी, अंडर, आवासके कारण सप्रतिष्ठित प्रत्येकमें कितने ही जीव रहते हैं। इसलिये हरितकाय जीव रहित नहीं है। अतिथिसंविभाग व्रतके अतिचार, सचित्त-निक्षेपा-विधान आदि लिखे हैं। यदि कमल पत्र सचित्त नहीं हैं तो क्यों लिखे हैं इस प्रकार प्रमाण दिये हैं।

कार्तिकके म० दर्शमें एक सम्वाद इसी विषय पर भेजा है।

ता० २३ अक्टूबर सन् १९३६ को रात्रिमें २ बजकर २५ मिनट पर चि० शीला बीबीको कन्या उत्पन्न हुई।

ता० २ नवम्बरको ११ बजे मध्याह्नकी ट्रेनसे चलकर हाथरस पहुँचे, वहां चि० मुन्ना मोटर लेकर आये थे। ५ बजे चि० जमना-प्रसादके घर पहुँच गये। सामायिककी, चौरासी जाकर श्री जम्बू-स्वामीके दर्शन किये। दूसरे दिन ता० ४-११-३६ को मथुरासे ५ बजेकी ट्रेनसे जयपुरको रवाना हुए। चौरासीमें ३ मूर्ति जिनमें १ नीलमकी है, चोरी हो गई हैं, पंचोंसे बातकी चि० जमना-प्रसादसे कहा कि कलेक्टर साहिबसे कह सुनकर चोरीका पता लगवा दो।

चौरासी ब्रह्मचर्याश्रममें कपड़ेका काम अच्छा होता है।

ता० ५ नवम्बरको सबेरे ३॥ बजे जयपुर आये। १॥) रु० में गाड़ी कर ठोलियाकी धर्मशालामें उतरे। बड़े कमरेमें सब प्रबंध उत्तम रहा। ३ दिन तीन क्षुल्लिकाओंको आहार दिया, रामकुमार व रामचन्द्रके यहां प्रतिमाएँ देखीं। जयपुरके जैनोंमें फूट अधिक है। विद्याप्रचार कम है। स्त्री सभा हुई तीन क्षुल्लिकाओंका आहार हुआ, मुनि सूर्यसागर व मुनि वीरसागरके दर्शन हुए।

१० नवम्बरको चलकर ११ को ६ बजे मन्दसोर पहुँचे, मोटरसे प्रतापगढ़ १२ बजे पहुँचे। जैन मण्डलमें ठहरकर सामायिककी व दर्शन भोजन कर मोटरसे शान्तिनाथ आये, यहाँ श्री १०८ शान्तिसागर महाराजके दर्शन हुए। मुनि नेमिसागर महाराज व क्षुल्लक यशोधरजी भी हैं। श्री शांतिनाथका मन्दिर अच्छा है प्रतिमा बड़ी है।

१३ नवम्बरको श्री नेमिसागर महाराजका आहार हुआ।

रात्रिमें शास्त्र बांचा, संघपति डालमचन्द आदि उपस्थित हैं बहुत भक्तिवान् हैं।

१३ तथा १४ ता० को पाक्षिक तथा वार्षिक प्रतिक्रमण श्री आचार्य महाराजके समक्ष किया। प्रायश्चित्त स्वरूप १५ दिनका दूध छोड़ा।

२ घण्टे नित्य शास्त्र-सभा होती है। श्री नेमिसागर मुनि बांचते हैं। आचार्य शान्तिसागरजीका आहार हुआ।

महाराजसे पूछा—कहते हैं तीर्थंकर भगवान्‌का भी शव रहता है, ऐसा किसी शास्त्रमें उल्लेख है।

समाधिमरण करने वाले साधुकी सेवा करने वाले मुनियोंमें— दो भोजन लाने वाले, दो पान लाने वाले रहते हैं ऐसा मूलाराधनामें लिखा है :—

महाराजने कहा—ये मुनि गृहस्थके यहाँ जाकर सिद्ध भक्ति करनेके बाद स्वयं उपवास ले लेते हैं। व उस गृहस्थसे कहते हैं कि इस भोजनको रोगी मुनिको जाकर दो। एकदिन एक मुनि जाते हैं।

ता० २१-११-३६ को प्रतापगढ़में एक सभा हुई स्त्री-पुरुष सम्मिलित थे, ज्ञान विषय पर व्याख्यान हुआ, नित्य प्रतापगढ़में रात्रिमें शास्त्र सभा होती रही। स्त्रियोंने स्वाध्यायका नियम लिया। ता० २३ नवम्बरको प्रतापगढ़से चलकर २४ ता० को रतलाम पहुँचे। वहाँसे पावागढ़ पहुँचे, चंपानेर होकर सिद्धक्षेत्रकी बन्दनाकी २१) भंडार दिया। सामको मोटरसे गोधरा आये, वहाँसे मेलसे ८ बजे रतलाम आये, पूजन, भोजन कर दिल्ली ऐक्सप्रेससे मथुरा २७ ता० की रात्रिमें ३ बजे पहुँचे। इस दिन चौरासी मथुरामें रात्रिमें रहे। प्रातःकाल श्रीसिद्धक्षेत्र चौरासी पर चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किया। पूजनादि कर मथुरा जमनाप्रसादके घर आये। ३ दिन रहकर आरा आ गईं।

ता० १० दिसम्बरको २०००) दो हजार रुपये धनकुमारचन्द-जीने विश्राममें रक्खे।

ताः ५ जनवरी सन् १९३७ को बालाविश्राममें राष्ट्रपति पं० जवाहरलालजी आये, ये फैजपुरकी कांग्रेससे लौटकर दौरा कर रहे हैं। बक्सरसे मोटर द्वारा आरा आये, आध घंटे विश्राममें

ठहरे, भोजन किया, भीड़ बहुत रही। ८ छोटी छात्राओंने दर्वाजे परसे स्वागत गान करते २ बीचमें रास मंडल बनाकर विद्यालय तक पं० जीको पहुँचाया, सूतकी माला पहिनाई। व और लोगोंने बहुत हार पहनाये। नेहरूजीने अपने हार उतार २ कर स्वागत गान करने वाली कन्याओंको पहना दिये।

आराके युवकोंके दो दलोंने भी स्वागत किया। एकने मान-पत्र व एकने ६१) रु० की थैली भेंटकी। नेहरूजीको खातिर ज्यादे पसंद नहीं हैं। काम ज्यादा रहनेसे कुछ घबरायेसे थे। भोजन बार २ परोसा गया। बिना पूछे सेव थालीमें डालते ही भोजन छोड़कर उठ गये! विश्रामकी विजिट बुक लिखी। पासके मैदानमें ३५ मिनिट व्याख्यान देकर पटना चले गये।

ता० २३ फरवरी सन् १९३७ को चि० प्रबोधकुमारका तिलक व ३०-१-३७ को विवाह हुआ। रौनक अच्छी रही। बारात धूम-धामसे निकली। ३५ हाथी, १० घोड़े और खिलौने थे। भीड़ बहुत थी।

मेहमान :—बाबू हनुमानप्रसाद दिल्ली, वीरेन्द्रकुमार इलाहा-बाद, चि० विजयवती सहारनपुर, कुसुमप्रभा आदि मथुरा, बलदेव बाबू, व छोटेलाल बाबू कलकत्तेसे आये थे। बाबू छोटेलालजीकी पत्नीने बाला-विश्राममें ६० पलंग पोश बांटे, तथा ५००) पांच सौ रु० विश्रामके ध्रौव्य फंडमें दिये। दयाराम बाबू पोद्दारने भी बाला-विश्रामके ध्रौव्यकोषमें १५००) पन्द्रह सौ रु० दिये। विवाहमें २ जीवनवार एक पार्टी हुई। कंगालोंको भी खिलाया गया, व बिहटाके मजदूरोंको मिठाई बांटी गई। लगभग २५०००) रु०,

लगा होगा, ठीक २ हिसाब लगाने पर मालूम पड़ेगा।

ता० ६-२-३७ को विवाहका कुल काम समाप्त हो जाने पर विश्राम आये आज यहां चि० प्रबोधकुमार व बहू सौ० नन्दरानी-जीने बड़े मंदिरजीमें अभिषेक किया।

अब बाहुबलिस्वामीकी मूर्तिकी प्रतिष्ठाका कार्य प्रारंभ होगा। श्री वर्णी गणेशप्रसादजीको पत्र लिखा है, वे पैदल चलकर शिखरजी आ रहे हैं, मार्गमें आरा उतरें और प्रतिष्ठा देखें।

वर्णीजी नहीं आये, मुनि मल्लिसागर आये, ५ दिन रहकर शिखरजीकी ओर रवाना हुए।

ता० २८ फरवरी सन् १९३७ से श्रीआदिनाथस्वामी व बाहुबलिस्वामीका प्रतिष्ठा महोत्सव प्रारम्भ हुआ। बड़े मंदिर पर सहस्रकूट चैत्यालयकी प्रतिष्ठा भी प्रारम्भ हुई है।

पं० नन्हेंलाल, पं० राजकुमार प्रतिष्ठाचार्य हैं। पं० पन्नालाल, पं० श्रुतसागर, पं० कस्तूरचंद, पं० नन्हेंलाल मोरेना, पं० मक्खनलाल दिल्ली गायन मंडली सहित आये हैं। दोनों मंदिरोंमें पंचकल्याणक हुए।

भा० दि० जैन महिला परिषद्का २१वां अधिवेशन श्रीमती रमारानी पत्नी शांतिप्रसादजी जैन नजीबाबादकी अध्यक्षतामें हुआ। १२ प्रस्ताव पास हुए, परिषद्को लगभग १३०० का चंदा हुआ।

ललिताबाई, जड़ाव भाभी व लीली बहिनको बम्बईसे साथ लेकर व श्री १०५ क्षुल्लिका जिनमती, सुमतीबाईको कारंजासे लेकर आरा आई हैं। ४५) रु० क्षुल्लिकाजीका किराया हमने दिया। ललिताबाई बम्बई लौट गईं। क्षुलिका दोनों आरामें ठहर गईं। नित्य द्वारापेक्षण करते हैं।

ता० १० मार्चको उनको लेकर श्री शिखरजी गईं, ७ दिन रहे, एक बन्दनाकी, चि० मुन्नालालने जयमाला ली। वहांसे चंपापुर व मंदारगिरिके दर्शन कर आरा लौटे। ता० २० मार्चको आरा आ गये। अप्रैलको लारीसे हम लोग दोनों क्षुल्लिकाओंको लेकर पावापुर, राजगिर, गुणावा, कुण्डलपुर, यात्राको गये, ५ दिनमें सर्व यात्रा हो गई। कुंडलपुरमें बड़ी प्रतिमा विराजमान करनेको बड़की बीबीनेकहा है। नालंदा भी देखा। जैन प्रतिमाएं छोटी २ चार हैं। ५ दिन आराम व ६ दिन विश्राममें रहकर ता०२०-४-३७ को श्री क्षुल्लिका जिनमति व सुमतिजी आज यहांसे महावीरजी होते हुए नाशिक गईं। अध्यापिका कस्तूरीबाई व हेमराज पहुँचाने गये हैं। हमें कुछ बुखार है, स्टेशन न जा सके। चि० बब्बू, चि० छोटे, जिठानीजी, और बड़की बीबीजी स्टेशन गये हैं। स्वागत अच्छा रहा, एक सभा कर उनकी फोटोका विश्राममें उद्घाटन किया, जब तक आप रहीं छात्राओंको उपदेश देती रहीं, अष्टमी-चतुर्दशीको मिष्टान्न बनानेको कहा।

एक साथ भोजन करें, १ मासका मौन भोजन समय छात्राओं-को दिया। नित्य लब्धिसारजीका स्वाध्याय थोड़ी देर पं० नन्हेंलाल जी करते रहे।

मार्च महीनेसे बाला-विश्राममें पं० नन्हेंलालजी शास्त्री मोरेना पढ़ाने लगे हैं। वाग्देवी मातंगड पढ़ती है। ४ छात्रा प्रथमा संस्कृतकी, व शेष रत्नकरण्ड-श्रावकाचार पंडितजीसे पढ़ती हैं।

ता० २२ मार्चको डाक्टर पकरीवाली मिन्नाने देखा, ट्यूमर

नीचेकी ओर बढ़ा बताती है। २२ मार्चसे पेट पर मिट्टीकी पट्टी १ घंटे तक रखती है।

ता० ११ मईसे इटावा वाले वैद्य छोटेलालकी दवा खाई—घृतकुमारीके रसमें पुड़िया लोहादि भस्म। २० दिन मिट्टीकी पट्टी रखते हो गये हैं, कब्ज नहीं है, शेष सब पहले सा है।

आज ता० ३ जूनको लेडी डाक्टरिनने देखा ट्यूमर घटा बताती है।

ता० ३ जूनको आरासे रात्रिकी ट्रेनसे हम व ब्रजवाला दिल्ली गये। मार्गमें इलाहाबाद उतरे। दिल्लीमें डाक्टर जोशीके अस्पतालके पास एक कोठीमें ठहरे। डाक्टर जोशीने पेट देखकर कहा ट्यूमर बड़ी नारंगीके बराबर है। केशर बीमार हैं, चार दिन दिल्ली रहे। मंदिरजी करौल बागके पासमें है।

एक दिन स्त्री-सभाकी, २० स्त्रियां आईं, बादमें मथुरा गये। वहांसे मोटर द्वारा कैमिकल वर्क्स आगराको देखते हुए टूंडलासे ट्रेन पर सवार होकर ता० २१ जूनको आरा पहुँच गये। केशर मिली। सब राजी खुशी हैं।

ता० ५ जुलाईको भगतजी, दुलीचन्दजी उदासीन इन्दौरसे आये हैं, विश्राममें दो दिन ठहरे। चर्चा-वार्त्ता हुई। यहांसे ईसरी गये।

ता० ८ जुलाईको लेडी डौक्टरने देखा ट्यूमर कम बताती है बड़ी नारंगीके समान है।

ता० २२ जुलाई सन् १९३७ को पारसनाथ (ईसरी) पहुँच गये। ट्रेन इतनी कम ठहरती है, कि असबाब व रामलाल ट्रेनमें ही रह गये, दूसरे स्टेशन गोमासे वापस आये। ७ ब्रह्मचारी हैं।

गणेशप्रसादजी वर्णी, बाबा भागीरथजी मुख्य हैं। प्रवचनसार, समयसार, का स्वाध्याय ८ बजे सबेरेसे होता है, बड़ा आनन्द आता है। वर्णीजी मुखाग्र समयसारकी पंक्तियोंका अर्थ लगाते हैं।

श्वेताम्बरी धर्मशालामें ठहरे हैं। कल सेठ हुकमचन्दजी इन्दौर यहांसे गये हैं, आरा भी उतरे हैं।

ता० ३ अगस्तको पं० पन्नालालजीने बाबा भागीरथजी व वर्णीजीके समक्ष दर्शन प्रतिमा ली। उनकी स्त्री और भौजाईने मन्दिरजीमें भगवान्‌के सम्मुख हमसे दर्शन प्रतिमा धारणकी।

श्रावण सुदी पूर्णिमा ता० २१-८-३७ को पारसनाथ (ईसरी) में नियम किया कि :—"प्रतिवर्ष दो माह श्रावण-भादों बाहर रहूँगी। परदेश जाना न हो सकेगा तो धनुपुरा या किसी भी एकान्त स्थानमें तटस्थ रहकर धर्म साधन करूँगी। किन्तु कोई बीमारी अपने आ जाय या किसी औरको आ जाय या कोई अन्य आपत्तिका समय हो तो छूट है"।

ता० २४-८-३७ को बाबू सुपार्श्वदासका स्वर्गवास नीमिया घाटमें हो गया। रात भर बड़ी तरदुद रही। छोटेलाल पुजारीने णमोकार मंत्र सुनाया था।

ता० २३-९-३७ को चलकर २४ को सबेरे आरा पहुँच गये। तबियत यहां आकर कुछ खराब रही, ९९ बुखार मध्याह्न समय हो जाता है। जुलाब लिया, कुछ लाभ हुआ। लेडी डौक्टर नारंगीके समान ट्यूमर बताती है।

ता० २६-१०-३७ को श्री गिरनारजीकी यात्रार्थ हम सब लोग रवाना हुए।

ता० २९-१०-३७ को आबू पहुँचे। दो दिगम्बर मन्दिरोंके दर्शन हुए। १।) टौल मालिक, ।।।=) रसोइया, ।=) नौकरकी लगी हैं। ६०) रु०में दो लौरी आती जाती हुई हैं। पहाड़ पर १४ मील नीचेसे है। आबूसे अहमदाबाद ४ घण्टे ठहर कर ता० १ नवम्बरको श्रीगिरनारजी आ गये। तलहटीकी धर्मशालामें ठहरे। ७ दिन रहे, एक बन्दना हुई। नीचे सब वेदियोंमें पूजनकी। कर्म-दहन विधान किया। चि० बब्बूने १०१) रु० भंडार दिया, व हर साल सौ रु० भेजनेको कहा, पहाड़ पर दूसरे टोंक पर छत्री बनाने का हमारा भाव हुआ किन्तु मुनीमने कहा कि श्वेताम्बरोंके अड़ंगा से इस समय पहाड़ पर हम कुछ नहीं कर सकते हैं, श्वेताम्बरोंके तीन सौ मन्दिर ऊपर हैं।

जिठानीजीकी बन्दना न हुई, अशुद्ध रहीं वे, बड़की बीबी व सुरेन्द्र गिरनार रह गये वन्दना करके लौटेंगे। हम सब लोग ता० ७-११-३७ को वहांसे चलकर ८ को पालीताना आये, ९ को बन्दना हुई। एक मन्दिर नीचे व एक ऊपर पहाड़ पर दिगम्बरी है। श्वेताम्बरी मन्दिर नौ टौकों पर तीन हजार हैं। मोती सा०का मन्दिर करोड़ोंकी लागतका होगा।

बहुत ही कीमती मन्दिर है। ता० १० को आबू आये, नीचे ही पूजन, भोजन कर ११ को उदयपुर पहुँचे। केशरियाजीकी यात्रा कर अजमेर, जयपुर होकर मथुरा आये, २ दिन ठहरे, चौरासी जाकर जम्बूस्वामीकी बन्दना व पूजनकी।

चि० जमनाप्रसाद गया गये हैं। बहूने और चि० मुन्नाने हम सबका स्वागत किया, सबको साड़ियां दीं, वहांसे कानपुर आये।

बाबू रूपचन्दजीके लड़के चि० राजेन्द्रकुमारसे चि० शशिप्रभाकी सगाई पक्की हुई। ता० १७-११-३७ को लगभग ३०००) तीन हजार रुपये खर्च हुए, २१ गिन्नी एक अंगूठी लड़केको दी गई। ५ गिन्नी व मुहर हमलोगोंने दीं। ५१ थाल फल, मेवा, मिठाई दी गई, समधी समधिन लोगोंको गिन्नी मिलनीमें दी गई। ता० १८-११-३७ को आरा पहुँच गये। सब बच्चोंको व बड़ोंको क्रमशः बुखार आ रहा है, जिठानीजीको २५ दिन तक जाड़ा बुखार आया, दवा बहुत हुई, इटावासे वैद्य आये, पर नहीं रुका, तब कुनैनकी सुई लेनी पड़ी। ५ ग्रेनकी पांच सुई, १० ग्रेनकी तीन सुई (इन्जैक्शन) लेनेसे एक महीनेमें ठीक हो गई।

चि० मुन्ना आशनसोल काम करनेको गये हैं।

ता० २४-१२-३७ को बिहार साहित्य-सम्मेलनका उत्सव आरा शहर टाउन स्कूलके कम्पाऊंडमें पीर मुहम्मदके सभापतित्वमें हुआ। हमलोग भी सुनने गये, श्रीकृष्ण सिंह मन्त्री बिहार कौंसिल भी आये थे, भाषण अच्छा हुआ।

ता० १-२-३८ को हमलोग श्रीसम्मेदशिखरकी यात्रार्थ गये। इस यात्राको समाप्त करनेमें कुल १७ दिन लगे। हम ईसरी, गया पावापुर, राजगृही आदि तीर्थ क्षेत्रोंकी यात्रा करते हुए वापस आये। इसी अवसर पर गयाके रथोत्सवमें भाग लिया। श्रीजिनेन्द्र-देवकी सवारीका दृश्य अत्यन्त मनोरञ्जक और पुण्यप्रद था। अम्बाला संघके धर्मोपदेशोंका तथा भगतजी साहबका धर्मोपदेश चित्ताकर्षक होता था। गयामें हमने दो दिन स्त्री-सभा करके महिलाओंको सन्मार्गका उपदेश दिया। अनन्तर हम गयासे मोटर

द्वारा ४ घण्टेमें रास्ता तय करके पावापुर आये और वहाँ यात्रियों के साथ-साथ पूजन वन्दनादि किया। इन यात्रियोंमें कुछ यात्री बुन्देलखण्डके भी सम्मिलित थे। "बुन्देलखण्डकी स्त्रियाँ जूं मारती हैं" यह बात प्रसिद्ध थी, हमने इसकी परीक्षा करनेके लिये कुछ बहिनोंसे पूछा तो उक्त कथन ठीक निकला। तब हमने पच्चीस-तीस बहिनोंको जूं न मारनेका नियम दिलाया।

ता० १८-३-३८ को भा० दि० जैन महिला-परिषद्का २२ वाँ अधिवेशन श्रीमती सौ० राजूबाई धर्मपत्नी श्रीमान् सेठ रावजी सखाराम दोशी सोलापुर वालोंकी सभाध्यक्षतामें सानन्द सम्पन्न हुआ। यह अधिवेशन कोपर गाँव (अहमदनगर) नासिकके पास हुआ था। इसमें बम्बई, कारंजा, नागपुर, इन्दौर, नासिक, बेलगाँव आदि कई स्थानोंकी बहिनोंने भाग लिया था। आरासे ब्रजबालादेवी और कुन्तीदेवी धर्मचन्दको साथ लेकर मथुरा होती हुई अधिवेशनमें सम्मिलित हुई।

ब्रजबालादेवी कोपर गाँवसे खण्डवा होती हुई ऊन क्षेत्र एवं बड़वानीकी वन्दना कर हमारी सम्मतिसे जावराकी प्रतिष्ठामें सम्मिलित हो गई। जावरामें महिला-सम्मेलन बड़ी धूमधामसे मनाया गया। फलस्वरूप अनेक विदुषी महिलाओंमें नवीन जागृति उत्पन्न हुई।

ता० १६-१७-१८ अप्रैलको खण्डवामें भा० दि० जैन महिला-परिषद्का अधिवेशन सानन्द समाप्त हुआ। इस महिला-सम्मेलनकी सभानेत्री भी ब्रजबालादेवी बनाई गईं।

आज ता० २७-४-३९ को भा० दि० जैन परीक्षालयकी

परीक्षामें निम्नलिखित छात्राएँ भिन्न २ विषयोंमें सम्मिलित हुईं।

वाग्देवी प्रमेयकमलमार्तण्ड और गोम्मटसार (जीवकाण्ड) की परीक्षामें सम्मिलित हुई।

ता० २४-५-३८ को सज्जन कुमार खण्डेलवाल नौकरीकी तलाशमें आये। आपके पास कपड़े आदि कुछ भी सामान नहीं है। हमने आपको अपने यहाँ रख लिया तथा आज ही कर्षा मास्टर नेमिचन्द भी रक्खे गये। शामको ईसरीसे दुःखद समाचार तार द्वारा प्राप्त हुआ कि श्री मुनिराजजी सख्त बीमार हैं। हम बड़की बीबी, जिठानीजी आदिको साथ लेकर मुनिराजकी वैय्यावृत्ति करनेके निमित्त गईं। इस मुनि संघमें ३ मुनिराज, ३ क्षुल्लक और १ अर्जिका, इस प्रकार कुल ७ व्यक्ति हैं। मुनिजयकीर्त्तिजी बीमार हैं, आपको दस्त होते हैं। कलकत्तेवाले सेठ लोग मुनिचर्यामें मग्न रहते हैं। हमने भी यथासाध्य वैयावृत्ति की और एक अपना चौका लगाया। ईसरीमें ५ दिन तक तबियत अच्छी रही। अनन्तर बुखार आने लगा और लाल आँवके दस्त लगना प्रारम्भ हो गया, दो दिन तक वहाँ और ठहरे। आरा वापस आने पर भी १५ दिन तक आँव गिरनेका कष्ट रहा। परन्तु हमने इसे अपना कल्याणकारी समझा तथा कर्मका विपाक समझ कर पूर्ववत् धर्म ध्यान करती रहीं। इसके बाद हर्रे, पीपल और नमककी गोली बनाकर खानेसे दस्त बन्द हो गये।

ता० २८-६-३८को हमलोग पुनः ईसरी गये। यहाँ पर ता० ७-७-३८ को मुनिराज जयकीर्त्तिजी रात्रिके १२॥ बजे इस असार संसारको छोड़कर स्वर्गवासी हुए। मुनिश्री अपने जीवनके अन्तिम

५ दिन तक अशक्त रहे, आपके कण्ठसे शब्द नहीं निकलता था किन्तु आप धर्मध्यानमें लीन थे। ऊपरसे ऐसा प्रतीत होता था मानो आपको कोई वेदना ही नहीं हो।

धर्मोपदेश बड़ी प्रसन्नतासे सुनते थे। जमीनमें पुआल (पलाल) के ऊपर शरीरसे ममत्व छोड़कर काष्टके पुतलेके समान पड़े हुए संघके मुनि व श्रावकोंसे जिनेन्द्र-गुण-गान सुना करते थे। प्रथम आपने ४ दिन तक उपवास कर पाँचवें दिन थोड़ा सा जल ग्रहण किया। दूसरे दिन सेठ गम्भीरमल कलकत्तेवालोंने नवधा भक्ति पूर्वक जल दिया, आप दो-चार अञ्जुलि लेकर बैठ गये। तब कलप्पा ब्रह्मचारी आपको उठाकर ले गये। आपने पुनः आहार, जलका त्याग कर दिया और उसी रात्रिको आपका स्वर्गवास हो गया।

आप इतने धीर और गम्भीर रहे कि अन्त तक लोगोंको संकेतसे व्रत और नियम देते रहे। आपने पं० गणेशप्रसादजी वर्णीसे संकेत किया कि कपड़े उतार कर मुनि हो जाओ। अब आत्मकल्याणका समय आ गया है, इसपर वर्णीजीने अपनी असमर्थता प्रकट की, परन्तु तो भी आपने कुर्त्ता उतारकर अलग कर दिया तथा नियम किया अबसे हम सिला हुआ कपड़ा नहीं पहनेंगे।

मुनिराजजीके शवके विमानोत्सवमें गया, झरिया, हजारीबाग, कलकत्ता आदि कई स्थानोंके श्रावक सम्मिलित हुए। और बिमानको बाज़ारमें घुमाकर जय-जय ध्वनिके साथ घी, कपूर और चन्दनकी लकड़ीसे दग्ध किया। पश्चात् एक सभाकी गई इसमें

वर्णीजीने कहा कि महाराजके स्मारकमें यहाँ एक पाठशालाकी स्थापना होनी चाहिये। जिसमें सराक जातिके लड़के विद्याध्ययन करें। वर्णीजीके भाषणके फलस्वरूप सेठ सूरजमलजीने ११००) रु० देनेका वचन दिया तथा अन्य लोगोंने भी देनेके विचार प्रकट किये। इसी दिन हमलोग आराके लिये रवाना हुए और रास्तेमें हजारीबाग रोड उतरकर सरियाके मन्दिरजीमें सामायिक स्वाध्याय आदि किया तथा आज उपवास भी किया। आरा वापस आने पर तबियत बिगड़ गई तथा बुखार आने लगा। पाँच दिन तक बुखार आता रहा परन्तु धर्मध्यान पूर्ववत् ही चालू रहा।

ता० १७-७-३८ से बड़े मंदिरजीमें एकांतवास करना प्रारंभ कर दिया और दो महीने—श्रावण, भाद्रपद यहीं शास्त्र स्वाध्याय, पूजन आदि करते हुए व्यतीत किये। पं० नन्हेंलालजी गोम्मटसार (जीवकाण्ड), पंचाध्यायीका स्वाध्याय करते हैं, आपके स्वाध्यायमें बाबू धनकुमारचन्दजी बाढ़वाले भी सम्मिलित होते हैं पण्डितजी-ने कहा :—

आत्मके प्रदेश तीन प्रकारके होते हैं—चल, अचल और चलाचल। विग्रहगतिमें संसारी जीवोंके प्रदेश चल, समुद्घात अवस्थामें चलाचल और अयोगकेवलीके आत्मप्रदेश अचल रहते हैं। श्रावणी (सलूनों) पर २५) रु० खर्च करके ४ सूअरोंको बलिदान-से छुड़ाया गया।

पर्यूषण पर्वमें पं० नन्हेंलालजीके कलकत्ते चले जानेसे शास्त्र-प्रवचन बंद हो गया, परन्तु विश्राममें दशलक्षणधर्म आदिका प्रवचन होता रहा।

ता० १८-९-३८ को मानस्थम्भ बनानेका आर्डर रामचन्द मूलचन्द नाटा जयपुरवालोंको २५००) रु० पर दिया गया। राजगृहीकी वेदीके लिये ८५०) रु० और दिये गये। इस वेदीमें कुछ १०५०) रु० लगे।

ता० २०-८-३८ से जिठानीजीका स्वास्थ्य बिगड़ गया है, बहुत घबड़ाती हैं। उपदेश देनेसे शांति पूर्वक धीरज धारण करती हैं।

ता० ५-१०-३८ को भगत प्यारेलालजी और जावित्रीबाईजी पधारीं। आप लोगोंने विश्रामका कुल निरीक्षण किया, तथा आप लोगोंसे तात्विक चर्चा भी प्रारम्भ हुई।

ता० २६-११-३८ से श्रीपावापुर सिद्धक्षेत्र पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा प्रारम्भ हुई। प्रतिष्ठाका प्रत्येक कार्य जनताके लिये अत्यन्त मनोरंजक एवं पुण्यप्रद होता था। वेदीमें भगवान् महावीरस्वामीकी गुलाबीरंगकी ७ फीट ऊँची प्रतिमा प्रतिष्ठितकी गई। आगन्तुक पण्डितोंमें पं० कस्तूरचंदजीका भाषण अच्छा होता था। आपने एक दिन अपने भाषणमें बताया कि भगवान् महावीरकी दिव्यध्वनि बिलम्बसे क्यों खिरी? योग्य पुरुषका अभाव होनेसे; क्योंकि जब दो शीशे आमने-सामने हों तब पहलेका प्रतिबिम्ब दूसरेमें नजर आवे। यदि लकड़ीका तख्ता सामने हो तो प्रतिबिम्ब किस पर पड़ेगा। अतएव जब महावीरस्वामीकी वाणीको प्रतिबिम्बित करने वाला द्वितीय दर्पण रूप गौतम बुद्धिमान् मनुष्य आये तभी दिव्य-ध्वनिका खिरना प्रारम्भ हुआ। इस उत्सवमें एक मुनिसंघ भी पधारा था। इसके संचालनके लिये ५००) रु० का दान हमलोगों-

ने तथा ३००) अन्य लोगोंने दिये। इन रुपयोंमेंसे ७५०) रुपये सेठ मानिकचंदजी कलकत्तेवालोंके पास भेज दिये गये और शेष रुपये अर्जिकाजीके संघमें भेजे गये। १०००) रु० का दान धर्मशालाके लिये चि० बाबू निर्मलकुमारने दिया तथा ५००) रु० कलशोंमें दिये। आपने साथ ही साथ यह नियम भी लिया कि नवीन आयका ≈) आना दान किया करेंगे। आप इसके पहले राजगृहीमें भी गतवर्ष ऐसा ही नियम ले चुके थे। अतः अब आप रुपयेमें चार आना नवीन आयका दानमें देंगे। इस प्रकार यह प्रतिष्ठा सानन्द समाप्त हो गई।

ता० ३१-१२-३८ को १० बजे दिनको श्रीमुनि संघ आरा पधारा। त्यागीजन विश्रामके सामनेवाले भवनमें ठहरे। आज सबका आहारादि सानन्द समाप्त हो गया। किन्तु दुर्भाग्यसे ता० ११-९-३९ को रात्रिके ३॥ बजे मुनिराजोंकी कोठरीमें आग लग गई। आग लगनेका कारण यह है—एक लालटेनके भभक जानेसे पुआलमें अग्नि प्रवेश कर गई और बातकी बातमें कोठरीमें लपटें उठने लगीं। दो क्षुल्लक और एक मुनि अधिक जल गये जिससे अधिक परिचर्या करने पर भी हमलोग अपने प्रयत्नमें असफल रहीं और इन्हें नहीं बचा सकीं। वीरसेनजी क्षुल्लक ७ दिन जीवित रहे, बाद समाधिमरण पूर्वक आपने इस नश्वर संसारका त्याग किया। श्रीमुनिराज शुभचन्द्रजी व शिवमूर्ति क्षुल्लकने ११ दिन तक जीवित रहकर सल्लेखना सहित धर्मध्यान पूर्वक शरीरका त्याग किया। शेष दो मुनिराज और एक क्षुल्लक बहुत चिकित्सा करनेके बाद स्वस्थ हुए। महाराजोंने इस असाता जन्य विपत्तिमें बड़ी सहन-

शीलता दिखलाई। अग्निमेंसे निकलनेके बाद आप वेदनाको भूलकर सामायिक करने लगे। १ महीना १७ दिन रहकर तीनों महाराजोंने बाला-विश्रामसे आरा नगरको विहार किया। महाराजोंने रुग्णावस्थामें भी अनेक लोगोंको व्रत उपवास करनेके नियम दिये तथा कई लोगोंसे रात्रि भोजन, शूद्रजल आदिका त्याग कराया। अनेक अजैन लोगोंसे मद्य, मांस, मधु आदिका त्याग कराके अष्ट-मूल गुण दिये।

ता० २०-२-३६ को महाराज बनारसकी ओर प्रस्थान कर गये। उनके साथ हमारी ओरसे एक चौका गया है जिसमें हमने पं० मथुराबाईको भी साथ भेजा है।

ता० २०-३-३६ को आरासे लखनऊके लिये रवाना हुई। मार्गमें अयोध्याजी उतरकर बन्दना की। यद्यपि टौंकोंकी मरम्मत हो गई है लेकिन वह अभी साधारण ही है, विशेष मरम्मत होनेकी आवश्यकता है। बड़े मन्दिरजीमें पूजनकी चौकी जीर्ण देखकर २५) रु० की संगमरमरकी चौकी मंगानेके लिये कहा गया है।

अयोध्यामें श्वेताम्बरोंका बड़ा विशाल मन्दिर बन रहा है। यह अनुमानतः ६-७ लाख रुपयेमें पूरा होगा। चित्रकारी बहुत हो रही है, कुछ चित्र आम्नायके बिरुद्ध भी बनाये हैं। यहाँसे लखनऊके लिये रवाना हो गये।

ता० २३-३-३६ को हम लखनऊ पहुँची। यहाँ हम पराडालके पास धर्मशालामें ठहरे। यहाँ पाँचों कल्याण पं० दुर्गा-प्रसाद कानपुरवालोंने वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ विधिके अनुसार कराये। इस पञ्चकल्याणकमें प्रबन्ध बहुत अच्छा किया गया

था। ४ दिन तक हमने स्त्रियोंमें उपदेश दिया और अनेक बहिनोंने स्वाध्याय करनेके नियम लिये और कई बहिनोंने चमड़ेकी चीजोंका इस्तेमाल भी छोड़ दिया। वहाँसे हम १० दिन रहकर वापस लौटी। तथा गंगादेवी मुरादाबादसे भी भेंट हुई।

ता० ११-५-३९ को मैनासुन्दर भवन, आरामें दि० जैन रात्रि-पाठशालाकी स्थापना की गई। इसमें अध्यापक स्याद्वाद महाविद्यालयके स्नातक न्याय-ज्योतिषतीर्थ पं० नेमिचन्द्रजी शास्त्रीको रक्खा गया है। मुहूर्त्तके समय ३५ बालकोंने धर्म पढ़नेके लिये नाम लिखाये हैं। उपस्थित जनतामें आगन्तुक विद्वानोंने भाषण दिये जिनका जनता पर काफी प्रभाव पड़ा।

ता० २६-५-३९ को अनूपनगर गये। यहाँ पर चि० बिमलचन्दकी बहूसे प्रतिदिन धर्मचर्चा होती रहती है। यह धर्मपिपासु आत्मा है। आपको जैनधर्मसे काफी प्रेम है, धर्मोद्धारकी भावना सर्वदा विद्यमान रहती है। भेद-विज्ञानकी ओर आपकी दृष्टि सर्वदा लगी रहती है। इस संथाल परगनेमें मांस-मछलीका अधिक प्रचार है।

यहाँ अहिंसा धर्मके प्रचारकी आवश्यकता है। यहाँके ब्राह्मण अपने कुलके आचरणको भूलकर हिंसाको ही धर्म समझ गये हैं। अतः यहाँ जैनधर्मके प्रचारकोंकी आवश्यकता है।

ता० ३-७-३९ को हम ईसरीके लिये रवाना होकर दूसरे दिन बीस पन्थी धर्मशालामें ठहरे हैं। आज सामायिक करनेमें खूब मन लगा है। वर्णीजी महाराज एक दिन मौनसे रहते हैं और एकदिन शास्त्रप्रवचन करते हैं। आपका आध्यात्मिक विषयक ज्ञान

बहुत अच्छा है। आपने ता० ५-७-३९ को जो एक मार्मिक दृष्टान्त दिया वह निम्न प्रकार है—

एक धनाढ्य मनुष्यने एक स्वप्न देखा कि—गर्मी अधिक पड़ रही है, प्याससे कण्ठ सूख रहा है, दिल बेचैन हो रहा है और ग्रीष्मकालकी लपटोंसे सारा शरीर जला जा रहा है। अतः उसने मनमें विचार किया कि अब कहीं शान्तिप्रद स्थानमें जाकर घूमना चाहिये, तभी चित्तको शान्ति मिलेगी। उपर्युक्त विचारके अनुसार सभी कुटुम्बियोंके साथ मुनीम आदि कर्मचारियोंको भी साथ लेकर नौकामें सवार हो गंगामें शैर करना प्रारम्भ किया। जब हास्य-विनोद करते हुए शीतल-मन्द-सुगन्ध वायुका स्पर्श करके आह्लादित हो रहे थे कि इतनेमें ही एक भयङ्कर तूफान आया और नाव डूबने लगी। इस करुणोत्पादक दृश्यको देखकर सेठजी मल्लाहसे कहने लगे कि भो भ्रात! जिस किसी तरहसे हो सके हमको इस विपत्तिसे बचाओ, हम तुम्हें दो-चार हजार रुपये इनाममें दे देंगे। मल्लाहने उत्तर दिया कि श्रीमान्जी अब यह नौका मुझसे किसी भी प्रकार नहीं बच सकती है, यदि आपकी आज्ञा हो तो एकेला मैं ही अपने प्राण बचा सकता हूँ। मल्लाह अपने वचनोंके अनुसार नौकासे कूद पड़ा और दो-चार हाथ मार कर नदीसे पार हुआ। इतनेमें सेठजीकी निद्रा भी खुल गई और उनका सारा कष्ट दूर हो गया।

शिक्षा : सम्पूर्ण कुटुम्ब सहित घर नौका है। जो कोई आत्मरसास्वादु इसको त्याग कर कल्याण मार्गमें चले जाते हैं, वे इस संसार समुद्रसे पार हो जाते हैं। मोहनींदसे जागना ही सुख

है, सेठजी जागे, निद्रा दूर हुई, स्वप्नका दुःख भी चला गया, इसी प्रकार मोहकी निद्रासे जागते ही संसारका दुःख चला जाता है।

ब्रह्मचारी कमलापतिको तत्त्वचर्चासे प्रेम है पूछने पर फौरन बताया कि इतर निगोदका अढ़ाईपुद्गल परावर्तन काल है। और इसी कथनकी पुष्टि मोक्षमार्गमें भी की गई है। अन्य ब्रह्मचारियोंको चर्चा नहीं आती है।

द्वितीय श्रावण सुदी पूर्णिमा को बड़ी बहू (मातेश्वरी बाबू निर्मलकुमार) व ब्रजबाला पधारीं। परंतु आपलोगोंके साथ ही साथ बीमारीका भी उपसर्ग आया। बड़ी बहूजी आते ही चौकी पर पड़कर सिसकने लगीं तथा उनका स्वास्थ्य दिन प्रति दिन बिगड़ने लगा है। आपके शरीर में घाव हो गये हैं। उनको दवा करने पर भी कोई लाभ नहीं हुआ, तब हमलोग मोटरके द्वारा उन्हें आसनसोल ले गये, वहाँ पर दवा करने से उनको लाभ हुआ, पार्श्वप्रभुके शासनके प्रसादसे चातुर्मासकी लाज बच गई। धैर्य बड़ी उत्तम रसायन है, भगवत् भक्ति सुवर्ण जटित वायुयानके तुल्य है, यह अचूक आत्मसिद्धिका उपाय है।

"प्रभु तुम वीतरागी हो, अचम्भा हमको होता है।
आशा सब पूज जाती हैं, कि जब अरदास होती है ॥"

कर्मोदय तीव्र है। बड़ी बहू को बीमारीका पुनः प्रकोप हुआ और ता० १६-८-३६ को मोटरपर लेकर कलकत्ते गये। मार्गमें कुछ स्वस्थ थीं, परन्तु कलकत्ते पहुँचते ही आपको रात्रिके समय लकवा लग गया और आपकी दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई। हमने भी समझा कि अब इनका अन्तिम समय नजदीक है। अतः



मातृपक्षका कौटुम्बिक ग्रुप-चित्र—बीचमें पण्डिताजीके पू० माता पिता हैं, दूसरी पंक्तिमें आप तीनों बहनें भावजें और भतीजियाँ हैं, ऊपरकी पंक्तिमें भाई, भतीजे और दामाद हैं, नीचेवाली तृतीय पंक्ति में इन्हीं लोगोंके बच्चे हैं।

आपको भूमिमें लिटाकर समाधिमरण सुनाना प्रारम्भ किया। कई दिन तक यही अवस्था रही, घर से भी लोग यहीं आगये हैं। चि० निर्मलकुमारने ५०००) हजारका दान करने का संकल्प किया और बड़ी बहूने भी बालाविश्रामके पास एक औषधालय स्थापित करनेका विचार किया। धर्मप्रसादसे आजसे ही बीमारी घटना प्रारम्भ हो गई। आपने बीमारी के समय शुद्ध दवा ही ली। आपका इलाज गणनाथसिंह कविराज करते हैं। आपको कुर्सीपर ही बैठाकर मन्दिरजी लेजाया जाता है, तथा आप बराबर सामायिकादि नित्य नियमों को इस रुग्णावस्था में भी सम्पन्न करती हैं। आपने इस प्रकार की अवस्थामें भी दशलाक्षणिपर्वमें २ उपवास, ६ एकाशन किये। सामायिक, पूजन आदि भी स्वस्थावस्थाके समान करती रहीं। पर्यूषणमें स्त्रियोंके लिये हमने भी उपदेश दिया। चमेलाबाई प्रवचन करती हैं और हम उसका अर्थ समझाती हैं। अच्छा धर्मसाधन हो रहा है, स्त्रियोंने नियम, व्रत आदि भी लिये हैं। फिर ईसरी वापस आ गई हैं।

ता० २३-१०-३९ को ईसरीसे आराके लिये प्रस्थान किया। हमें ईसरीमें बुखार आगया था, और उसका प्रकोप कई दिन रहा भी, परन्तु धर्मके प्रभावसे आरा आते ही हमारा स्वास्थ्य सुधर गया है। आजकल हमारा स्वास्थ्य निर्विघ्नतया चल रहा है। धर्मध्यान में मन खूब लग रहा है।

ता० १-१२-३९ को श्रीधवल ग्रन्थराज अमरावतीसे आगया है, इसका सम्पादन प्रोफेसर हीरालालजीने किया है, सम्पादन सर्वाङ्ग सुन्दर है। हम इसका नित्य आध घण्टे स्वाध्याय करती हैं।

ता० २२-१२-३९ को हमने अपना पेट लेडी डाक्टर से दिखाया है। उसने गुल्म (ट्यूमर) नीचे की ओर बढ़ता हुआ कहा है। उनका अनुमान है कि वह नारंगी के बराबर बड़ा हो गया है आत्मामें अनन्त शक्ति है, हमें किसी बातकी चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। श्रीजिनेन्द्रदेवकी भक्ति ही कल्याण-कारी है।

ता० २४-१-४० को बिहटा गये। यहाँ पर १० वर्षकी बालिका रमादेवी बहुत उत्तमतासे भाषण देती है। इसने अपने पूर्वभवकी कथा भी बड़ी मनोरञ्जक एवं शिक्षाप्रद बतलायी है। इनके पूर्वभवका वृत्तान्त निम्न प्रकार है :

यह बालिका पहले लखीमपुर जिला खीरीके शायदापुर सराय गाँवके एक ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुई थी। सर्वदा भगवद्भक्तिमें लीन रहती थी। १८ वर्षकी उम्र में हैजेके कारण आपकी मृत्यु हो गई थी। मरकर आप जिला हरदोई के मादपुर सायदा गाँवके एक राजपूत कुल में उत्पन्न हुई हैं। आप ३ वर्षकी उम्र से ही व्याख्यान देती हैं। पूर्वके माता-पिता को भी अच्छी तरह से पहचानती हैं। यद्यपि यह बालिका दस वर्षकी है परन्तु इनकी बुद्धि विद्वान् मनुष्योंके समान है। इस समय इसकी विद्या बहुत मामूली है, परन्तु यह गीता, भागवत आदिके श्लोक शुद्ध कण्ठस्थ सुनाती है। हमने आज पूर्वभव का ज्वलन्त उदाहरण देखा है।

ता० १९-२-४० को एक ज्योतिषीसे ४ प्रश्न पूछे। उसने उन प्रश्नोंको देखनेसे पहले ही बता दिया कि अमुक-अमुक प्रश्न

लिखे हैं—

१ मरण कब होगा ? उत्तर दिया १७ वर्ष बाद—सन् १९५६ में होगा।

२ मृत्यु ज्ञान-ध्यान सहित होगी ? उत्तर मिला-शान्तिपूर्वक ज्ञान-ध्यान सहित शुक्ल पक्षमें मृत्यु होगी।

३ एल्यूमिनियम मिल कब तक चालू होगा ? उत्तर मिला सन् १९४२ तक चालू हो जायगा।

४ बड़ी बहूकी मृत्यु कब होगी ? उत्तर दिया—सवा वर्ष बाद।

यदि इसके बाद जीवित रहीं तो, ११ वर्षके बाद मरण होगा

ता० १५-३-४० को हम श्रीसम्मेदशिखरजीकी यात्रार्थ गये। अष्टमीको अच्छी तरह बन्दनाकी, ४ दिन तक मधुवन रहकर रामगढ़के लिये प्रस्थान किया, रास्तेमें उतरकर सामायिक किया।

यहाँ पर काँग्रेसकी बड़ी भारी तय्यारियाँकी गई हैं। लगभग एक लाखसे भी ज्यादा तादादमें जनता अधिवेशनमें सम्मिलित हुई है। अधिवेशन प्रारम्भ होते ही हमलोग भी टिकट लेकर पण्डालमें पहुँच गये। जैसे ही हमलोग बैठे थे कि पानी वर्षना प्रारम्भ हुआ, पण्डालमें सब जगह पानी ही पानी हो गया। इस विपत्तिसे जनताको बड़ा कष्ट हुआ और अधिवेशन भी नहीं हो सका। हमलोग पुनः अपनी टैक्सी पर सवार होकर ईसरीके लिये रवाना हुए। रास्तेमें उतरकर हमने सामायिक किया। उस दिनका रास्ता बड़ा भयानक था, सर्वत्र पानी ही पानी दृष्टिगोचर होता था, हमें भय था कि कहीं मोटर ही फिसल न जाय। परन्तु पुण्योदयसे सुखपूर्वक ईसरी वापस आ गये।

श्रावण-भाद्रपदमें ऊपर मन्दिर पर रहनेका नियम लिया है। धर्म साधन हो रहा है। आज १९ अगस्तको बाबू पद्मचन्द इस असार संसारको छोड़कर स्वर्गवासी हो गये हैं। पर्यूषण पर्वमें ९ दिन तक भवनमें स्त्री-सभा होती रही है। इसमें हमने शास्त्रका अर्थ समझाया है। कई बहिनोंने नियम-व्रत लिये हैं।

ता० १६-१०-४० को कलकत्तेसे बाबू छोटेलालजीका पत्र बहुत ही शोकपूर्ण आया है। मोहनीयकर्म विद्वानों पर भी अपना प्रभाव डाल देता है। उनकी पत्नीका स्वर्गवास हो गया, बड़ी ही सौम्य थीं।

आज ता० १५-११-४० को अष्टान्हिका पर्व पूर्ण हुआ। बाहुबलिस्वामीकी पूजन करके बड़ा भारी आनन्द आया है। चमेली छात्रा जो अष्टाह्निकाका व्रत करती है, बहुत बीमार हो गई है। छः दिनोंसे शरीरमें कपकपी रोग लगा हुआ है, परन्तु इस पर भी अपने व्रत करनेमें पूर्णतया सावधान है। इन्जैक्शन दिलाया गया है, परन्तु उसे कुछ भी लाभ नहीं है। आज पुनः धर्मशाला वाले वैद्यका इलाज शुरू किया गया है।

आज १५-१२-४० को मनमें विचार आया है कि सूअरोंके बाल बड़ी निर्दयतासे मुसहर लोग नौंचते हैं, यह क्यों? बाजारमें बेचेगें उनके बुरूस बनेंगे, जिनसे शौकीन लोग अपने दाँत साफ करेंगे। हा कष्ट पशुपर्याय! हमने पैसे देकर तीन सूअरोंके बाल कैंचीसे कटवाकर फिकवा दिये। वेचारे मूक प्राणियोंका कष्ट बचा।

ता० १५-१-४१ को मोटरसे पावापुरको प्रस्थान किया। यहाँ दोनों मन्दिरोंमें पूजनकी, यहाँका पुल बहुत सुन्दर बनाया गया है,

इसमें आगरेका लाल पत्थर लगाया गया है, जालीदार कटघरे लगे हैं। अनुमानतः २८ हजार रुपया खर्च हुआ होगा। जलमन्दिरके तीनों दरवाजोंके किवाड़ चाँदीके लगाये गये हैं। यहाँ इस समय २ श्वेताम्बर साधु और कुछ गृहस्थ भी उपवास आदि कर रहे हैं। इनका दान और तप दोनों ही स्तुत्य हैं। सेठ पूरणचन्दने चार-पाँच लाख लगाकर जलमन्दिर संगमरमर (*Marble*) का बनवा दिया है। तथा एक सेठने पचास हजार रुपया लगाकर पुल और फाटक भी बनवा दिये हैं। संभव है, ये ही भद्र एक भवावतारी मिथ्यादृष्टि होंगे; जो कि कलिकालमें बताये गये हैं।

ता० १६-१-४१ को गुणावा पहुँचे। यहाँ सेठ माणिक-चन्दजीसे शंका-समाधान हुआ। तत्पश्चात् सम्मेदशिखरजीके लिये रवाना हो गये। मधुवनमें बिजली व पानीका पम्प भी लग गया है। दोनोंमें साढ़े चार हजार रुपया लगा बताते हैं। इस समय यहाँ यात्री नहीं हैं।

एक बन्दना पर्वतकी की। आजकल यहाँ सर्दी अधिक पड़ती है, अतः फाल्गुणमें आना चाहिये था। तेरहपन्थी कोठीमें शास्त्र-सभा की, कुछ लोगोंको शास्त्र स्वाध्यायका नियम दिलाया। हम ईसरी वापस आकर वहां ६ दिन ठहरीं। वर्णीजीका शास्त्रप्रवचन सुनकर अत्यंत आनन्द आया। पश्चात् ता० १-२-४१ को आरा वापिस आ गई।

ता० ६-२-४१ को आज अहमदाबादसे सुमतिबाई शाहने लिखा कि "श्रीगिरनारजी क्षेत्र पर आचार्य शांतिसागरजी पधारे थे। हमलोग भी दर्शनार्थ आई हैं। यहां हमारी बुआ श्री० ब्र० राजूबाई

ने क्षुल्लिकाके व्रत ले लिये हैं" इस समाचारको पढ़कर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई है। धन्य-धन्य उन जीवोंको जिन्होंने मनुष्यभव प्राप्त करके अपना कल्याण किया है। हे भगवन्! हमें ऐसे पवित्र व्रत कब मिलेंगे?

नियम

मिति आषाढ़ शुक्ला १५ सं० १९९६ तदनुसार ता० २-७-३९ को निम्नलिखित नियम एक वर्षके लिये ग्रहण किये। आगामी वर्षकी पूर्णिमाको इन नियमोंमें वृद्धि अथवा और भी किसी प्रकार का हेर-फेर किया जा सकता है।

१—अत्यावश्यक होने पर अपने लिये तथा अतिथिके लिये भोजन बनाना, शोधना, जल-छानना एवं स्थान साफ करना तथा करवाना; इनके अतिरिक्त और कोई व्यर्थका आरम्भ संबंधी कार्य नहीं करेंगे।

२—मंदिर संबंधी इमारतके सिवा अन्य मकान अपने सहयोगसे नहीं बनवाना, परन्तु पूछने पर उचित-अनुचितकी सम्मति देनेकी छूट है।

३—अपने पास १९ कपड़ेसे अधिक कपड़े नहीं रखना।

४—विवाह-शादी या अन्य सांसारिक उत्सवोंमें कहीं नहीं जाना, परन्तु घरमें हो तो ५ दिनकी छूट है।

५—उपसर्ग बीमारीके समय तथा सफरके समयको छोड़ अन्य समयमें गृहस्थीके घरमें निवास नहीं करना—विश्राम, शून्य-गृह, धर्मशाला, मठ, मन्दिरमें जहाँ निराकुल स्थान हो, रहना; परंतु भोजनके लिये बुलाने पर छूट है।

६—जेवर, सुवर्ण आदि कुछ भी अपने पास नहीं रखना, परन्तु पूजन संबंधी चांदीके कुछ बर्त्तन व रुपयोंकी छूट है।

७—जो भी आमदनी होगी, उसे ब्रजबालादेवीके सुपुर्द कर देंगी तथा उसकी व्यवस्था भी बतला देनी होगी। यात्राके अतिरिक्त अन्य समयमें अपने पास कुछ नहीं रखना। मंदिरकी अलमारीमें १५) रु० प्रतिमाहके हिसाबसे रख देना तथा आवश्यकता पड़ने पर उसीमेंसे खर्च करा देना होगा; परन्तु सफरमें जो खर्च होगा, उसे लेनेकी छूट है। आमदनी पर हमारा कोई अधिकार नहीं रहेगा, परन्तु यदि किसीको असुविधा हो जाय या कोई पुराना हिसाब-किताब निकल आवे जो कि विस्मरण हो गया हो तो इस मामलेमें हस्तान्तर करनेकी छूट है।

८—दिनमें एकबार भोजन करना, दोबार पेय पदार्थ (पानी) लेना; परन्तु बीमारीमें दवा, पानी, दूध और फलोंके रसकी छूट है।

९—कमसे कम एक घण्टे प्रतिदिन स्वाध्याय करना या सुनना, परन्तु असमर्थावस्थामें छूट है।

१०—अपना समय शांतिपूर्वक व्यतीत करनेके लिये तीर्थ-क्षेत्रों पर महीने दो महीने रहना, परन्तु असमर्थ होने पर छूट है।

११—एकान्तमें रहना, सवारीपर कमसे कम चढ़ना तथा प्रतिमास सवारी पर चढ़नेका नियम करना।

नोट—इसके आगे भी आपने डायरी लिखी है किन्तु स्थानाभावके कारण उसे प्रकाशित नहीं किया गया है। सिर्फ नमूनेके लिये थोड़ी सी डायरी दी गई है।

बालाविश्राम पर लोकमत

जिस आश्रमके दर्शनकी उत्कट अभिलाषा थी, आज उसको देखकर हृदयने विश्राम पाया। देर तक उसके उद्यानमें कुसुमित रसाल वृक्षोंकी छायामें घूमता रहा, अनन्तर जब अध्ययनागारका परदा खुला तो एक मनोहर दृश्य नजर पड़ा। प्रसन्नचित्त, हँसमुखी, सुसज्जित बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त कर रही थीं और अध्यापिकाजी भी प्रेमभावसे मुस्कराते हुए विद्यादान दे रही थीं। अध्यापिकाजीमें न स्कूल मास्टरोंकी डाट-डपट थी और न शिष्याओंके मुख भयसे उदास थे। वस्त्र स्वच्छ और सादे थे, न फैसनकी चमक-दमक और न गहनोंके भारसे बुद्धिपर भार। बस घरके आनंद भरे जीवनका दृश्य था। दूर दूरसे आई हुई बालिका और महिलाओंने जो मातृ प्रेमका आनंद घरमें न पाया होगा वह यहां वस्तुतः व्यवहारमें आ रहा है। नागरिक उपाधियोंसे बचा हुआ आरा नगरकी सुविधाओंके निकट यह धर्मकुंज आर्य बालाओंके वास्ते आदर्श विश्राम है। घरकी सफाई और बाहिरके उद्यानकी शुद्ध वायु, स्वच्छ जल और खुला हुआ मैदान इन सबका संग्रह इस विश्रामको बम्बई, दिल्ली आदिके श्राविकाश्रमसे विलक्षित करता है।

शिक्षा-प्रणालीका यह प्रभाव देखा कि बालिका स्पष्ट और शुद्ध उच्चारणसे प्रश्नोंका उत्तर संकोच रहित देती थी। संक्षेपतः पंडिता—संचालिकाजीका परिश्रम हमें आशा दिलाता है, कि महिला-महिमाका प्रकाश होनेवाला है।

ता० २४-२-२२ अजितप्रसाद

आज फाल्गुन सुदी त्रयोदशीके दिन धर्ममाता ब्र० कंकुबाई-जीके साथ और उनके निमित्तसे मातृतुल्य पंडिता चन्दाबाईजी जो कि जैन महिलाओंमें अद्वितीय रत्न हैं, विदुषी हैं, धर्मप्रेमी हैं, शांत स्वभाव हैं, समाजका हित करनेमें पूर्ण दक्ष हैं, जैन महिलाओंमें प्रथम ग्रंथकर्त्री हैं, आदिम पत्र संपादिका हैं, अपने सदाचरण, सरलता और वचन माधुरीसे अपने कुटुम्बियोंको और जैन, जैनेतर बंधुभगनियोंको प्रेमाकर्षणसे सद्धर्मके तरफ खींचा है, ऐसी धर्ममातासे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ इसलिये अतीव आनंद होता है। इसके साथ ही उन्होंने अपने पराक्रमसे और शुभ भावनाओंके बलसे जो 'जैन बाला-विश्राम' की सृष्टि की है उसको अवलोकन करनेसे आनंदवृद्धिका पारावार नहीं रहा।

इस आश्रमका स्थान 'धर्मकुंज' अत्यन्त सार्थक है। यह स्थान शहरसे जितना दूर चाहिये उतना है। इतना ही नहीं, किन्तु अत्यन्त रम्य और आल्हादजनक है। शांत है। हर तरहसे धर्म साधनामें और चरित्र संगठनमें अतीव अनुकूल है। इसमें बनी हुई इमारतें—विद्यालय, बालिका-निवास, मंदिर आदि बहुत सुन्दर, प्रशस्त और भव्य हैं। सब इमारतोंमें स्वच्छता व टापटीप आदर्शभूत है। भोजन सादा और अच्छा दिया जाता है जो कि शुद्ध भावनाओंका पोषक है। भोजनके साथ अथवा अलावा सबको दूध देनेका प्रबंध हो तो और भी अच्छा होगा। यहांकी सब अध्यापिकाएँ दिलचस्पीसे और पूर्ण योग देकर काम करती हैं। बालिकाओंकी व्युत्पत्ति—अनुभवयुक्त ज्ञान बढ़ानेके तरफ वे अधिक लक्ष्य दें तो उनका परिश्रम इससे भी अधिक सफल होगा।

सब बालिकाओंकी धर्म विषयमें परीक्षा लेनेका भी अवसर मिला। पढ़ाई ठीक है। तो भी बालिकाओंको इससे भी कई गुणा अधिक प्रयत्न करना होगा। क्योंकि पूर्व विद्या-संस्कारका अभाव और प्रौढ़ावस्थामें अध्ययनारंभ ये दोनों बातें अत्यन्त परिश्रमकी (और वह भी दिलचस्पीके साथ) आवश्यकता रखती हैं।

सब आश्रमवासिनी बाला और स्त्रियोंकी रहन सहनकी पद्धति, कपड़ोंकी स्वच्छता और सादगी पूर्व साध्वी-आवासकी याद दिलाती है।

यह विश्राम जैन संसारमें आदर्शभूत है और वह सब संसारमें आदर्शभूत हैं, और इस खानसे इस विश्रामकी संचालिका और संस्थापिका जैसी स्त्रीरत्न उत्पन्न होकर स्त्री-समाजका अज्ञानांधकारसे उद्धार करे ऐसी परमात्मासे प्रार्थना है।

इस विश्रामको अपनाकर उसको तन, मन, धनसे मदद करनेवाले उनके सब कुटुम्बीजन—बाबू निर्मलकुमारजी आदि अत्यन्त प्रशंसापात्र हैं। इस संस्थाका ध्रौव्य-फंड करके इस संस्था-को स्थाई करनेका पुण्य वे जरूर लूटें, ऐसी मेरी उनसे साग्रह विनती है।

ब्र० देवकुमार म० ब्र० आश्रमका सेवक कारंजा,
ब्र० कंकुबाई सोलापुर।

आज श्री जैन बाला-विश्राम नामकी संस्थाको देखकर परम प्रसन्नता प्राप्त हुई। श्री जिन भगवान्के सामाजिक हित रूपका सजीव स्वरूप यह संस्था है और जिन महापुरुषोंने द्रव्य साहाय्यसे इस सुन्दर आश्रमको पुष्पित पल्लवित किया है वे वास्तवमें

धन्यवादके सुयोग्य पात्र हैं। द्रव्यके सदुपयोगकी सजीव शिक्षा धनिकोंके लिये यह विश्राम है।

मैंने बिहार प्रांतकी कई कन्या पाठशालाएँ देखी हैं और इस विश्रामको भी देखा। आकाश पातालका अंतर पाया। स्थान स्थिति प्रबंध और शिक्षण विशेषताकी दृष्टिसे यह संस्था प्राचीन कालकी तपोभूमियोंकी याद दिला देती है। जितने काल तक मैं रहा मुझे एक आन्तरिक शांतिका अनुभव होता रहा और विचार उठाता रहा कि सारा भारत ऐसी ही संस्थाओंसे क्यों नहीं भर जाता ? बालक बालिकाएँ सभी यदि ऐसी ही संस्थाओंमें शिक्षा प्राप्त करने लग जाँय तो भारतका अतीत वर्तमानके समक्ष आ जाय। मुझे दुःख होता है कि मेरे पास धन नहीं, नहीं तो उसे मैं ऐसी ही संस्थाकी सहायतामें लगा देता। जिनेन्द्र भगवान्-की दया होगी तो मैं शीघ्र ही इस संस्थाके पुस्तकालय विभागकी कुछ सेवा करनेका यत्न करूँगा।

मैंने कुछ श्रेणियोंमें अध्यापन कार्य होते देखा, पद्धतिमें विशेषता थी और अध्यापिका महोदयाओंके कार्य निहायत सुन्दर थे। बालिकायें भी साधारण दर्जेसे सभी अच्छी जँची। स्वच्छता-का साम्राज्य देख हृदय पुलकायमान हो उठा।

पत्र-पत्रिकाओंके पढ़ानेकी ओर ध्यान होना चाहिये, क्योंकि इनसे सामाजिक ज्ञानकी वृद्धि होती है। पाक्षिक सभामें व्याख्यान दिये जाते हैं ठीक ही है, उसमें बालिकाओंको बोलनेके निमित्त प्रोत्साहित करना जरूरी है।

संगीतकी शिक्षाका थोड़ा प्रबन्ध होना चाहिये जैसे ही आर्थिक

व्यवस्था हो जाय प्रबन्ध-कारिणी-कमेटी जरूर ध्यान देगी, यह आशा है। संस्कृत शिक्षाका प्रबन्ध सोनेमें सुगंधका काम करता है।

इसके सुप्रबन्धसे मुझे पर्याप्त संतोष हुआ और मैं अपनी पुत्रीको यहां शिक्षार्थ भेजनेका निर्णय करके लौट रहा हूं। भगवान् जिनेन्द्र अनुग्रह दिखावें कि मेरा निर्णय कार्यरूपमें परिणित हो जाय। मैं पं० सितारासुंदरीका कृतज्ञ हूँ, जिनने कष्ट कर संस्थाकी बातें मुझे समझाई।

ता: २-१२-३४ — पाण्डेय रामावतार शर्मा
एस० P. बी. एल. साहित्यशिरोमणि
रिसर्च-स्कालर, पटना कालेज

यह वनिता-विश्राम देखकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ, इसके लिये मनमें आदर पैदा हुआ, और मकानकी शान्ति देखकर आनन्द हुआ।

मोहनदास करमचंद गांधी

पो० कृ० १०-८३।

इस विद्यालयमें मैं थोड़ी देर ठहरा और जो मेरा यहां स्वागत हुआ उसके लिये धन्यवाद। मैं आशा करता हूं कि यह विद्यालय खूब तरक्की करेगा।

५-१-३७। जवाहरलाल नेहरू

जैसे निस्वारथ सेवा करती हैं। आपलोगोंको ईश्वर फल देगें।

शिवरानी-प्रेमचंदजी

नोट—ये शिवरानी प्रसिद्ध कहानीकार 'हृदय सम्राट' स्व० प्रेमचंदजीकी धर्मपत्नी हैं।

अबकी बार पावापुरीमें वीर-निर्वाणोत्सव मनानेका पुण्य लाभ लेकर बाबू निर्मलकुमारजी—साहबके प्रेमपूर्ण आमन्त्रण वश मुझे आरा आनेका अवसर मिला।

जैन समाजमें स्याति प्राप्त श्री जैन बालाविश्रामको देखनेका मौका प्राप्त हुआ। मुझे यह जानकर बड़ा आनन्द हुआ, कि यह संस्था बराबर प्रगति करते हुए जैन महिला-मंडलका अकथनीय कल्याण कर रही है। इस बातको स्वीकार करनेमें मुझे तनिक भी संकोच नहीं है कि यह विद्यामंदिर जैन-समाजमें अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। विश्रामका बाह्य वातावरण जैसा प्रशांत, रम्य एवं भव्य है, उसी प्रकार उसका अंतरंग कार्य संचालन भी समीचीन रीतिसे संपन्न किया जाता है। ब्र० पंडिता चंदाबाई-जीने अपने जीवन उत्सर्ग तथा अनवरतश्रम द्वारा इस विश्रामको समुन्नत बनाकर जैन महिला संसारमें वह महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर ली है जो कि 'जैन सिद्धान्त विद्यालय मोरैना' को स्थापितकर स्व० स्याद्वादवारिधि पं० गोपालदासजी बरैयाने प्राप्त की थी अथवा काशी हिन्दू-विश्व-विद्यालयके द्वारा महामना पं० मदनमोहन-मालवीयजीने प्राप्त की है।

मुझे विश्वास है कि जिस प्रकार पू० ब्र० अधिष्ठात्रीजीने अपने वैधव्य जीवनमें आगमोक्त वैधव्य दीक्षाको ग्रहण कर उज्वल आदर्श स्थापित किया है उसी प्रकार उनके तत्वावधानमें कार्य-करनेवाली संस्थाकी अन्य विधवा बहिनोंका जीवन भी बालाविश्राममें इस प्रकार ढाल दिया जायगा कि वे—वैधव्य दीक्षासे दीक्षित होकर आदर्श धर्मसेविकाके रूपमें जैन-समाजमें (खास कर अपने

समान महिलाओंमें) उच्चचारित्र एवं उसके भी प्राणभूत-समीचीन जैनागमका प्रसार करनेमें समर्थ हो सकेंगीं।

मेरी यह धारणा है कि यदि सुसंचालित यह संस्था अपने द्वारा व्युत्पन्न बनाई विदुषियोंके द्वारा जैन महिला-समाजमें लोकोत्तर जागृति उत्पन्न करती हुई ऐसी स्वर्ण स्थिति उत्पन्न कर सकती है कि जिसके द्वारा पथभ्रष्ट या विचारभ्रष्ट जैन सुधारा-भासके प्रेमियोंका भी सुधार हो सकता है और वे भी यह हृदयंगम कर लेंगे, कि विधवा बहिनोंके लिये शील तथा संयम पूर्ण पवित्र जीवन तथा वीतराग प्रभुका शरण ही श्रेयस्कर है।

मैं वीर भगवान्के बिहारसे पुनीत बिहार प्रांतस्थ इस विद्या-मंदिरकी सर्वांगीण उन्नतिकी हार्दिक कामना करता हूँ।

श्रीमान् बाबू निर्मलकुमारजी साहबकी विशेष सहायता तथा कृपाके कारण ऐसी सुंदर संस्था कार्यकर रही है, अतएव वे महान् धन्यवादके पात्र हैं। जैन-समाजके उदाराशय पुरुषों तथा महिलाओंसे मेरा जोरदार शब्दोंमें अनुरोध है कि इस महत्त्वपूर्ण संस्थाको अधिकसे अधिक आर्थिक सहायता देते हुए उन्नतिगामी बनानेमें पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

२५-१०-३८ सुमेरचंद्र जैन दिवाकर न्यायतीर्थ, शास्त्री
बी. ए. एल. एल. बी., मंत्री अ० भा०
दि० जैन राजनैतिक स्वत्वरक्षक समिति सिवनी, (सी. पी.)

जैन बाला-विश्राम आराका निरीक्षण कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। इसका संचालन महत्त्वशालिनी पंडिता चन्दाबाई जैनके द्वारा बड़ी क्षमताके साथ होता है। यह आश्रम जैन-समाजकी बालिका-

ओंके शिक्षणके लिए अपने ढंगका एकही है। इस विशाल आश्रमके वातावरणमें ही मानवता एवं सन्तोषकी आभा भरी है। स्त्री-शिक्षाकी दृष्टिसे बिहार प्रान्त बहुत पीछे समझा जाता है। इस दशामें यह आश्रम अन्धकारके मध्य प्रकाश-पुञ्ज बनकर महिला-समाजके सर्वमुखी उत्थानके लिये पथ-प्रदर्शनका कार्य करता है।

मैं पंडिताजीके निःस्वार्थ एवं उत्कृष्ट कार्यमें महती सफलताकी कामना करती हूं। काश, पंडिताजी सरीखी भारतीय महिलाके कुछ कालके लिये खोए प्राचीन गौरवको पुनः स्थापित करनेके लिये और महिलाएँ होतीं।

ता० २५-२-३६ } मिसेज-अमृतकौर

आज रोज श्रीसम्मेदशिखरजीसे लौटते समय हम यहां पर आये, श्रीमती विदुषी चंदाबाईने आश्रम दिखाया, हम दस वर्ष पहिले आये थे आज आश्रमकी बहुत उन्नति हुई है। विशेषतः श्रीबाहुबली स्वामीकी मूर्तिका निर्मापण और मानस्तंभ; इससे आश्रम धर्मस्थान बन गया है। यहां पर शिक्षाक्रम यथापूर्व चल रहा है, इससे महिलाओंकी उन्नतिमें बहुत सहायता हो रही है यह सभी विदुषी चंदाबाईजीके परिश्रमका फल है, इससे जैन समाजके महिला-मण्डलका अनंत उपकार हो रहा है। आश्रम शहरसे २ मील होनेसे यहां पर शहरके संस्कारका परिपूर्ण असर होता नहीं, यहांके संस्कारका परिपूर्ण असर होनेसे भावी जीवन धार्मिक संस्कारसे पवित्र बना रहता है, यह आत्मोन्नति है, हम इस आश्रमकी इसी प्रकारसे सदैव उन्नति चाहते हैं।

ता० ८-१-४१ } ब्र० जीवराज गौतमचंद, शोलापुर निवासी

आज विदुषी ब्र० चन्दाबाईकी धार्मिक वृत्तिका जीवनरूप बाला-विश्राम देखा। यह निर्विवाद है कि स्त्रीशिक्षा-दीक्षाके लिये इससे बढ़कर कोई दूसरी संस्था नहीं है। शिल्प-शिक्षा भी अच्छी दी जाती है। मैं इस संस्थाके वातावरणसे पूर्णरूपसे प्रभावित हुआ हूँ। भगवान् बहुबलीके पुण्य दर्शन कर आत्मामें शान्तिका सञ्चार हुआ। मित्रवर पं० नेमिचन्द्रजी तथा अन्य कार्यकर्त्री अध्यापिकाएँ बहुत श्रमसे शिक्षा देती हैं। मैं इस संस्थाकी हृदयसे उन्नति चाहता हूँ।

मेरी यह सूचना है कि यहांके वाचनालयमें 'जीवन साहित्य' 'सर्वोदय' जैसे पत्र तथा सस्ता साहित्य मण्डलसे प्रकाशित चारित्र्य-वर्द्धक पुस्तकें अवश्य मंगाई जाँय जिससे छात्राओंके मानसिक विकासमें पर्याप्त सहायता मिलेगी।

ता० ५-७-४१

महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य
स्याद्वाद विद्यालय भदैनी
काशी

बाला-विश्रामसे शिक्षा प्राप्त छात्राओंका विवरण

न०	नाम	स्थान
१	कुन्तीदेवी	सहारनपुर
२	सितारासुन्दरी	आरा
३	चमेलीदेवी	सिवनी
४	केसरबाई	सहारनपुर
५	वसन्तीबाई	जसवन्तनगर

नं०	नाम	स्थान
६	यशोदाबाई	रेवाड़ी
७	वाग्देवी	मूड़बिद्री
८	धर्मवती	जयपुर
९	परमाबाई	आरा
१०	नागम्मादेवी	अलमपुरी (दक्षिण)
११	विद्यावती	अजमेर
१२	पुतराबाई	लाड़नू
१३	चैगनबीबी	आरा
१४	प्रेमलता	सरसावा
१५	धनवन्ती	देहरादून
१६	सुन्दरबाई	अवागढ़
१७	चतुराईबाई	फिरोजाबाद
१८	इलायचीबाई	रोहतक
१९	चैनाबाई	सतना
२०	सुन्दरबाई	किशनगढ़
२१	यशोदाबाई	गया
२२	कटोरीबाई	सरसागंज
२३	कमलाबाई	बड़वाह
२४	जयमाला	इन्दौर
२५	सुशीलाबाई	खाते गाँव

महिला-परिषद्के बीसवें अधिवेशनमें दिया गया भाषण

सन् १९३५ में भारतवर्षीय दि० जैन महिला-परिषद्के २०वें अधिवेशनके लिये, जो सोलापुरमें पंचकल्याणक प्रतिष्ठाके अवसर-पर होने को था। आप पुनः उसकी अध्यक्षा बनाई गई। आपने सभाध्यक्षाकी हैसियत से जो मार्मिक एवं गम्भीर भाषण दिया, जिसमें भारतीय स्त्री-समाजको अपने उत्थान करने की प्रेरणा की गई। उसमें संगठन, शिक्षा और सच्ची धर्मनिष्ठा और आदर्श-सेविका नारी बनने की भी प्रेरणा की गई थी, साथ ही, शिक्षा प्रचार आदि के कुछ संक्षिप्त एवं सरल उपाय भी प्रदर्शित किये गए थे। पाठकोंकी जानकारीके लिये उक्त प्रबन्धको ज्यों का त्यों नीचे दिया जाता है :—

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये॥

सुज्ञ समागत भगिनीगणो,

परम हर्षका विषय है कि इस सुदूर प्रदेश सोलापुर नगरमें आप सब लोगोंकी सेवाके लिये में उपस्थित हुई हूँ, इतिहास और पुराण दोनोंके कथानकों से यह बात भली भांति सिद्ध हो जाती है कि उत्तरदेशकी अपेक्षा दक्षिणदेश प्राचीन सभ्यता और संस्कृतिमें अधिक सुदृढ़ रहा है। अतएव यहां ऐसे धर्म सम्मेलनोंका होना और भा० दि० जै० म० परिषद्को निमन्त्रित करना सोने में सुगन्ध की कहावतको चरितार्थ करता है। ऐसे अवनत-कालमें भी जो धर्मात्मा सज्जन अपने धर्मकी प्रभावना करते रहते हैं वे अनेक साधुवादके पात्र हैं। इस सोलापुर नगरमें यह

हीराचन्द नेमिचन्दजीका श्रेष्ठी घराना भी अपनी धवल कीर्तिमें सदैव सफल होता रहा है तथा आज भी इसी मार्गका परिचायक हो रहा है।

महिला-परिषद्से भी इस कुटुम्बका कौटुम्बिक संबन्ध कह दिया जाय तो अनुचित न होगा, क्योंकि अब से २५ वर्ष पूर्व श्रीसम्मेदशिखरजीमें जब इस परिषद्की स्थापना हुई थी तभी से श्रीमती ब्रह्मचारिणी धर्मचन्द्रिका कंकूबाईजीका इसमें पूरा २ हाथ है। आपके स्थायी सभापतित्वमें इस संस्थाने अच्छी उन्नति की है। मेरा विचार था वर्तमान अधिवेशनकी सभाध्यक्षा भी कोई ऐसी ही सुयोग्य महिला चुनी जाती तो बहुत सफलता हो सकती थी, परन्तु आप सब लोगोंने अस्थानभूत मेरे कन्धोंपर ही इस गुरुतर भार को रख दिया है इसका निर्वाह भी आप लोगोंके सहारे से ही होगा। मुझमें इतनी क्षमता नहीं है।

मुझे इस परिषद्में खड़े होकर स्व० जैन महिलारत्न मगनबाई-जीका स्मरण बड़े वेग से विह्वल बना देता है तथा इसी प्रकार असमयमें परलोकगत और जिन २ परोपकारी भगिनियों और बन्धुओंका वियोग हुआ है वह भी अखरता है, क्योंकि आचार्यों के वचन हैं, "न धर्मो धर्मकैर्बिना" धर्म धर्मात्मा मनुष्योंके सहारे पर ही ठहर सकता है। उनके न रहने पर नहीं रह सकता है। इन सभाओंके स्थापित करने और सुसंगठित करने का भी यही हेतु है कि एक जनसमुदाय ऐसा सत्तावान् व सामर्थ्यवान् बन जाय जो कि समाजकी कुरीतियोंको दूर करता रहे और सुरीतियोंका प्रचार करनेवाला हो।

जैन महिलाओंमें अज्ञानान्धकार अत्यधिक फैला हुआ है, इनके मध्यमें अनेक कुरीतियोंने जन्म ले लिया है।

ये लोग जैनत्व को ही नहीं, मनुष्यत्वको भी भूलती जाती हैं। इन बातों को दूर करनेके लिये और समाजके ज्ञानचक्षु उन्मीलित करनेके लिये ही महिला-परिषद्‌का जन्म हुआ है। गत २५ वर्षों से परिषद्‌ने किस २ प्रान्तमें कब २ अधिवेशन करके जागृति उत्पन्न की है। यह आप लोगोंको इसकी रिपोर्टों से ज्ञात ही होगा।

जैन जातिमात्रकी यह एक ही बृहत् स्त्रीसभा है जिसकी सुयोग्य मंत्रिणी जैन महिलारत्न ललिताबाईजी अपने अचूक उद्योग से प्रचारका कार्य करती रहती हैं।

परन्तु खेदका विषय है कि समाजकी समस्त विदुषी और धनाढ्य बहनें इधर ध्यान नहीं देती हैं। यदि समस्त बहनें महिला-परिषद्‌के प्रस्तावोंपर वास्तविक अमल करने लग जांय तो बातकी बातमें कुरीतियोंका नाश हो जाय और सुखकी अभिवृद्धि हो जायगी, परन्तु हमारी समाजको तो मेला देखनेमात्रकी ही धुन रहती है वह सभाओंको बुलाकर भी केवल अभिनय ही देख लेती हैं, उसके नियमों पर नहीं चलती, इसीसे उन्नति नहीं होती है। बहिनो! अब उपेक्षाका समय नहीं है। हमलोगोंके धर्म और धन दोनों की समाप्तिका समय आ रहा है, अब सावधान होना चाहिये और अपनी समाजके प्रस्तावोंको अमलमें लाना चाहिये।

इन आज्ञाओंको प्रतिज्ञाके समान आजन्म निभाना चाहिये। तभी कुरीतियोंका दमन होगा। तभी सुखकी वृद्धि होगी। यह भा० दि० जैन महिला-परिषद् गत १९ अधिवेशनों द्वारा समाज

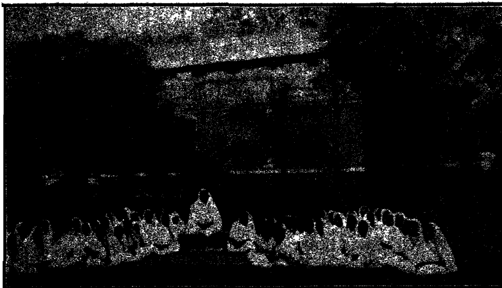
की देवियोंको अनेक सुखद व स्तुत्य प्रस्ताव सुना चुकी है तथा इसी बीसवें अधिवेशनमें भी सुनायेंगी, यदि अभी तक आप लोगोंने इसके अनुसार प्रवर्तन किया होता तो अपनी दशा सुधर जाती और कुल त्रुटियां भाग जातीं। आप लोगोंको विदित ही होगा कि गत ३० वर्षों में जापानने अपना काया-पलट किस प्रकार कर डाला है, पच्चीस-तीस बर्षोंमें ही वह राज्य कहाँसे कहाँ पहुँच गया है, धन, विद्या, वैभव, सम्मान और व्यापारमें सबका शिरोमणि हो गया है, कहनेका तात्पर्य यह है कि कटिबद्ध होकर उन्नतिमें हाथ लगाया जाय तो कुछ ही समयकी आवश्यकता है सदियों तक गड्ढेमें पड़े रहनेकी आवश्यकता नहीं है। वर्तमानमें जैन समाज की परिस्थिति कितनी भयावह हो रही है यह आप लोगों से छिपी नहीं है। अकबर बादशाह के जमानेमें करोड़से ऊपर जैन जनता थी। इसकी साक्षी इतिहास दे रहा है, परन्तु चार-सौ-साढ़े चारसौ वर्षोंके बाद ही अब जैन जातिके मनुष्य केवल १०—१२ लाख ही रह गये हैं। उनमें भी अनेक मत और कई फिरके हो गये हैं। यथार्थ जैनी तो ग्रन्थकारोंके कथनानुसार "द्वित्रिजनाः" मात्र ही होंगे।

अस्तु, बहनो! अभी कलिकालका समय चौथाई भी नहीं बीता है अभी धर्म बिच्छेदका समय बहुत दूर है, इसलिये हमें अपनी उन्नति करके सद्भक्तिका लाभ प्रत्येक को कर लेना चाहिये। अभी उन्नति से मुंह न मोड़ना चाहिये। इस समय यहां पर अपनी स्त्री-समाजका ही विशेष लक्ष्य रखकर मुझे कहना है, बहिनो! आपके भीतर शिक्षाका कितना अभाव हो गया है, पार-

लौकिक शिक्षाका तो निशान भी नहीं है, न समुचित रीति से लौकिक शिक्षाका ही प्रबन्ध है। इनी गिनी धनाढ्य महिलाएँ स्कूल व कॉलेजों में पढ़ने जाती हैं तो उनका ढंगही बिगड़ जाता है वे अपनी प्राचीन सभ्यताको अपने जातीय नियमोंको तथा अपनी धार्मिक संस्कृतिको बिलकुल भुला देती हैं। इससे उनका तो अकल्याण होता ही है साथमें और अनेक मनुष्योंके हृदयमें भी शिक्षासे घृणा उत्पन्न हो जाती है और वे अपनी बहू-बेटियोंका पढ़ाना-लिखाना बन्दकर देते हैं, जिससे समाज गिरता ही जाता है। इस समय आवश्यकता है ऐसे २ विद्यालयोंकी, ऐसे २ आश्रमोंकी जहां उच्चकोटिकी सर्व प्रकारकी शिक्षा प्राचीन सभ्यता के साथ धार्मिक भावों को लिये हुए दी जाय, जिससे कि स्त्रियां विदुषी धार्मिक व विनम्र बनकर निकलें, तभी उन्नति होगी।

परन्तु यह हो कहांसे ? महिला मंडलीको तो अपना धन और २ कामोंमें खर्च करना है। किसीको पुत्र गोद लेकर अपना नाम अमर करना है, किसीको कोई उत्सव करके नगरभोज देना है, किसीको कहीं अपने नामका पाटिया लगाना है, बस फिर शिक्षाका कार्य बृहद् रूपसे कैसे किया जाय ?

यदि किन्हीं २ महानुभावोंकी इच्छा संस्था खोलनेकी भी होती है तो वे अपने ही स्थान पर सप्तक्षेत्रजन्य पुण्यका आव्हानन कर लेते हैं। द्रव्य थोड़ा हो या बहुत परन्तु पाठशाला, भोजनशाला, औषधालय, पुस्तकालय, श्रीजिनालय इत्यादि सभी बातें आवश्यक हो जाती हैं। एक कामको करके उन्हें तृप्ति नहीं होती है। उसका परिणाम यह होता है कि रिपोर्ट ही रिपोर्ट छप जाती है



बाला-विश्रामकी शास्त्र-सभाका ग्रूप-चित्र—बीचमें पण्डिताजी शास्त्र बाँच रही हैं।

काम एक संस्थाका भी ठीक २ नहीं हो सकता है। सबोंमें दस २ बीस २ छात्र या अपाहिज मनुष्य दिन पूरे करते रहते हैं, कर्मचारी पेट भरते रहते हैं। आज भी जैन समाजके सब प्रान्तोंमें कई ट्रष्ट-फंड चार लाख, छह लाख, व बीस लाख तकके मौजूद हैं, परन्तु सबकी शक्तिका बटवारा उपयुक्त प्रकारसे ही होता है। इस शताब्दीमें भी कोई एक शिक्षा संस्था अपनी ऐसी नहीं है जिसका कैपिटल (मूलधन) १०-१२ लाखका तथा ६-७ लाखका भी हो और जिसमें पाँच ५ हजार रु० मासिक व्यय किया जाता हो, इसीसे उच्च कोटिकी शिक्षाका प्रचार भी नहीं होता है।

अब हमलोगोंको अपने दानका ढंग बदल देना चाहिये, गुड़ियोंका खेल छोड़कर और "अपनी २ ढपली और अपना २ राग" इस कहावतको मिटाकर वास्तविक शिक्षा स्थान स्थापित करने चाहिये।

जैसे कि आर्य समाजियोंके महाविद्यालय हैं व अन्य अन्य जातियोंकी बड़ी बड़ी संस्थाएँ हैं। तभी अज्ञान मिटेगा। कितने खेदका विषय है कि आपके यहां कोई स्त्री अनाथालय नहीं है, न कोई शिक्षा बोर्ड ही है।

समाजकी अनाथ बालिकाएँ जैनेतर लोगोंके यहां पाली जाती हैं, जिससे उनके संस्कार बिगड़ जाते हैं। न कोई अच्छा स्त्री चिकित्सालय है, न महाविद्यालय ही है, जो कुछ श्राविकाश्रम व कन्याशालाएं हैं उनमें भी सौ से अधिक विद्यार्थी नहीं हैं, दस कक्षाओंसे अधिक शिक्षा नहीं दी जाती है, इस पर भी धनी-मानी लोग अपनी सन्तानको इन स्थानोंमें नहीं भेजते हैं। बेचारे गरीब

मनुष्य अपना निर्वाह करनेके लिये संस्थाओंमें आ जाते हैं। बस फल भी वैसा ही नितान्त लघु निकलता है। बहिनो! अब कुछ आगे बढ़ो २५ वर्षका मनुष्य पूरी यौवनावस्थामें गिना जाता है, परिषद्को भी काफी समय हो गया है इसके द्वारा अपनी संस्थाओं को सजीव बना डालो उनमें धन और शक्ति लगाकर जैनेतर संस्थाओंका मुकावला लो। हृदयकी संकीर्णता को निकाल दो, आत्मबल और आत्माभिमानको जीवित करो। ऐसी शिक्षा संस्थाएँ खोल दो जिनके द्वारा अन्तर्चक्षुओं को खोलनेवाली शिक्षाका विकास हो। शिक्षा एक अस्पष्ट प्रचलित शब्द है, इसका यथार्थ भाव न समझने से अर्थका अनर्थ भी हो सकता है। अतएव केवल ऊपरी दिखावे में न पड़कर अपने मध्य में घुसी हुई अविद्यावस्था का नाश करो। स्त्रियोंमें अनिवार्य रूपसे शिक्षाका प्रचार होगा, तभी यह दशा सुधरेगी। अपने अधिकारोंके प्राप्त करने में तनिक भी मत डरो। भयभीत होना व आलसी बने रहना जैन धर्मका सिद्धान्त नहीं है। यह तो आत्माकी शक्तियोंका प्रतिक्षण विकास चाहता है। गृहस्थ स्त्री हो या पुरुष उसको अपनी दाक्षिण्यता इन्हीं अच्छे कामोंमें दिखाना चाहिये।

वर्तमानमें समानाधिकार पानेकी आवाज स्त्रीमंडलमें सुनी जाती है, परन्तु गरजने से बरसना अच्छा होता है। तात्पर्य भी उसीसे निकलता है, अतएव शुभ कामोंमें अपना अधिकार जमाओ जिस प्रकार इन्द्रके साथ शचीने भी श्रीजिन-कल्याणकोंमें भाग लिया था। अपनेको केवल पुरुषोंकी भोग्य सामग्री ही मत समझो, स्वतंत्रता भी अच्छे कार्योंके लिये ही प्राप्त करो। यह क्या स्वतं-

त्रता है ? कि तुमको सिनेमामें साथ चलने की आज्ञा मिल जाती है, बिदेशोंकी सैर भी करा दी जाती है, रेशमी साड़ी और पिन, पाऊडर भी बढ़िया से बढ़िया आ जाते हैं। परंतु यदि किसी तीर्थ-यात्राका नाम लो व कोई दान-पुण्य करना चाहो तो पतिदेवकी दृष्टि उग्र हो जाती है, त्योरियां बदल जाती हैं। यह तो बासना की तृप्तिमात्र है। न शुद्ध प्रीति है, न प्रतीति है। बहिनो ! संसार भोग एक होने पर भी आत्म भोग सदैव पृथक् २ ही रहेगा। अतएव बासनामें लिप्त होकर अपने कर्त्तव्य से च्युत न होना चाहिये। पतिदेवका तुम पर सर्वाधिकार अवश्य है स्त्री पतिकी दासी है, परंतु अपनी सत्ता खोकर नहीं वरन् रखकर ही है। अपने पतिको कुमार्ग से रोकने का और उसको सद्गृहस्थ बनाने का स्त्रीको पूर्ण अधिकार है जैसा कि चेलना सती को था।

वर्तमानकी डरपोक महिलाएँ शरणागत हो जाती हैं, पुरुषोंके मन बहलावके लिये अपनी समस्त शुद्धता छोड़ बैठती हैं, अपना धर्म, अपनी रीति-रिवाज सब कुछ छोड़कर उसी रंगमें नाचने लगती हैं। अखाद्य चीजें खाती हैं और न करने योग्य काम करती हैं यह अधिकार पानेका मार्ग नहीं है यह तो दासत्वको बलिष्ठ बनानेवाला ही है। कहीं ऐसे बुजदिलोंको भी अधिकार, मान और गौरव प्राप्त होते हैं, कदापि नहीं।

बहिनो ! अपनेको योग्य बनाओ; विद्यावती, बलवती, हेयोपादेय ज्ञान विचक्षणा बनो, तब कुल संसार तुम्हारे हाथमें ही रखा समझना चाहिये, तुम्हीं गृहदेवी हो, सब कार्योंको उत्पन्न

और सम्पन्न करनेवाली हो, तुम्हारी जैसी २ योग्यता होगी इस देशके भाग्यका वैसा २ ही निर्माण होता जायगा।

घर २ में कलह बिसम्वाद होना, माता-पुत्रमें वैमनस्य होना, सास-बहूमें विरोध होना हमलोगोंकी अयोग्यताको भली भांति दिखा रहा है। पति-पत्निमें अनबन रहना, पत्निको वियोगके दुःख सहना, पुरुषोंका व्यभिचारी होना इत्यादि बातें स्त्रियोंके कष्टको स्पष्ट कर रही हैं। अतएव निद्रा छोड़ो, मूर्खत्वको हटा दो, चक्षु खोलो, वस्त्राभूषणोंके व्यर्थ व्ययको रोको और उसी धनको सन्मार्गमें— आत्मोद्धारमें खर्च करो। अपनी शक्तियोंको व्यर्थके कामोंमें न लगाकर संचय करो, और इस धनसे व बलसे मनुष्य बनो।

देखो दयाल बाग आगरेमें एक राधास्वामी लोगोंकी संस्था है जो कि केवल एक संस्था है, परन्तु उसका प्रचार समस्त भारतवर्षमें किया जाता है। उसमें १७ सौके लगभग कर्मचारी हैं। पाठशालासे लेकर कॉलेज तक है, शिल्प इतना है कि लाखोंका माल बिकता है। स्त्री पुरुष सबके लिये अपनी धार्मिक शिक्षा सहित पढ़नेका प्रबन्ध है। धार्मिक प्रार्थनाके समय लगभग चार पाँच हजार मनुष्य मिलकर प्रार्थना करते हैं।

जैनेतर लोगोंमें कितनी ही स्त्रियां विदुषी, वक्ता, लेखिका, कवियत्री और पंडिता हैं। राज्य कार्यमें, देश-कार्यमें, और अपने धर्मके प्रचारमें भाग लेती हैं। आपमें इन बातोंकी भारी कमी है। हां पूर्वापेक्षा कुछ स्त्रियोंमें जागृति अवश्य हो गई है। उनका मैं हृदयसे स्वागत करती हूँ जैसे कि कई महिलाएं तीर्थ परीक्षामें उत्तीर्ण हुई हैं, कई न्यायमें भी उत्तीर्ण हुई हैं व राज्य कार्यमें भी

सम्मानित हैं। जैसे कि श्रीमती लेखवती जैन एम. एल. सी. इत्यादि किन्हीं महिलाओंने देशके कामोंमें नाम पाया है। परन्तु इतने पर ही हमें सन्तुष्ट न हो जाना चाहिये। क्योंकि व्यक्तिगत चमत्कारसे समाज भरका कल्याण नहीं हो सकता है। वरन् बड़ी प्रौढ़ संस्थाओंके स्थापनसे काम हो सकता है। तभी हमारी कुरीतियां विदा हो सकती हैं।

और यह कार्य धनी-मानी तथा विद्वान् लोगोंका ध्यान इधर पूर्ण रूपसे आकृष्ट होगा तभी हो सकता है।

सब लोग पृथक् २ शक्ति और द्रव्यको न लगाकर व ख्याति, लाभ, पूजादिके भावोंको न बढ़ाकर सद्विचारोंसे, भव्य भावनासे अपने धनको और श्रमको समष्टि रूपसे व्यय करना सीखेंगे तभी यथेष्ट लाभ होगा।

तभी सद्विद्याका और सदाचरणका लाभ भी होना संभव होगा अन्यथा अयोग्य गुरु व कृपण दातार और वैसे ही शिष्य भी उत्पन्न होते रहेंगे।

हमको ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि समाजकी एक भी महिला अशिक्षिता न रह जाय। तथा सौ-पचास स्त्रियां प्रतिवर्ष पंडिता बनकर निकला करें।

इसके लिये आपको संस्कृत विद्याको अपनाना पड़ेगा उसके न्याय, व्याकरण, और साहित्यका भली भांति मनन करना होगा। वर्तमान युगमें स्त्रियोंको भी इंग्लिश आदि अन्य विद्याएं ही अच्छी लगती हैं, संस्कृत पढ़नेसे वे भागती हैं परन्तु यह ठीक नहीं है। यद्यपि अनेक विद्याओंमें पारंगत होना बहुत अच्छी बात है परन्तु

दियातले अंधेरा भी न होना चाहिये हम योरोपका इतिहास जान लें उनका लिटरेचर पढ़ लें उनकी संस्कृतिसे और उनकी क्रिश्चिनिटीसे परिचित हो जांय परन्तु हम अपना इतिहास न जानें व अपनी धार्मिक फिलासफी न जानें तथा अपनी भाषा भी न जानें यह महामूर्खता है और केवल दूसरोंके टुकड़े तोड़ना है, तथा दूसरोंके पैरों पर चलना है। भारतवर्षमें कई राज्य हो चुके हैं हमलोग सबकी भाषा सबके वेश-भूषा पर कहां तक मरते रहेंगे। यवनोंके जमानेमें फारसी और अर्बीमें सिर मारनेवालोंकी इस समय कुछ भी कदर नहीं है॥

यवन धर्मको ग्रहण करने वालोंकी भी दुर्दशा है अब उन्हें जहां तहां शुद्ध किया जाता है। वास्तवमें अपनी विद्या ही कार्यकारी होती है, अतएव हमलोगोंको देववाणी संस्कृतका अभ्यास अवश्य बढ़ाना चाहिये। और उसी बलसे संस्कृत प्राकृत उच्चकोटिके धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने चाहिये। तभी सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति होगी।

तभी संसारसे तरना होगा क्योंकि "ज्ञान बिना करनी दुखदायी" यह प्रसिद्ध है। मनुष्य ज्ञानसे ही इह और पर दोनों लोकोंमें विजय प्राप्त कर सकता है। नीतिकारके वचन हैं "ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः" ज्ञानवती बनकर कुरीतियोंको उखाड़ कर फेंक देना चाहिये। हमारा समस्त जीवन तितर बितर हो रहा है। बहु संख्यक कुरीतियोंने अड्डे जमा लिये हैं उनमेंसे कुछ तो बहुत ही हानिकर हैं। छोटे बच्चोंका विवाह कर देना, इसके लिये लोग बड़े उतावले हो जाते हैं। शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध न करके विवाहका

प्रबन्ध ही किया जाता है। जो कि बाल्यावस्थामें स्वास्थ्य और बुद्धि दोनोंका घातक होता है, जैन ग्रन्थोंमें योग्य वय होने पर ही विवाह होते थे ऐसे हजारों उदाहरण मिलते हैं जबकि बालविवाह का कोई दृष्टान्त नहीं मिलता है।

इसी प्रकार धन लेकर बालिकाओंको बुड्ढोंके गलेमें बांध देना भी महापाप है। इन कुरीतियों पर प्रत्येक सभामें कहा जाता है, परन्तु बहिनें हठवादी बनकर नियम तोड़ डालती हैं।

इसी प्रकार दहेज देने व लेनेकी लालसा भी बहुत कष्टकर है इस देनेके आतंकमे कन्याएं माता पिताके लिये भारस्वरूप हो जाती हैं। उनका लालन पालन उचित रीतिने नहीं होता है क्योंकि उन्हें तो एक विवाहकी डिगरी सामने दीख रही है उसी ऋणकी चिन्तामें वे व्यस्त रहते हैं। अतएव इस लोभ और दिखावटको छोड़ देना चाहिये। बड़ी सादगीसे स्वल्प व्यय करके विवाह संस्कार कराना चाहिये।

इन दोनों प्रथाओंसे भी खोटी प्रथा विधवा विवाहकी पीछाकर रही है, इससे शीलका नाश होकर कुलाचार और उच्चवर्णके व्यवहारका भी नाश हो रहा है। सन्तानकी दुर्गति हो रही हैं, माता जो कि पिताके अभावमें भी पाल लेती है। वही जब दूसरी जगह चली जाय तब बेचारे बालक तो अनाथ हो ही जाते हैं, उनका जन्म तो बिगड़ ही जाता है। इस प्रकार अपने पतनके साथ २ सन्तानका पतन भी होता है। पाश्चात्य शिक्षा प्रेमियोंको वैधव्य जीवन हटा देनेमें सुख साम्राज्य दीखता है, परन्तु यह भूल है दुःख तो असाताके घटने पर घट सकता है अन्यथा किसी न

किसी रूपमें होता ही रहेगा। पुत्र वियोग, पति वियोग, बहुत पापके उदयसे होता है उसको यहीं समतासे सह लेना चाहिये, तभी भविष्यमें पुनः ऐसा बन्ध न होगा, जैन धर्ममें वैराग्य भावोंकी सत्ता सम्यक्त्वी जीवको सदा बनी रहती है, ऐसा अटल नियम बताया है। कहिये अन्याय सेवन करनेवालेके वैराग्य कहां रहेगा ? कभी नहीं। अतएव सम्यक्त्वी आत्माको ऐसे घृणित विषय कषायोंके फंदेमें न आना चाहिये, केवल स्वयं ही नहीं, वरन् समाज-भरकी इस आवाजको बन्द करनेका अत्यधिक प्रयत्न करना चाहिये। जिससे कि महिलाओंके शील संयमकी रक्षा हो सकेगी व उच्च जातियोंका मान बचा रहेगा। और घोरपतनसे रक्षा होगी। विधवा स्त्रियोंको सब झंझट हटाकर परोपकारी जीवन व्यतीत करना चाहिये सादे वस्त्र पहिनकर व सादा पवित्र भोजन करना चाहिये।

बहुत सी महिलाएं अपने धनका उपयोग करनेके लिये लड़का गोद ले लेती हैं। परन्तु अन्तमें इस क्रियासे दुःख ही उठाती हैं।

दान पुण्य करनेका सुअवसर उनके हाथोंसे चला जाता है और वे दूसरोंके मुहताज हो जाती हैं। नियमसे अपनी सम्पत्ति परोपकारमें ऐसी महिलाओंको लगा देना चाहिये।

विदेशोंमें दत्तक लेने देनेकी प्रथा नहीं हैं। इसीसे वहां उपकारमें बहुत सा व्यय होता रहता है। देखिये अमेरिकन संस्थाएं भारतवर्षके कोने कोनेमें खुल गई हैं। लाखों यत्नोंसे बाईबिलका प्रचार किया जाता है। क्या हमलोग अपने धर्म-

प्रचार पर न्योछावर नहीं हो सकती हैं। यदि हमारी शिक्षा ठीक होगी तो अवश्य ही हमलोग भी सबकुछ कर सकती हैं।

सामर्थ्यवान् धनसे और साधारण मनुष्य अपने श्रमसे सफलता पा सकता है। मिसनरी स्त्रियां गाँवोंके घर २ में जाकर उन अनपढ़ स्त्रियोंकी खुशामद करके लाख अनुनय विनय करके पढ़ा देती हैं और उन्हें अपना धर्म सिखा देती हैं। देखो उनका धर्म प्रेम उनकी ड्यूटी कैसी है ? क्या हमारे भी ऐसा वात्सल्य है ? कहां है ? हमलोग तो अपना उद्धार भी नहीं कर सकती हैं। धर्मका प्रचार करना अनादि कालसे चला आया है। एक ही तीर्थंकर महाराज इच्छाके बिना भी नगर २ में विहार कर धर्मका मार्ग बताते हैं तब हम गृहस्थोंको तो पाप क्षय करनेके लिये प्रतिदिन शक्त्यानुसार प्रचार करना चाहिये और इसके लिये उपदेशिका महिलाएँ तैयार होना चाहिये। खेदका विषय है कि इस विषय की कमी सबसे अधिक पायी जाती है, परिषद्ने कई बार उपदेशिका भ्रमण कराना प्रारंभ किया था परन्तु योग्य व्याख्यात्रीके बिना इस कामको बन्द कर देना पड़ा। मुझे आशा है कि बहिनें उत्साह और साहसको बढ़ाकर इस त्रुटिको पूरा कर देंगी।

उपदेशका अचिन्त्य प्रभाव होता है, सब क्रियाएं इसके सामने नतमस्तक हो जाती हैं, सुनते २ मृत प्रायः व्यक्तिको भी कुछ समझ आ जाती है, उसकी रुचि बदल जाती है।

अतएव सज्ञानका प्रचार करनेके लिये हमको सब प्रान्तोंमें उपदेशिका घुमानी चाहिये, जो कि गाँव २ में जाकर श्राविकाओंको जीवन सुधारनेके मार्ग बताएँ और उनको गृह देवियां बनाएँ।

किसी सभाकी ओर से कोई उपदेशक भ्रमण भी करते हैं, तो केवल चन्दा करनेके लिये ही। बस इस क्रियासे जनता उनका आदर नहीं करती व उनकी बातें नहीं सुनती है। उपदेशिका गणोंके व्ययका भार कोई सभा या समिति या भा० दि० जैन महिला-परिषद् उठावे और वे निष्पक्ष होकर धर्मोपदेश करें तभी प्रभाव पड़ सकता है। परिषद् इस कामको पुनः जागृत करेगी परन्तु उसके पास काम करनेके लिये कोष पूरा करना आप लोगोंका काम है।

इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिये ही १३ बर्षोंसे "महिलादर्श" का सम्पादन हो रहा है और इस पत्र द्वारा आप लोग यथासाध्य उपदेश घर बैठे सुन रही हैं, परन्तु इसकी भी बाल्यावस्था बीत चुकी अब उन्नतावस्था आनी चाहिये और वह भी आप लोगोंके ही प्रेमाधीन है, इसकी आर्थिक स्थिति सुधारना, ग्राहक संख्या बढ़ाना, विद्वत्तापूर्ण लेखोंको भेजना इत्यादि काम करनेसे पत्र अधिक सेवायोग्य हो सकता है। आशा है विदुषी बहनें इधर अवश्य ध्यान देंगी।

ज्ञानके जितने भी साधन हैं वे हमारे लिये सुखदाई हैं और उनको अधिकाधिक मिलानेसे ही हमारी अनादि अविद्याका नाश हो सकता है, अन्यथा नहीं हो। इस समय तो सांसारिक पदार्थ हमको विपरीत दीखते हैं व उनका फल भी विपरीत ही हमलोग भोग रही हैं।

यथा मद्यपानस्य पकात् बुद्धिर्विमुह्यति।
श्वेतशंखादियद्वस्तु पीतं पश्यति विभ्रमात्॥

अर्थात् जिस प्रकार मदिरा पीनेवालेकी बुद्धि नशा चढ़ने पर विपरीत हो जाती है और सफेद शंख आदि भी इसको पीले दीखते हैं उसी प्रकार मिथ्यात्वादि कर्मोंका अनुभव करनेसे संसारी जीवोंको भी उल्टा मार्ग ही दीखता है। जिस धन, मन और तनसे हमलोग धर्म सेवन करके पार उतर सकते हैं, अपना कल्याण कर सकते हैं, उन्हीं चीजोंसे अज्ञानी होनेके कारण अशुभ कर्मबन्ध करके दुर्गतिको जाते हैं।

अतएव अपनी बुद्धिको सम्यक् बनाना अत्यावश्यक है, इसके लिये बहिनोंको ज्ञानवती बनकर स्वाध्याय करना चाहिये। नित्य नियमसे जिनवाणीको बांचनेवाली महिलाएँ अन्तमें बड़ी विचक्षण बुद्धिवाली बन जाती हैं। उनके पास ऐसे अमूल्य रत्नोंका भंडार भर जाता है कि जो इन जड़ जवाहिरातोंसे असंख्य गुणें चमकीले होते हैं।

वर्तमान समयमें स्वाध्यायकी बड़ी कमी हो गई है पुरुषवर्ग ज्ञानी होने पर भी इधर नहीं आते हैं। भौतिक विज्ञानमें ही अपना अन्त कर देते हैं। जिससे वह शांति उनके जीवनमें नहीं आ पाती जैसी कि ज्ञानी मनुष्योंको मिलनी चाहिये।

तोभी वर्तमान समय स्त्रियोंकी उन्नतिका ही समझना चाहिये। जब कि स्थान २ पर कुछ त्यागी महिलाएँ नजर आने लगी हैं, श्रीआचार्यवर्य शांतिसागरजीकी तपस्याको देखकर कई बहिनें क्षुल्लिका, कई अर्जिकाके व्रतोंका पालन करती हैं और बड़ी उत्कृष्ट तपस्या करनेमें रत रहती हैं, इसी प्रकार और भी कई यथाशक्ति प्रतिमाओंके अनुसार धर्म सेवन करने लगी हैं, परन्तु

इन त्यागी महाशयाओंसे मेरी यही प्रार्थना है कि केवल आप लोग अपना उद्धार ही न करिये, अपने पूर्व ऋषियोंके जीवन पर लक्ष्य रखकर परोपकार भी अवश्य करती रहिये। मैं पहिले ही निवेदन कर चुकी हूँ, कि केवली भी उपकार करते थे। तब हमको क्यों चुप बैठ जाना चाहिये। किन्तु सामायिक, स्वाध्यायसे बचे समयको उपदेश देनेमें लगाना चाहिये। व पुस्तक लिखनेमें, लेख लिखनेमें, लगाना चाहिये तथा बुद्धि विहीन मनुष्योंको बुद्धिदान देनेमें लगाना चाहिये।

प्रत्येक गृहस्थका यह सबसे बड़ा अन्तिम कर्तव्य है कि वह अपना अन्तिम जीवन त्यागमय बिताए। अन्य मतावलम्बी भी इसीकी प्रशंसा करते हैं। "वार्धिके मुनिवृत्तीनां अन्ते योगे तनुत्यजाम्।"

कोई कैसा ही बलवान और सम्पत्तिशाली क्यों न हो अन्तमें त्यागी बने बिना शांति सुखका लाभ नहीं हो सकता है, न समाधि-मरण ही कर सकता है अतएव प्रत्येक महिलाका कर्तव्य होना चाहिये कि वह यौवन की समाप्ति होते २ ही अपनी समस्त तृष्णाओंकी समाप्ति भी कर डालें और घरका भार पुत्र या कुटुम्ब पर छोड़कर स्वयं आत्मकल्याणके साथ २ परोपकार करती रहें। परन्तु यह भी स्मरण रहना चाहिये कि यह काम बुढ़ापे पर न छोड़ दिया जाय। कलिकालका बुढ़ापा तो तृष्णाको बढ़ानेवाला होता है, अतएव उसके पहले ही आत्महित करणीय है। यह मनुष्यभव बड़ी कठिनतासे मिला है, इससे अब नीचे न गिरना चाहिये, इसके लिये रत्नत्रय जो आत्माका स्वस्वभाव है उसमें

जितना २ रमण किया जायगा उतना २ ही आत्मा उन्नत होता जायगा। मिथ्यात्वभावके त्यागसे सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होती है। सम्यक्त्वीका ज्ञान ही सम्यग्ज्ञान है और पापोंका त्याग करना चारित्र है। खेदका विषय है कि बहिनें, स्वस्वभावमें बड़ी शिथिल दीखती हैं।

संसारका कारण मिथ्यात्व इसको गृहीत अगृहीत दोनों प्रकार मे सेवन करती हैं। बहिनो! जबतक श्रद्धा ठीक न होगी मोक्षमार्ग में एक कदम भी न बढ़ेगा, अतएव कुदेवादिकी बासना छोड़कर श्री अरहंत देव, जिनवाणी व निर्ग्रन्थ गुरुओंमें सत्य विश्वास, अगाढ़ भक्ति लाओ तभी आत्महित होगा, ज्ञानवती बनकर सत्यदेवका स्वरूप समझो, तब आपके पूजन-स्तवन सब सार्थक होंगे क्योंकि "यस्मात् क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः" यह आचार्योंके बचन हैं।

परन्तु केवल भावोंसे भी काम नहीं चलेगा, सम्यक्त्वी होकर चरित्रवान भी होना अत्यावश्यक है। सकल चरित्र धारण करनेकी शक्ति न होने पर देश चरित्र तो अवश्य ही धारण करना चाहिये। अर्थात् हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील सेवन और परिग्रहकी बेमर्यादा तृष्णा इन पाँच बातोंको तो अवश्य ही छोड़ देना चाहिये। पहलेके गृहस्थ अबसे अधिक धनी व सन्तानवाले होते थे परन्तु व्रतोंको धारण करनेमें हिचकिचाते नहीं थे अब तो धन, जन सभी अति परिमित रह गये हैं। ऐसी अवस्थामें मोहवश चारित्र धारण न करना बड़ी गलती है। वर्तमानमें मिथ्यात्व, अभक्ष्य और अन्याय तीनोंका जोर बढ़ गया है। बड़े २ जैन लोग भी रात्रि

भोजन करते नहीं डरते हैं। अवश्य खाते रहते हैं। यह बड़ी भूल है इसमें कोई बड़प्पन नहीं है। सब लोगोंमें और सब देशोंमें त्यागको ही बड़ा महान् माना है। अतः उसीके द्वारा हमको बड़ा बनना चाहिये। हिंसादिके त्यागीको सप्तशील धारण करने चाहिये जो कि स्वर्गके सुख दिखाकर परम्परा मोक्ष प्राप्त कराते हैं। तथा महिलाओंको अपने भोजन बनानेकी सब क्रियाऐं दया भावसे मर्यादा पूर्वक करनी चाहिये, शुद्ध अन्नसे ही बुद्धि भी शुद्ध होगी।

अन्तमें मुझे यहांकी व्यवस्था देखकर जो हर्ष होता है उसे कहे बिना नहीं रह सकती हूं। वास्तवमें इस वार महिला-परिषद्को बड़ा सुन्दर सुयोग्य क्षेत्र प्राप्त हुआ है।

यहांकी सुज्ञ विज्ञ महिलाएं हैं। ये लोग पर्दा नहीं करती हैं। यह बहुत अच्छी बात है। उत्तर भारतमें यवनोंके समयसे जो पर्दा चल गया है। वह अभी भी अपना आतंक जहां तहां जमाए हुए हैं। मारवाड़में तो स्त्रियाँमें भी अन्य स्त्रियाँ मुंह ढांके रहती हैं, यह बड़ी घातक प्रथा है। मुंह ढांकनेसे न ईर्यापथ शुद्धि होती है, न कोई और चीज दीखती है न स्वास्थ्य ठीक रहता है। अतः दक्षिणकी भांति ही कुल भारतकी बहिनोंको पर्दा हटाकर सच्चा शील रूपी पर्दा करना चाहिये। मुख ढांकना व्यर्थ है।

यहांकी जैन बहिनोंकी छत्र-छायामें मुझे पूर्ण विश्वास है कि महिला-परिषद् अपने सब विभागोंमें उन्नति करेगी तथा उपदेशकीय विभागको तो अवश्य ही चालू करेगी।

जिस प्रकार सेठ रावजी साहिबकी पचासवें बर्षकी जयन्ति बड़े हर्ष और धार्मिक कार्योंको करके मनाई जा रही है उसी प्रकार

परिषद् भी अपने सेवा कार्यमें जय प्राप्त करेगी। श्री १००८ देवाधिदेव महावीर स्वामीका जो यह पंचकल्याणक महोत्सव हो रहा है इस महत् पुण्यवर्धक कार्यको देखकर ऐसे सातिशय पुण्यका हमको लाभ करना चाहिये। जिसके उदयसे आत्मबल बढ़ जाय और महिला समाज बलवती, बुद्धिवती बनकर अपनी दशाका सुधार करनेमें समर्थ हो जाय।

"नमो नमः सत्वहितंकराय,
वीराय भव्याम्बुजभास्कराय।
"अनन्तलोकाय, सुरार्चिताय,
देवाधिदेवाय नमो जिनाय॥"

अभिनन्दन-पत्र

बाईजी केवल लेखिका, व्याख्यातृ, पाठिका, विदुषी ही नहीं हैं, किन्तु एक अच्छी समाज-सेविका भी हैं। समाज-सेवाकी लगन आपको छोटी अवस्थासे ही है और वह उत्तरोत्तर वृद्धिको प्राप्त हुई है। सभा सोसाइटियोंमें व्याख्यान देने, उत्सवोंमें सम्मिलित होने, कन्या पाठशालाओंके संस्थापित करनेके समाजके भारी अनुरोधको आपने कभी नहीं टाला; किन्तु वहां समय पर पहुँच कर समाज-सेवाका यथेष्ट परिचय दिया है। समाजने भी आपके इस उपकारको भुलाया नहीं है, उसका सदा आदर और सम्मान किया है और अभिनन्दन-पत्र आदिके रूपमें अपनी कृतज्ञताका परिचय भी दिया है। आपको कितने ही स्थानोंसे अनेक सम्मान-पत्र प्राप्त हुए हैं, जिससे स्पष्ट है कि स्त्री-समाजमें आपका क्या स्थान है ? और उसमें आपके प्रति कितनी भक्ति तथा कृतज्ञता है और समाज-सेविकाओंसे अनुराग है। नागपुर, सिवनी, मूड़बिद्री और सोलापुर आदि स्थानोंसे उपलब्ध सभी अभिनन्दन-पत्र नीचे दिये जाते हैं, जिससे पाठक उनके व्यक्तित्वसे अच्छी तरह परिचित हो सकें।

श्रीमती विदुषी रत्न पंडिता चंदाबाईजीके कर कमलोंमें।

विदुषी रत्न ! यद्यपि आपके गुणोंकी माला अगणनीय है तथापि कुछ यहां ग्रथितकी जाती है।

१—आपने वृन्दावन मथुरा निवासी अग्रवाल वंशज गर्गगोत्री श्रीयुत आनरेबल बाबू नारायणदासजी बी० ए० जमींदार व रईस

वैष्णव धर्मानुयायीकी सुपुत्री होकर भी आरा (बिहार) निवासी अग्रवालवंशज जिनवाणीभक्त बाबू देवकुमारजी जमींदार व रईसके लघुभ्राता धर्मकुमारजीके साथ विवाहित होने पर जैन धर्मको समझकर श्रद्धापूर्वक ग्रहण किया व रत्नत्रय धर्ममें यथोचित उन्नति की। यह आपकी निर्मल बुद्धिका नमूना है।

२—पूर्व अशुभ कर्मके उदयसे आपको अपनी १२ वर्षकी अल्पायुमें संवत् १९५८ में जब स्वपतिकी आयु १९ वर्षकी थी व वे कॉलेजके छात्र थे—बालविधवा होना पड़ा। उस समय ज्ञानके बलसे आपने उस वियोगको शान्तिसे सहन किया।

३—वैधव्य अवस्थामें आपने विद्योन्नतिमें विशेष ध्यान लगाया और क्रम-क्रमसे क्वीन्स कॉलेज काशीकी प्रथमा व व्याकरण मध्यमाके चारों खंडोंमें उत्तीर्णता प्राप्त करके व जैन शास्त्रोंका सूक्ष्मतासे अध्ययन करके तत्त्व-ज्ञानकी निर्मलता पाकर सर्व दिगंबर जैन समाजमें प्रथम ही संस्कृत पंडिता पदकी योग्यता प्राप्त कर ली। एवं संस्कृत कार्यालय अयोध्याने भी आपकी विद्वत्ता पर मुग्ध होकर आपको 'साहित्य सूरि' की पदवी प्रदान की।

४—धनवती होती हुई भी आपने इन्द्रिय विलासको तृणवत् समझ कर त्याग दिया व श्राविकाके उत्तम नियम-शीलव्रत पालते हुए अपना जीवन परोपकारमें लगाया, स्त्री-समाजके उद्धारार्थ कमर कसी और स्त्रियोपयोगी उपदेशरत्नमाला, सौभाग्यरत्नमाला, निबन्धरत्नमाला, आदर्श निबंध, बालिका विनय, व कहानी संग्रह आदि पुस्तकें लिखीं व 'जैन महिलादर्श' मासिक पत्रका सम्पादकत्व स्वीकार कर उसे ऐसे उत्तम प्रकारसे चलाया कि वह अब ११ वें

वर्षमें निकल रहा है व जैन स्त्री-समाजको परमोपयोगी उपदेशोंसे लाभ पहुँचा रहा है। आपने यत्र तत्र भ्रमण करके अपने उपदेशोंसे असीम लाभ पहुँचाया है, व स्थान २ पर कन्याशालाएँ खुलवाईं तथा आरा नगरमें एक कन्या पाठशालाका स्वयं संचालन कर रही हैं।

५—आपने अपने पतिके कुटुम्बकी दानशीलताका अनुकरण किया और जैसे इस वंशमें बाबू देवकुमारजीके दादा पंडित प्रभुदासजीने लाखों रुपये व्ययकर बनारसके भदैनी घाट पर विशाल श्रीसुपार्श्वनाथका मन्दिर, घाट व धर्मशाला व आरामें जिनमन्दिर बनवा कर महान् पुण्य सम्पादन किया था। व बाबू देवकुमारजीने 'जैन-सिद्धान्त-भवन' स्थापित करके उसके लिये एक ग्राम कई हजार वार्षिक आमदका धर्मार्थ अर्पण किया था, वैसे ही श्रीमतीजीने अपने भतीजे श्रीयुत निर्मलकुमार चक्रेश्वर-कुमारकी संमतिसे धनुपुरामें एक जैन बालिकाश्रम स्त्री-समाजके कल्याणार्थ वैशाख सुदी १२ तदनुसार ता० १९ मई १९२१ को स्थापित करके कितनी ही विधवा बहनों व कन्याओंको विदुषी बना दिया है। जिनमें से कई सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, सिवनी, नागपूर, आदिमें अध्यापिकाका काम कर रही हैं। इस संस्थामें श्रीमतीजीने १००००) ध्रौव्य-फंडमें व अब तक १२०००) चालू फंडमें खर्च किये हैं। व श्रीयुत बाबू निर्मलकुमार व अन्य कुटुम्बीजनोंने ४८०००) ध्रौव्य-फंडमें व ५०००) चालू फंडमें दिये हैं। तथा धनुपुराका मकान व बाग भी विश्रामको अर्पण किया है। जो कि सहस्रोंकी विशाल इमारत है।

६—आपको जैन-वाणीकी ऐसी पक्की श्रद्धा है कि आपके उपदेशसे आपकी एक छोटी बहिन श्रीमती केशरबाई ३८ वर्ष की, जिनको दो पुत्र भी हैं व दूसरी लघु बहिन व्रजबालादेवी अंडर ग्रेजुएट ३४ वर्ष की, जिनको एक पुत्री है, भले प्रकार जैन धर्मको पालती हैं। और अपनी संततिसे भी पलवाती हैं। व्रजबालादेवीजी तो आराके आश्रमकी सेवा भी कर रही हैं।

७—आप चिरायु रहें और आश्रमकी ऐसी उन्नति करें कि सैकड़ों छात्राएँ छात्रालयमें रहकर लाभ उठावें। तथा आप अपने ज्ञानबलसे उत्तमोत्तम पुस्तकें लिखें व जैन समाजकी व सर्व भारतीय स्त्री-समाजकी भले प्रकार निःस्वार्थ भावसे सेवा करती रहें। यही हमारी मंगल कामना है।

आपके गुणोंसे मोहित
भा० दि० जैन महिला परिषद्की तरफ
से ब्र० धर्मचंद्रिका कंकूबाई
अ० भा० दि० जैन महिला-परिषद्की स्थायी प्रमुखा

नोट—भारतवर्षीय दिगंबर जैन महिला-परिषद्का १८ वाँ अधिवेशन मिती चैत्र शुक्ला ७ संवत् १९९९ इन्दौरमें श्रीमती सौ० सुभद्रादेवी धर्मपत्नी श्रीमान् सेठ नवलचन्दजी बड़वाहके सभापतित्वमें हुआ था। उसके प्रस्ताव नं० १२ के अनुसार यह मानपत्र अर्पण किया गया है।

श्रीमती विदुषीरत्न, साहित्यसूरि, पंडिता चंदाबाईजी सम्पादिका जैन महिलादर्शकी सेवामें दिगंबर जैन महिला-समाज नागपूरकी ओर से, सादर समर्पण:—

पूज्य बाईजी ! 'यस्य देवस्य गंतव्यः स देवो गृहमागतः' इस नीतिके अनुसार आपका दर्शन हमें लेना था। आज हम अपना सौभाग्य समझती हैं, जो कि अपना पुण्य दर्शन आपही दे रहीं हैं।

श्रीमतीजी ! आपकी कीर्तिसे अटकसे कटक तक, कलकत्तासे कन्याकुमारी तककी जैन समाज परिचित है। आज आपकी मूर्तिके दर्शनसे हम अपनेको धन्य समझती हैं।

पंडिताजी ! आपने समाजके प्रचलित कठिन परिस्थितिमें भी रहकर विद्याभ्यास करके महिला-समाजके सामने जो आदर्श उपस्थित किया है, वह चिरस्मरणीय है।

वंदनीय बाईजी ! आपने संस्कृत एवं हिन्दी भाषामें प्रौढ़ पाण्डित्य पाकर जैन महिला-समाजका मुखोज्वल किया है। अतः आपका आपके वंश ही को नहीं, किन्तु अखिल दिगंबर जैन समाजको गौरव तथा अभिमान है।

साहित्यसूरिजी ! आपने दीर्घ कालसे महिलादर्शका सम्पादन कर अखिल महिला-समाजमें अपूर्व जागृति की है तथा समाज भरमें 'महिलादर्श' को आदर्श मासिक पत्र बनाया है। इसका मुख्य श्रेय आपही को है। तथा आपने 'श्री जैन बालाविश्राम' की स्थापना कर कई सालसे सैकड़ों अबलाओंको सबला बनाया है। आपकी इस संस्थाको केवल जैन समाज ही नहीं इतर समाज भी आदर्श दृष्टिसे देखती है।

विदुषीरत्नजी ! आपके पांडित्यसे संतुष्ट होकर अयोध्या महाराजकी तरफसे 'साहित्य-सूरि' एवं 'दिगम्बर जैन महिला-परिषद्' की तरफसे 'विदुषी-रत्न' उपाधि मिली है। उसके लिये हम आपका अभिनंदन करती हैं।

पूज्य जननि! आपने 'उपदेशरत्नमाला' आदि कई रचनाओंके द्वारा अखिल दिगंबर जैन महिला-समाजमें ज्ञानका प्रसार किया, अतः 'आत्मा वै जायते पुत्री' इस नीतिके अनुसार आपकी आत्माके अंश हरएक दिगंबर जैन महिलाओंमें हैं। अतः 'अनपत्याप्यसंख्सापत्या' इस विरोधालंकारकी उक्ति आपमें घटती है। अतएव आप हमारी पूजनीय जननी हैं।

गुणाः पूजास्थानं गुणिषु नच लिंगं नच वयः' इस नीतिके अनुसार आपकी वयोमूर्त्यादिकी अपेक्षा न कर किन्तु कीर्तिसे, गुणोंसे मुग्ध होकर एवं भक्तिभावसे नम्र होकर हम सादर पूर्वक यह अभिनंदन पत्र समर्पण कर परमात्मासे प्रार्थना करती हैं कि आपको दीर्घायु देवें।

श्रीवीर संवत् २४५९, ज्येष्ठ शु० १५ ता० ८-६-१९३३	विनम्र दिगंबर जैन महिला-समाज नागपूर सिटी

साहित्यसूरि, विदुषीरत्न, जैन महिला-भूषण पण्डिता चन्दा-बाईजीके पवित्र करकमलोंमें।

श्रीमतीजी! यह परम सौभाग्य है, कि आज सिवनी नगरमें पधारकर आपने दर्शन देनेकी महती कृपा की है। आपके लोकोत्तर गुणोंने स्त्री-समाजके समक्ष अनुपम आदर्श उपस्थित किया है।

रमणी रत्न! वैधव्यकी दुःखमय दशाका जिस सुन्दर शैलीसे आपने स्व और पर कल्याणके निमित्त उपयोग किया है वह अन्य महिलाओंके लिये आदरणीय है।

देवीजी! विपुल सम्पत्ति शालिनी होते हुए भी आपका साधारण वेश-भूषा हृदयकी निर्मलताको प्रकाशित करता है एवं स्पष्ट रूपसे उद्घोषित करता है, कि नारी जातिका वास्तविक भूषण सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण नहीं हैं, किन्तु शीलरत्नका परिरक्षण है। आपकी साधुवृत्तिकी ओर यदि अन्य स्त्रीवर्ग विशेषतः विधवा बहनें लक्ष्य देकर अनुकरण करें तो उनका असीम कल्याण हो।

साहित्य-सूरिजी! जैनागमका श्रमपूर्वक अवगाहन कर आपने जो मर्मस्पर्शी शास्त्रज्ञान प्राप्त किया है उसका प्रतिबिम्ब आपकी ग्रन्थावली तथा आपके द्वारा सुसम्पादित पत्र 'जैन महिलादर्श' में स्पष्ट रूपसे मिलता है।

पण्डिताजी! जिस तत्परतासे आप अपनी तत्वावधानतामें अपनी प्रिय संस्था 'जैन बालाविश्राम' का संचालन कर नारी जातिको जैनतत्त्वज्ञानके साथमें सदाचारका सुमधुर पाठ सिखा रही हैं, वह अक्षय शान्ति प्रद है। आपकी इस यथार्थ धार्मिक

सेवाके उपलक्ष्यमें हम हार्दिक साधुवाद अर्पित करती हैं।

वीरांगने ! अखिल भारतीय जैन महिला-महासभाकी अभिनेत्रीके रूपमें आप समाजको सत्पथका प्रदर्शन करा रही हैं। तथा उसे विरोधाग्निसे बचाये हुए हैं।

यह आपकी कार्य कुशलता एवं दूरदर्शिताका परिचय कराती है।

हमारा विश्वास है कि यदि महिला-मंडली आपके चरित्र तथा उपदेशका परिपालन करने लगे तो प्रत्येक गृह शान्ति सुख एवं समृद्धि का आवासस्थल बन जावेगा।

इस प्रकार आपकी गुणावलीको देखकर हमारा हृदय श्रद्धा, भक्ति तथा प्रेमसे अवनत होता है। अतः हम आपकी अप्रतिम सेवाओंका हृदयसे अभिनन्दन करती हैं। एवं जिनेन्द्र देवसे प्रार्थना करती हैं कि आपको दीर्घ जीवनके साथ अपरिमित बल एवं सहायता प्राप्त हो जिससे आप म्रियमाण महिला-मण्डलका उद्धार कर सकें। और उन्हें समर्थ, सज्ञान, तथा सच्चरित्र बना सकें।

श्रीवीर निर्वाण- संवत् २४५९ मिती अषाढ़ कृष्णा २	आपके गुणोंमें अनुरक्त दिगंबर जन महिला-समाज सिवनी (मध्यप्रान्त)

श्रीमती विदुषीरत्न, साहित्यसूरि, पंडिता चन्दाबाईजी आराके कर-कमलोंमें, सादर समर्पित—मानपत्र

पूज्य भगिनि ! आपने महिला समाजके अभ्युत्थानके लिये दृढ़व्रत ले ऐसे २ महान उपयोगी कार्य किये हैं, जो वर्तमान महिला जगतके इतिहासमें चिरस्मरणीय रहेंगे।

महिलारत्न ! अखिल भारतीय महिला-परिषद्‌की उन्नतिके लिये आपने चोटी से एड़ी तक पसीना बहाया है। महिला-परिषद् आपकी सेवा को कभी नहीं भुला सकती।

महिलादर्श ! आपके अनेक समाजकीय कार्योंमें महिलादर्शके संपादिकाका कार्य भी एक उल्लेखनीय कार्य है आप वर्षोंसे उसका सम्पादन करती हुई अपने प्रखर लेखों द्वारा स्त्री-समाजमें जीवन संचार कर रही है। यह आपकी ही कृपाका फल है, कि आज महिलाओंमें इतनी लेखिका समाजमें देखने को मिलती हैं।

विद्याभिमानिनि ! आपने स्त्री-समाजको शिक्षित बनाया है जो कि समाजके लिये अत्यन्त उपयोगी है।

साधर्मिवत्सला ! आपको दक्षिणदेशकी बालिकाओंपर बड़ी श्रद्धा तथा अकथनीय बन्धु प्रेम रहता है। अतएव इसके मूर्ति स्वरूप आपके महिलाश्रममें इस देशकी कई बालिकाएँ विद्यारूपी धनको कमा रही हैं।

विशेष क्या ? महिला-समाजको आपसे गौरव है। आपने महिलाओंके लिये जीवनका आदर्श उपस्थित किया। आपकी आयुरारोग्यैश्वर्यादि सम्पत्ति वृद्धिगत होती हुई आप कीर्तिशालिनी बनें।

हमने आपके अनेक गुणोंसे प्रसन्न होकर यह सच्चे हृदयके दो शब्द आपकी सेवामें उपस्थित किये हैं आशा है आप उसे स्वीकार करेंगी।

वीर संवत् २४६१
ज्येष्ठ शुक्ला १५
श्रीवीरवाणी विलास,
जैनसिद्धान्त भवन।

आपका—
जैन महिला-समाज
मूडबिद्री

श्रीमती धर्मपरायणा, विदुषीरत्न, साहित्य-सूरि पंडिता चन्दाबाईजीकी सेवामें सादर समर्पित—सम्मानपत्र।

धर्मभगिनि ! आपकी धर्म निष्ठता, विद्याभिरुचि और विद्या-प्रचार आदि उत्तमोत्तम गुणोंको देखकर हमें अकथनीय संतोष उत्पन्न होता है। आपका चित्त सदा विद्योन्नति, देवपूजा, संघ-सेवा, तीर्थबन्दना आदि धार्मिक कार्योंमें सदा उत्सुक रहता है।

महिला-रत्न ! आपके सत्प्रयत्न से आराके "जैन-बालाविश्राम" की स्थापना हुई है। जो कि जैन समाजके अन्य महिलाश्रमों से सुयोग्य रीति से संस्कृत, हिन्दी वगैरह उच्च शिक्षणकी उन्नति करती हुई समाजमें अतीव प्रसिद्धि को प्राप्त हुई है। सो अत्यन्त प्रसन्नताकी बात है। इसके अलावा आपके संपादकत्वमें "जैन-महिलादर्श" नामक मासिक पत्रिका कई वर्षों से सुचारु रूपसे निकल रही है आपने महिलासमाजकी उन्नति करने के उद्देश्य से खास दुःखी विधवाओंके जीवन को शिक्षणसे पवित्र करने के लिये जैनबाला-विश्राम खोलकर उसमें अपना सर्वस्व लगाया है। व उसमें आप सतत परिश्रम पूर्वक योग दे रही हैं।

आज आपके ही सत्प्रयत्नका फल है, कि भारतके कौने २ में बालाविश्राम आराकी कीर्ति है।

बिदुषीरत्न ! आपकी विद्वत्तासे मुग्ध होकर आपको गतवर्ष कारंजामें, 'विदुषीरत्न' की उपाधि दी गई है। इतना ही नहीं किन्तु अयोध्या शिक्षणपरिषद्ने आपको 'साहित्य-सूरि' की उपाधि दी है। इस बातको कहते हुए आनन्दसे रोमांच होता है।

गुरूभक्ते ! आपको परमपूज्य शांतिसागरजी महाराज व

मुनिसंघके प्रति दृढ़श्रद्धा है अतएव आप प्रतिवर्ष भक्ति पूर्वक आचार्यसंघकी बन्दनाके लिये जाती रहती हैं तथा वहां जाकर पात्र दान आदिसे संघ सेवाका पुण्य संचय करती हैं।

परम हर्षका विषय है कि आपने जीवन कल्याणकी पवित्र आकांक्षासे श्री आचार्य परमेष्ठीके पाद मूलमें ब्रह्मचर्य दीक्षा ले ली है। यह आपकी गुरूभक्तिका आदर्श नमूना है।

आपकी धर्म-सेवा, समाज-सेवा, शिक्षण-प्रसार, महिला समाजोन्नतिकी चिन्ता आदि बातोंको देखकर हमें उन पूर्व महा-सतियोंका स्मरण हो आता है, कि जिन्होंने पारमार्थिक सेवाओंके लिये अपना जीवन समर्पण किया था।

आपसे महिला समाजको गौरव है। आपसे ही वह अपना मस्तक ऊंचा समझता है। इसमें कोई सन्देह नहीं हमको यह अच्छी तरह मालूम है कि आपकी सेवाओंके उपलक्षमें हम किसी तरह आपसे अऋणी नहीं हो सकती है।

यह चार शब्द हार्दिक श्रद्धासे आपके सम्मुख उपस्थित किये हैं, आशा है आप उसे अवश्य स्वीकार करेंगी।

ता०-७-४-१९३५ }

आपके गुणानुरक्त
दि० जैन महिला-समाज
सोलापुर

अशुद्धिपत्र

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
९	१६	काये	कार्य
१०	१	अस	अर्से
११	१७	सामयिक	सामायिक
२४	१९	इच्छाका	इच्छाको
३२	२२	षट्कर्मोका	षट्कर्मोंका
३४	२	बालविश्राम	बालाविश्राम
३८	१६	दर्याद्र	दयार्द्र
४१	१४	बालविश्राम	बालाविश्राम
४७	१४	पाठशालोंका	पाठशालाओंका
५२	८	चिकित्सिक	चिकित्सक
५२	११	अनुवममें	अनुभवमें
५३	१२	शुरु	शुरू
५६	६	प्रतिप्रतिष्ठा	प्रतिष्ठा
६२	१८	सहस्रकूट	सहस्रकूट
६६	७	सहारनमें	सहारनपुरमें
७२	१८	सौने	सोने
७३	८	अपने	आपने
७५	७	दावाओंका	दवाओंका

८०	१४	उद्रव	उपद्रव
८२	५	अन्त्येष्ठी	अन्त्येष्टि
८०	१	बालविश्राम	बालाविश्राम
१०६	५	दिनचर्यां	दिनचर्या
११६	६	साधवा	सधवा
११७	४	बांधीं	बांधी
१२२	२३	जत्रनमें	जीवनमें
१२३	८	दम्पत्य	दाम्पत्य
१२४	२१	दिया दिया है	दिया है
१५९	१२	नेत्तारं	नेतारं
१६०	८	आज्ञानान्धकार	अज्ञानान्धकार
१६६	२१	बहिर्नेको	बहिनोंको
१९२	१	छल्लिकाएँ	छुल्लिकाएँ
१९४	६	त्रात्रोंने	छात्रोंने
२०६	२०	के	ने
२१०	१४	अष्टमूलधारणके	अष्टमूलगुणधारणके
२३५	२१	की	को
२४४	४	प्रौणवस्था	प्रौढ़ावस्था
२५२	११	नेत्तारं	नेतारं
२६६	९	बर्षोंसे	वर्षों से
२८३	१५	सम्पुख	सम्मुख